संस्थापक संपादक
स्व. फतेहचंद

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.) द्वारा प्रकाशित

SHODH SAMALOCHAN

शोध-समालोचन (त्रैमासिक)

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REREREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वर्ष-12, अंक-3 | जुलाई-सितम्बर 2025 (भाग-3) | आईएसएसएन : 2348-5639

संपादक
• डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' एडवोकेट

कार्यकारी संपादक
• डॉ. वर्षा रानी

प्रबंध संपादक
• डॉ. मुकेश 'ऋषिवर्मा'

सह-संपादक
• डॉ. लता एस. पाटिल,
• डॉ. सुलक्षणा अहलावत

अक्षर संयोजन
• मो. सलीम

कानूनी सलाहाकार
• डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
• अजीत सिहाग, एडवोकेट

सलाहकार सम्पादक मंडल

• डॉ. निशीथ गौड, आगरा
• डॉ. ऊषा रानी, शिमला
• डॉ. गोविन्द सोनी, श्रीगंगानगर
• डॉ. सुषमा रानी, जीन्द
• डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट, श्रीनगर
• डॉ. दीपशिखा, पटियाला
• डॉ. गौतम कुमार साहा, दरभंगा
• श्री राकेश शंकर भारती, युक्रेन
• डॉ. के.के. मल्होत्रा, कैनेडा
• डॉ. आशीष कुमार दीपांकर, मेरठ
• डॉ. कामिनी कौशल, गाजियाबाद
• डॉ. रवि शंकर सिंह, आरा
• डॉ. संजय कुमार, रांची
• डॉ. संतोष कुमार भगत, रांची

1. 'शोध-समालोचन' का प्रबंधन और संपादन पूर्णतः अवैतनिक है।
2. 'शोध-समालोचन' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के अपने हैं। उनके प्रति वे स्वयं उत्तरदायी है।
3. पत्रिका से संबंधित प्रत्येक विवाद का न्याय क्षेत्र भिवानी न्यायालय ही मान्य होगा।
4. प्रकाशक/ स्वामी डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से मुद्रित करवाया।

'शोध समालोचन' की सदस्यता का शुल्क भुगतान राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है। बैंक का विवरण निम्नानुसार है–**बैंक :** PUNJAB NATIONAL BANK **Branch :** Yamuna Vihar, Delhi-110053 **IFSC :** PUNB0225600 **Account Holder :** SANIA PUBLICATION **Current Account No.** 2256002100405546 भुगतान की मूल रसीद, शोध-पत्र पत्रिका की ई-मेल पर भेजना अनिवार्य है।

नोट :- इस अंक की प्रिंट कॉपी खरीदने के लिए सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से सम्पर्क करें मो. 9818128487

मूल्य : 650/- रु. एक प्रिंट प्रति | वार्षिक 2500/- रु.

Editorial Board Member

1. **Dr. Priyanka Ruwali**
Dept. Of Sociology
D.S.B. Campus, Kumaun University, Nainital, Uttrakhand
2. **Ashutosh Singh**
Department of History,
Kurukshetra University, Kurukshetra, Haryana
3. **Mansi Sharma**
ICSSR- Doctoral Fellow,
Department of Political Science,
University of Lucknow, Lucknow, U.P.
4. **Kishor Kumar**
Department of History,
Kumaun University, Nainital, Uttarakhand.
5. **Vivek Kumar**
Research Scholar,
Department of Medivial and Modern History,
University of Lucknow, U.P.

विषय विशेषज्ञ सलाहकार समिति/ संपादकीय मंडल :

- **Dr. Mudita Popli**
Principal, Maa Karni B Ed College Nal, Bikaner
- **Dr. Tapasya Chauhan**
Assistant Professor,
Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (Utter Pradesh)
- **Dr. AMBILI V. S.**
Assistant Professor, Department of Hindi,
N.S.S. College, Pandalam, Pathanamthitta Distt. University of Kerala.
- **Dr. Om Prakash Mehrara**
Director, Shri Ramnarayan Dixit PG College, Srivijaynagar, Distt. Anupgarh (Rajasthan)
- **Dr. Anju Bala**
Assistant Professor Hindi,
Guru Nanak Girls College, Yamunanagar-135001
- **डॉ. श्रीमती अभिलाषा सैनी**
प्राचार्य, स्व. रामनाथ वर्मा शासकीय महाविद्यालय, मोपका, जिला-बलौदा बाजार, छत्तीसगढ़
- **डॉ. माया गोला,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)
- **डॉ. मोहित शर्मा**
श्री सर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय, निम्बार्क तीर्थ किशनगढ़, जिला अजमेर (राजस्थान)-305815
- **रजनी प्रिया**
राँगाटाँड़ रेलवे कॉलोनी, क्वार्टर सं. 502/136, तरुण संघ क्लब दुर्गा मंदिर, धनबाद, लैण्डमार्क - नियर श्रमिक चौक, पोस्ट जिला-धनबाद, झारखंड-826001

- **डॉ. आँचल कुमारी,** असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी
  राम चमेली चड्ढा विश्वास गर्ल्स कॉलेज गाजियाबाद चौधरी चरणसिंह युनिवर्सिटी, मेरठ (उ. प्र.)
- **डॉ. सरिता भवानी मालवीय**
  असिस्टेंट प्रोफेसर, फैकल्टी ऑफ लॉ.,
  आर.के.डी.एफ. विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)
- **डॉ. संदीप कुमार,** असि. प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, कन्हैयालाल मानिकलाल मुंशी हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. प्रमोद नाग**
  सहायक प्राध्यापक, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेजुएट स्टडीज, बेंगलुरु-560107
- **पल्लवी आर्य**
  असि. प्रोफेसर, भाषाविज्ञान विभाग, के.एम.आई. डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. अमित कुमार सिंह**
  डी. लिट्., असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, के.एम. आई., डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
- **कोकिला कुमारी**
  शोद्यार्थी, हिंदी विभाग, राँची वि.वि. राँची, झारखंड
- **गोस्वामी सोनीबाला**
  शोधार्थी - जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार
- **डॉ. करुणेन्द्र सिंह**, असिस्टेंट प्रोफेसर
  रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, गोरखपुर, बापू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पीपीगंज, गोरखपुर
- **डॉ. मीरा चौरसिया**
  चमनलाल महाविद्यालय लंढौरा, रुड़की, हरिद्वार, उत्तराखण्ड-247664
- **Dr. Vimal Parmar**
  Assistant Prof. Rajasthan P.G. Law College, Chirawa , Rajasthan
- **डॉ. तनु श्रीवास्तव**
  असिस्टेंट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र), स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिला विश्वविद्यालय, इन्दौर
- **डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी**
  उप-प्राध्यापक, केंद्रीय हिन्दी विभाग
  त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल
- **Dr. Archana Tiwari** , Assistant Professor , History and Indian Culture, Uni. Rajasthan, Jaipur
- **डॉ. जगदीप दुबे**
  सहायक प्राध्यापक वाणिज्य (म.प्र.), शासकीय आदर्श महाविद्यालय, डीनडोरी (म.प्र.)
- **डॉ. चन्द्रशेखर सिंह**
  समाज कार्य विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी
- **लेफ्टि. डॉ. सन्दीप भांभू**
  शारीरिक शिक्षा विभाग, टॉटिया वि.वि. श्रीगंगानगर

Request to Writers

Send quality original and unpublished works written on language, literature, society, science and culture. For publication, along with the translated works, also send the letters of consent received from the original authors. Compositions should be typed in Hindi Unicode Mangal font, English Time Roman. At the beginning of the article, a summary of the article is required which should be between 150 to 200 words maximum. The abstract must reflect the purpose of writing the article. Also write 5 to 7 'key words' (seed words) according to the article.

Write the article by dividing it appropriately into subheadings. Be sure to give a conclusion at the end of the article. The word limit should be 2000 to 2500 words. List of bibliographies at the end of the article APA Be in the format of. While sending the article, please write your name, address, phone number and title of the article in the e-mail. Submit a declaration to the effect that the article is original, unpublished, the author and not the editorial board will be responsible for any dispute related to it in future.

At the end of the composition, mention your complete postal address, mobile number and e-mail address.

- Editor

लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज, विज्ञान एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएं भेजें। प्राकशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ हिंदी यूनिकोड मंगल फान्ट अंग्रेजी टाइम रोमन में टंकित होनी चाहिए। लेख के प्रारंभ में लेख का सार अपेक्षित है जो अधिकतम 150 से 200 शब्दों के मध्य हो। सार में लेख लिखने का उद्देश्य अवश्य परिलक्षित होना चाहिए। लेख के अनुरूप 5 से 7 (की वर्ड) (बीज शब्द) भी लिखें। लेख को यथोचित उपशीर्षकों में विभाजित करके लिखें। लेख के अंत में निष्कर्ष अवश्य दें। शब्द सीमा 2000 से 2500 शब्दों की हो। आलेख के अंत में संदर्भ ग्रंथों की सूची ए.पी.ए. के प्रारूप में हो। लेख भेजते समय अपने नाम, पता, फोन नंबर एवं लेख का शीर्षक ई-मेल में अवश्य लिखें। इस आशय का एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत कर दें कि लेख मौलिक है, अप्रकाशित है, भविष्य में इससे संबंधित किसी भी विवाद के लिए लेखक उत्तरदायी होंगे संपादक मंडल नहीं।

रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता अंकित करें।

-संपादक

प्रकाशित पत्रिका प्राप्त करने के लिए संपर्क करे :

सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094

मोबाइल : 9818128487, 8383042929

ISSN : 2348-5639

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

[भाग III—खण्ड 4] भारत का राजपत्र : असाधारण 105

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

संपादकीय : भारतीय समाज और साहित्य : विचार, विमर्श और वैचारिक पुनर्पाठ का समय

वर्तमान समय भारतवर्ष के सामाजिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक जीवन में एक नए उथल-पुथल का काल है। यह कालखंड न केवल तकनीक और संचार के स्तर पर परिवर्तनशील है, बल्कि यह मूल्यबोध, दृष्टिकोण और विमर्शों के पुनर्परिभाषण का भी युग है। ऐसे समय में साहित्य और समाज के संबंधों पर गहन पुनर्विचार आवश्यक हो जाता है। साहित्य केवल कल्पना नहीं, वह अनुभव, संघर्ष, दृष्टि और सामाजिक चेतना का दस्तावेज है। आज जब भारत एक ओर अपनी परंपराओं और मूल्यों को बचाए रखने की जद्दोजहद में है, तो दूसरी ओर वह वैश्विक विमर्शों, नवपूंजीवाद, उपभोक्तावाद और डिजिटल संस्कृति से भी गहराई से प्रभावित हो रहा है। इसी द्वंद्व में साहित्य की प्रासंगिकता और उसकी भूमिका स्पष्ट होती है।

'शोध समालोचन' पत्रिका का यह अंक, जुलाई, अगस्त और सितम्बर की त्रैमासिक सीमा में, उन्हीं विमर्शों को रेखांकित करता है जो आज के साहित्यिक परिवेश, समकालीन रचनाशीलता और समाज के अंतर्विरोधों के बीच एक संवाद कायम करते हैं।

साहित्य और सामाजिक यथार्थ

साहित्य हमेशा समाज का दर्पण नहीं होता, वह कई बार समाज से आगे चलने वाला, चेतना देने वाला और क्रांति की बीज बोने वाला औज़ार भी होता है। आज जब सामाजिक यथार्थ बहुआयामी हो गया है—जाति, वर्ग, लैंगिकता, धर्म, पर्यावरण, शिक्षा, ग्रामीण-शहरी द्वंद्व, पलायन, बेरोजगारी और सांस्कृतिक अस्मिता जैसे मुद्दे मुखर हो रहे हैं तो समकालीन लेखन भी इन्हीं विषयों को अपनी रचनाओं में स्थान दे रहा है।

हमने देखा है कि दलित साहित्य, स्त्री विमर्श, आदिवासी साहित्य, श्रमिक साहित्य तथा यथार्थवादी लेखन के नए रूप सामने आए हैं। ये धारणाएँ किसी विचारधारा के आग्रह मात्र नहीं, बल्कि हमारे समय की सामाजिक सच्चाइयों की साहित्यिक अभिव्यक्तियाँ हैं। इस अंक में प्रकाशित कई लेख, कविताएँ, आलोचनात्मक लेख और साक्षात्कार इन्हीं विचारधारात्मक और यथार्थमूलक आधारों पर टिके हैं।

आलोचना और समालोचना की भूमिका

समकालीन साहित्यिक विमर्श में आलोचना केवल साहित्यिक सौंदर्य पर बात करने तक सीमित नहीं रह गई है। आलोचना अब सत्ता, संस्कृति, समाज और समय की भी परतें उधेड़ती है। आज के युग में जब कई बार साहित्य राजनीति का साधन बनता दिखाई देता है, तब आलोचना का काम केवल "कथ्य" और "शिल्प" तक सीमित नहीं रह जाता, बल्कि वह यह भी देखती है कि कौन बोल रहा है, किसके लिए बोल रहा है और किसे चुप करवा रहा है।

'शोध समालोचन' का यह अंक विचारधारा की बहुलता का स्वागत करता है और एक समावेशी आलोचना दृष्टिकोण की ओर संकेत करता है। इसमें प्रकाशित आलेखों में आधुनिकता, उत्तर-आधुनिकता, उत्तर-साम्राज्यवाद और भूमंडलीकरण जैसे विमर्शों की छाया भी स्पष्ट देखी जा सकती है।

नारी लेखन और स्त्री दृष्टि

नारी लेखन अब केवल स्त्री विषयक लेखन नहीं रह गया है, बल्कि यह एक वैकल्पिक दृष्टिकोण के रूप में उभरा है जो समाज की सत्ता संरचनाओं, पितृसत्ता, लिंगभेद और लैंगिक न्याय जैसे मुद्दों को केंद्र में रखता है। इस अंक में प्रकाशित

स्त्री लेखन केंद्रित लेखों में यह देखा जा सकता है कि स्त्री अब केवल विषय नहीं, स्वयं लेखन की दिशा बदलने वाली दृष्टि बन चुकी है।

यह नारी दृष्टि केवल कविताओं में भावुकता या पीड़ा के रूप में नहीं आती, बल्कि वह राजनीतिक, सांस्कृतिक और वैचारिक हस्तक्षेप भी करती है। विशेष रूप से ग्रामीण पृष्ठभूमि की स्त्रियों के लेखन में जो आत्मकथात्मक स्वर उभरते हैं, वे समकालीन हिंदी साहित्य को नई पहचान दे रहे हैं।

क्षेत्रीयता और भाषाई विविधता

भारतीय साहित्य की सबसे बड़ी ताकत उसकी भाषाई विविधता है। हिंदी के साथ-साथ भोजपुरी, हरियाणवी, मराठी, पंजाबी, बांग्ला, मैथिली, राजस्थानी, अवधी, ब्रज जैसी भाषाओं में भी विपुल साहित्य रचा जा रहा है। क्षेत्रीय साहित्य समाज के वास्तविक अनुभवों को, उनकी जड़ों और संघर्षों को जिस आत्मीयता से सामने लाता है, वह मुख्यधारा की साहित्यिक दुनिया को एक नया नजरिया देता है।

इस अंक में हरियाणवी लोक साहित्य, राजस्थानी जनकथाओं और भोजपुरी कविता पर केंद्रित लेख इस दृष्टिकोण को सशक्त बनाते हैं।

नई पीढ़ी की लेखनी

तकनीक और डिजिटल क्रांति के इस युग में साहित्य का स्वरूप भी बदल रहा है। फेसबुक, ब्लॉग, यूट्यूब, पोडकास्ट और ई-पत्रिकाओं के माध्यम से एक नई रचनाकार पीढ़ी साहित्य में प्रवेश कर रही है। ये लेखक पारंपरिक संस्थाओं से बाहर रहकर भी एक बड़ा पाठक वर्ग तैयार कर रहे हैं।

'शोध समालोचन' इस बदलाव को स्वीकारते हुए नई पीढ़ी की रचनाशीलता को भी उचित मंच प्रदान कर रहा है। इस अंक में प्रकाशित युवा लेखकों की कविताएँ और समीक्षाएं इस बात का प्रमाण हैं कि हिंदी साहित्य का भविष्य जागरूक, प्रखर और सजग हाथों में है।

साहित्य और समकालीन संकट

यह युग राजनीतिक उथल-पुथल, सांस्कृतिक विखंडन, जलवायु संकट, तकनीकी गुलामी और मानसिक अवसादों का युग है। ऐसे समय में साहित्य की भूमिका केवल सौंदर्यबोध तक सीमित नहीं रह सकती। साहित्य को इन संकटों की पहचान करनी होगी और उनके समाधान की दिशा में नैतिक एवं वैचारिक हस्तक्षेप भी करना होगा।

इस अंक में जलवायु परिवर्तन, युद्ध, नैतिक पतन, सांस्कृतिक संकट और मनोवैज्ञानिक पीड़ा पर आधारित लेख साहित्य को एक संवेदनशील सामाजिक अभ्यास के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

निष्कर्ष : साहित्य संवाद का माध्यम

हम यह मानते हैं कि साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि संवाद, साक्षात्कार और आत्ममंथन भी है। 'शोध समालोचन' का यह अंक इन्हीं उद्देश्यों को लेकर आगे बढ़ा है। हम साहित्य को न तो किसी विचारधारा के बंधन में बांधना चाहते हैं, और न ही उसे केवल सजावटी प्रयोगों तक सीमित करना चाहते हैं। हम उसे संवाद, विचार और परिवर्तन की दिशा में देखना चाहते हैं।

आशा है कि यह अंक हमारे पाठकों को चिंतन की दिशा में प्रेरित करेगा और साहित्य-संवेदना के नए आयामों की खोज में सहायक सिद्ध होगा। हम सभी लेखकों, समीक्षकों, शोधार्थियों और सुधि पाठकों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने अपने समय, श्रम और दृष्टिकोण से इस अंक को सार्थकता प्रदान की।

आपके सुझाव और आलोचनाएँ ही हमारी दिशा और दृष्टि को प्रखर बनाती हैं। अतः हम आपके सुसंवादी सहयोग की सतत अपेक्षा रखते हैं।

संपादक

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

विषयानुक्रमणिका

संपादकीय : भारतीय समाज और साहित्य : विचार, विमर्श और वैचारिक पुनर्पाठ का समय 6

Microfinance and Women Empowerment: A Study on Gendered Economic Marginality in India 11
Ritu

अस्थिर बांग्लादेश और शेख हसीना के पलायन की वर्षगांठ: सपने और हकीकत 22
डॉ. शक्ति जायसवाल

Fuzzy Game Theory: Optimum Decision Making in Uncertain Environments 26
Dr. Vinod Kumar Sharma
Archana Chalana

INDIGENOUS ECONOMIC PRACTICE TO ACHIEVE SUSTAINABLE DEVELOPMENT IN INDIA 33
Dr. Utkal Kushawah
Dr. Anshula Kushawah

भक्ति रस तरंगिनी में रूपक तत्व 40
डॉ. अनिरुद्ध वायन

The Role of MGNREGA in Enhancing Livelihood Security Among Tribal Communities: A Case Study of the Oraon Tribe in Jashpur District, Chhattisgarh 45
Dr. K.K. Sharma

'जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ नई' में निहित मानवीय एवं सामाजिक सरोकार 48
तहरीम फातमा

नई सदी, पुरानी बेड़ियाँ : शिक्षित समाज में दलितों की स्थिति और रजत रानी मीनू की दृष्टि 54
रेमीसा सी.यु.

संत रज्जब की काव्य-चेतना 58
डॉ. संजय कुमार यादव

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'रश्मिरथी' खंडकाव्य में वर्णित समस्याओं की विवेचना 64
डॉ. सुषमा माधवराव नरांजे

सरोद सम्राट उस्ताद अमजद अली खान का भारतीय शास्त्रीय संगीत को योगदान 68
उमेश कुमार

कर्म और श्रम ही विकास का मूल : एक दार्शनिक, सामाजिक-आर्थिक और व्यक्तिगत विश्लेषण 72
मोहम्मद इबादुर रहमान खान
डॉ. अरुण पाण्डेय

देश की प्रगति में बाधक दलगत राजनीति 77
डॉ. ज्योतिमा सिंह
दीपिका शुक्ला

हिंदी साहित्य में यथार्थ का सौंदर्यबोध 80
डॉ. अशोक कुमार
संदीप कुमार
रामायण में उल्लेखित मूल्य शिक्षा के पदों का विश्लेषणत्मक अध्ययन 84
शकुंतला जोशी
नासिरा शर्मा और बदलते समाज में नारी की छवि 91
रचना चौधरी
डॉ. तिलिग कमलावती देवी
डॉ. मो. मजीद मियॉं
Indian Knowledge System vs. French Knowledge System: A Comparative Reflection 94
Ravi Shankar Kumar
प्रेमचंद का कहानी संग्रह सोज़े वतन, आत्मकथा, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य व निबंधों में राष्ट्रीयता का बोध 100
सागर सैन
प्रेमचंद की साहित्यिक छवि : 'प्रेमचंद घर में' और 'कलम का सिपाही' के आलोक में एक साहित्यिक अन्वेषण 104
रनिका शेखावत
चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन 108
सुरेश कुमार मौर्य
INDIGENOUS KNOWLEDGE SYSTEMS AND MODERN PEDAGOGY INTEGRATION 112
Dr. Robina
जगन्नाथपण्डितस्य वैदुष्यम् 121
Dr. P. SRIVALLI
TRANSFORMING BUSINESS EDUCATION IN INDIA: A 21st CENTURY PERSPECTIVE 130
Dr. Atul Kumar
नारी विमर्श : विचार, चुनौती और प्रगति 135
Dr. Anupama
किसान जीवन पर केंद्रित प्रतिबंधित भोजपुरी लोकगीत एवं कविताओं का स्वतंत्रता संग्राम पर प्रभाव 141
कौसर साबिदा सुलताना
डॉ. आरती लोकेश की कहानियों में सामाजिक चेतना 148
डॉ. यशवीर दहिया
श्रीमती प्रेमलता व्यास
किन्नर समाज का संघर्ष : एक विश्लेषण 153
आशु प्रज्ञा
फिल्म : मनोरंजन एवं शिक्षा का सशक्त माध्यम (हिन्दी फिल्मों के संदर्भ में) 156
सुनिधि कुमारी
अभिभावकों की भागीदारी और दृष्टिकोण : समावेशी शिक्षा की दिशा में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 159
कमलेश माथुर

वर्तमान परिदृश्य में जनजातीय अधिकार, नीतियाँ और सशक्तिकरण : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 164
डॉ. साधना यादव
A Study on Recruitment and Selection Process of ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd. 168
Isha Katiyare
नाटक के सैद्धांतिक प्रतिमान : एक विश्लेषण 175
तहरीम फातमा
भारतीय पुनर्जागरण में आर्य समाज की भूमिका 179
शैलेश कुमार
डॉ. दिलीप कुमार
WOMEN EMPOWERMENT IN INDIA: A PRESENT SCENARIO 184
Abhijay Saini
Aditi Saini
भाषा अधिगम में मौखिक संचार का महत्व 188
डॉ. अंजू पांचाल
नई शिक्षा नीति - 2020 के आर्थिक प्रभाव 192
अनुपम कुमार यादव
भारतीय समाज में महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य का समाजशास्त्री विश्लेषण 197
डॉ. अनीश कुमार
भारतीय ज्ञान-विज्ञान की परम्परा का समाजशास्त्रीय विश्लेषण 202
डॉ. अजय कुमार सोनकर

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Microfinance and Women Empowerment: A Study on Gendered Economic Marginality in India

Ritu
Research Scholar, Commerce Department, Singhania University,
Jhunjhunu, Rajasthan.

Abstract

In India, the economic participation of women continues to be constrained by a multitude of structural, social, and cultural factors. Women, particularly in rural and marginalized communities, often face restricted access to education, property ownership, skill development, and financial services. This marginalization results in their economic exclusion and limits their ability to contribute meaningfully to household income or make autonomous financial decisions. Within this context, microfinance has emerged as a developmental tool with the potential to address these gendered inequities by providing women with access to small loans, savings mechanisms, and financial literacy training without the requirement of traditional collateral.

This paper critically examines the role of microfinance in empowering women and addressing gendered economic marginality in India. It investigates the transformative effects of microfinance programs, primarily focusing on how these interventions enable women to access financial resources, engage in income-generating activities, and assert their rights within familial and community structures. Drawing from academic literature, policy reports, and grassroots-level case studies, this study highlights the multi-dimensional impact of microfinance on women's lives — encompassing not just economic independence but also improvements in self-esteem, social mobility, household decision-making, and participation in community governance. Special emphasis is given to successful models like Kudumbashree in Kerala and SEWA in Gujarat, which have demonstrated the capacity of microfinance to promote sustainable livelihoods and foster solidarity among women. These models not only offer financial services but also emphasize capacity building, leadership development, and political participation, thereby reinforcing a more holistic understanding of empowerment.

The paper argues that while microfinance has the potential to be a powerful tool for gender transformation, its success hinges on an integrated approach that combines financial inclusion with social empowerment and institutional accountability. True empowerment must go beyond the mere disbursement of credit and instead focus on enhancing women's capabilities to make strategic life choices and challenge existing power hierarchies. The study recommends policy reforms that encourage transparency among MFIs, expansion of financial literacy programs, integration of microfinance with digital platforms, and targeted support for women-led enterprises.

In conclusion, microfinance should be viewed not as an end in itself but as a means to a broader

vision of inclusive and equitable development. It can serve as a bridge between financial access and socio-economic empowerment for women, particularly when embedded within a framework that recognizes and addresses the specific barriers women face due to their gender. By aligning microfinance with the larger goals of gender justice and sustainable development, India can move closer to achieving true economic democracy for all its citizens, irrespective of gender or socio-economic background.

Keywords: Microfinance**,** Women Empowerment, Gendered Economic Marginality, Financial Inclusion, Self-Help Groups (SHGs), Rural Women, Gender Justice, Inclusive Development, Economic Participation, Women Entrepreneurs.

1. Introduction

India's vision of inclusive and sustainable development remains unfulfilled without the active and equitable participation of women in the economic sphere. Despite notable progress in several socio-economic indicators over the past decades, deep-rooted gender disparities continue to persist in income generation, employment opportunities, asset ownership, access to credit, and decision-making power within households and communities. These disparities are more pronounced in rural and marginalized regions, where women face compounded barriers due to poverty, illiteracy, cultural norms, and lack of institutional support. Consequently, a significant portion of the female population remains excluded from formal financial systems and entrepreneurial ecosystems.

Against this backdrop, microfinance has emerged as a powerful instrument for addressing gendered economic marginality in India. Unlike traditional banking services that often demand collateral and formal income proof, microfinance provides small loans and savings mechanisms to low-income individuals, especially women, without stringent requirements. The underlying assumption is that access to financial resources can catalyze self-employment, increase income, and improve women's bargaining power both inside and outside the household. Microfinance does not merely serve as a credit tool but is often viewed as a means to achieve broader developmental goals such as poverty alleviation, women's empowerment, and social inclusion.

Microfinance institutions (MFIs), Self-Help Groups (SHGs), cooperative banks, and non-governmental organizations (NGOs) have played a pivotal role in driving the microfinance movement in India. SHGs in particular have been instrumental in mobilizing women at the grassroots level, encouraging savings habits, and enabling collective borrowing. These women-centric financial collectives not only enhance access to credit but also foster mutual support, capacity building, and leadership development among their members.

This research paper aims to explore the extent to which microfinance initiatives contribute to women's empowerment in India, specifically through the lens of gendered economic marginality. It seeks to understand how financial access influences women's lives in terms of economic independence, self-confidence, social mobility, and participation in community development. The study further investigates the structural limitations and potential pitfalls of the current microfinance ecosystem, such as over-indebtedness, male appropriation of loans, and lack of adequate training and market access. By critically analyzing the promises and shortcomings of microfinance from a gendered perspective, this paper intends to offer insights into how policy, institutional practices, and grassroots movements can converge to promote a more inclusive, equitable, and empowering model of financial development

for women in India.

2. Conceptual Framework

Understanding the interconnections between microfinance and women's empowerment requires a clear conceptual framework. This section defines and elaborates on three core concepts central to this study: microfinance, women empowerment, and gendered economic marginality. Together, these concepts help frame the dynamics through which financial interventions influence gender roles, economic agency, and social transformation in India.

2.1 Microfinance

Microfinance refers to the provision of a range of financial services—including microcredit, savings, insurance, and remittances—to individuals or groups who traditionally lack access to formal banking institutions. In India, microfinance is primarily targeted toward low-income populations, especially women, with the objective of enabling self-employment, enhancing household income, and reducing poverty. Microfinance institutions (MFIs), Self-Help Groups (SHGs), and cooperatives are the principal vehicles through which these services are delivered. Unlike conventional banks, microfinance providers do not typically require collateral, making credit more accessible to women who often lack property ownership or steady income. The rationale behind microfinance is grounded in the belief that financial access can unlock economic potential, promote entrepreneurship, and improve livelihoods. When women receive microloans, they are more likely to invest in income-generating activities such as tailoring, food processing, livestock rearing, and small-scale trade, thereby contributing to both family welfare and community development. However, the effectiveness of microfinance is contingent upon broader social, institutional, and market conditions.

2.2 Women Empowerment:

Women empowerment is a multidimensional process through which women acquire greater control over their lives, resources, and environments. It includes economic, social, cultural, political, legal, and psychological dimensions. Empowerment is not merely about participation but about gaining the capacity to make strategic life choices that were previously denied. In the context of this research, the focus is on **economic empowerment**, which involves women's ability to earn income, manage resources, access credit and markets, and make decisions about economic matters both within the household and in public spheres. Empowered women are better positioned to challenge traditional gender roles, influence community decisions, and break the cycle of poverty. Thus, economic empowerment is often seen as a gateway to broader forms of social empowerment and gender equity.

2.3 Gendered Economic Marginality:

Gendered economic marginality refers to the entrenched structural and cultural barriers that prevent women from fully participating in economic life. Rooted in patriarchal norms, gendered marginalization manifests in limited access to education, land, capital, markets, and formal employment. In India, this marginality is exacerbated by caste, class, and regional disparities. Women are often confined to unpaid labor, informal work, or low-paying jobs with little security or upward mobility. This systemic exclusion restricts women's economic choices and reinforces dependence on male family members. Addressing gendered economic marginality, therefore, requires not just financial access, but

transformative interventions that challenge structural inequalities, build capacities, and promote gender-sensitive development.

3. Historical Context of Microfinance in India

The origins and evolution of microfinance in India are closely tied to the nation's broader objectives of rural development, poverty alleviation, and financial inclusion. While informal forms of community-based lending such as chit funds and rotating savings groups have long existed in Indian society, institutionalized microfinance began to take shape in the early 1980s, gaining momentum in the following decades with focused interventions by both government and non-governmental actors.

One of the most significant milestones in the Indian microfinance landscape was the launch of the **Self-Help Group (SHG)-Bank Linkage Programme** by the **National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD)** in **1992**. This initiative aimed to bridge the gap between formal banking institutions and marginalized rural populations, especially women, by organizing them into small groups that could collectively save money and access credit. The SHG model soon gained traction across states due to its simplicity, sustainability, and focus on community-based empowerment. By empowering women to manage savings and loans within their communities, the program became a cornerstone of rural financial inclusion.

In the year **2000**, the Indian government further institutionalized microfinance by creating the **Microfinance Development and Equity Fund (MDEF)**. This fund was established to support capacity building among microfinance institutions (MFIs) and promote innovation in service delivery. With growing donor support and policy backing, the microfinance sector began to diversify, including the emergence of Non-Banking Financial Companies-Microfinance Institutions (NBFC-MFIs), which brought greater outreach and professional management into the ecosystem. The rapid commercialization of microfinance also brought challenges. A turning point came in **2010**, when several instances of over-indebtedness, coercive loan recovery practices, and borrower suicides were reported, particularly in the state of Andhra Pradesh. These events raised concerns about the ethical practices of some MFIs and the absence of adequate regulation. In response, the **Malegam Committee Report** was released in **2011**, recommending a regulatory framework for the sector under the Reserve Bank of India (RBI). It emphasized transparency, responsible lending, interest rate caps, and borrower protection measures.

To further advance the cause of financial inclusion, the government launched the **Micro Units Development and Refinance Agency (MUDRA)** in **2013** under the Pradhan Mantri MUDRA Yojana (PMMY). MUDRA provides refinancing support to banks and MFIs for lending to micro-enterprises, especially those led by women and other vulnerable groups.

4. Role of Microfinance in Women Empowerment

Microfinance plays a transformative role in promoting women's empowerment, particularly by enhancing their economic participation and agency in traditionally male-dominated societies. By offering financial services tailored to the needs of low-income women, microfinance contributes to their personal, familial, and social development. The following subsections illustrate key dimensions of this impact:

4.1 Access to Credit and Financial Services:

One of the fundamental contributions of microfinance is its ability to provide women with access to formal financial services without the need for collateral or credit history—barriers that traditionally excluded them from mainstream banking. Women can secure small loans through Self-Help Groups (SHGs), microfinance institutions (MFIs), or cooperative banks to start or expand income-generating activities, invest in agriculture, or meet urgent household needs. This access reduces dependence on informal moneylenders who often impose exploitative interest rates. Moreover, by managing their finances independently, women gain a sense of financial control and autonomy, which is critical for empowerment.

4.2 Income Generation and Entrepreneurship:

Microfinance encourages women to become economically active by supporting their entry into micro-enterprises such as tailoring, livestock rearing, food processing, vegetable vending, and handicrafts. These small-scale businesses not only contribute to household income but also improve women's social standing within the family. As women begin to contribute financially, they often gain a greater voice in household decision-making, budgeting, and investment planning. The income generated through these ventures also enables women to save, reinvest in their businesses, and support their children's education and health.

4.3 Group Solidarity and Social Capital:

A unique feature of microfinance in India, particularly the SHG model, is its emphasis on group formation and collective action. SHGs bring together 10–20 women who meet regularly to save and borrow collectively. This group dynamic fosters mutual trust, emotional support, and shared responsibility. It creates a platform for women to develop leadership, negotiation, and problem-solving skills. Over time, this collective identity enhances women's confidence, social visibility, and capacity to advocate for their rights, contributing to broader social empowerment.

4.4 Health and Education Outcomes:

The benefits of microfinance extend beyond income generation and influence key aspects of family welfare. Women who gain economic stability often prioritize health and education expenditures. Increased income allows families to access better nutrition, healthcare services, and school facilities for their children. Empirical studies have shown that women are more likely than men to invest their earnings in long-term household well-being, thereby producing intergenerational benefits and contributing to sustainable development.

5. Case Studies from India

To better understand the practical impact of microfinance on women's empowerment in India, it is instructive to examine successful models and grassroots initiatives. The following case studies—**Kudumbashree** in Kerala, **SEWA Bank** in Gujarat, and **Lijjat Papad** in Mumbai—illustrate how microfinance has facilitated economic participation, collective action, and socio-political empowerment among women across different regions of the country.

5.1 Kudumbashree (Kerala):

Launched in 1998 by the Government of Kerala in partnership with NABARD and the United

Nations Development Programme (UNDP), **Kudumbashree** is one of India's most celebrated women-centric poverty eradication and empowerment programs. It is built on a three-tiered community structure of Neighborhood Groups (NHGs), Area Development Societies (ADS), and Community Development Societies (CDS), all led by women. Kudumbashree integrates microfinance with social development, livelihood promotion, and gender justice initiatives. Through its network of over 4.3 million women organized into more than 300,000 SHGs, Kudumbashree has enabled women to access small loans, start micro-enterprises, and participate in local governance. Its impact extends beyond financial inclusion to enhancing leadership skills, improving health awareness, and promoting education among women in both rural and urban Kerala. Kudumbashree exemplifies how microfinance, when combined with state support and community mobilization, can create a sustainable model of empowerment.

5.2 SEWA Bank (Gujarat):

The **Self-Employed Women's Association (SEWA)**, founded by Ela Bhatt in 1972 in Ahmedabad, has played a pioneering role in organizing women workers in the informal sector. In 1974, SEWA established its own cooperative bank—**SEWA Bank**—with the objective of offering financial services designed specifically for self-employed women, who are often excluded from formal credit systems. SEWA Bank offers savings accounts, microcredit, health and life insurance, and financial literacy training. By empowering women to manage their own finances, SEWA has helped tens of thousands build financial security, escape debt traps, and develop viable livelihoods. SEWA's model emphasizes not only financial independence but also collective bargaining, social security, and dignity for informal workers.

5.3 Lijjat Papad (Mumbai):

Lijjat Papad is a classic example of cooperative entrepreneurship led by women. Started in **1959** by seven women in Mumbai with a loan of just ¹ 80, the initiative has grown into a nationwide cooperative with over **45,000 members**. Each member is both a worker and an owner of the organization. Lijjat's business model is based on mutual trust, self-management, and profit-sharing. Women involved in papad making, packaging, and distribution earn regular income and gain collective ownership in the enterprise. The success of Lijjat Papad underscores how microfinance-supported ventures can foster large-scale, sustainable women-led enterprises that blend economic empowerment with social cohesion.

6. Challenges and Criticism

While microfinance has undoubtedly played a pivotal role in improving women's access to financial services and promoting economic participation, it is not without significant limitations and challenges. Several structural, operational, and socio-cultural issues continue to hinder the transformative potential of microfinance, particularly in the context of women's empowerment. This section outlines the key criticisms and obstacles that limit the effectiveness of microfinance initiatives in India.

6.1 Over-Indebtedness:

One of the most pressing concerns surrounding the rapid expansion of microfinance in India is **over-indebtedness**. With multiple microfinance institutions (MFIs) operating in the same geographical regions and often targeting the same clients, many women have been encouraged or pressured to

take multiple loans without a clear understanding of repayment obligations. This is compounded by the lack of adequate financial literacy among rural borrowers, who may not fully comprehend the interest rates, repayment schedules, or consequences of default. In several high-profile cases—such as the Andhra Pradesh microfinance crisis in 2010—over-indebtedness has led to borrower distress, social stigma, and even suicides. Without safeguards in place, the availability of easy credit can transform into a burden rather than a tool for empowerment.

6.2 Male Appropriation of Loans:

Another significant issue undermining the empowerment narrative is the **male appropriation of microfinance loans**. While loans are often granted in women's names, the actual control and use of funds may remain with male members of the household. In patriarchal family structures, women are frequently excluded from key financial decisions, reducing them to mere intermediaries in the loan process. This undermines the purpose of microfinance as a vehicle for women's economic autonomy. Moreover, when repayment obligations are not met, the financial and social consequences are disproportionately borne by the women, leading to further disempowerment.

6.3 Lack of Capacity Building:

Microfinance alone cannot ensure sustainable economic empowerment. **Credit without capacity building** may lead to inefficient use of funds and failed enterprises. Many women borrowers lack basic business knowledge, access to markets, digital literacy, and managerial skills necessary to scale their ventures. Without comprehensive support systems, including entrepreneurship training and mentorship, microfinance often results in income stagnation or business failure. This points to the need for integrated programs that combine financial services with skill development and market linkage strategies.

6.4 Regulatory and Institutional Issues:

Despite being regulated by the **Reserve Bank of India (RBI)**, the microfinance sector continues to face **institutional challenges**. There have been allegations against some MFIs for charging high interest rates, enforcing aggressive recovery practices, and operating without adequate transparency. These practices erode public trust and tarnish the credibility of the sector. Additionally, the regulatory framework often struggles to strike a balance between protecting borrowers and ensuring institutional sustainability.

7. Government and Policy Initiatives

The Indian government has launched several flagship schemes and policy initiatives to support financial inclusion and promote women's economic empowerment, many of which directly or indirectly align with microfinance objectives. These initiatives aim to create an enabling ecosystem where access to credit, savings, insurance, and entrepreneurship support becomes more inclusive and gender-sensitive.

7.1 National Rural Livelihood Mission (NRLM):

Launched in 2011, the **National Rural Livelihood Mission (NRLM)**—now known as **Deendayal Antyodaya Yojana-NRLM (DAY-NRLM)**—is a major government initiative aimed at alleviating rural poverty by promoting self-employment and institutional support through **Self-Help Groups (SHGs)** and their federations. The mission focuses particularly on empowering rural women by

organizing them into SHGs, providing access to credit, and building their capacities for livelihood enhancement. NRLM emphasizes community ownership, participatory governance, and convergence with other development programs. By integrating microfinance with skill development, market access, and social mobilization, NRLM plays a critical role in making financial services more accessible and meaningful for marginalized women.

7.2 MUDRA Yojana:

The **Pradhan Mantri MUDRA Yojana (PMMY)**, launched in **2015**, is another significant intervention designed to promote micro-enterprises by offering loans under three categories—**Shishu** (up to ₹ 50,000), **Kishore** (₹ 50,000–₹ 5 lakh), and **Tarun** (₹ 5 lakh–₹ 10 lakh). These loans are offered through banks, MFIs, and non-banking financial companies (NBFCs), with a strong emphasis on women, SC/STs, and other marginalized groups. MUDRA loans are intended to support income-generating activities, especially in sectors such as agriculture, trade, handicrafts, and small-scale manufacturing. A large percentage of MUDRA loan beneficiaries have been women, indicating the scheme's contribution to expanding microfinance-led entrepreneurship.

7.3 Jan Dhan Yojana:

The **Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY)**, launched in 2014, is a comprehensive financial inclusion scheme aimed at providing universal access to banking services. It facilitates the opening of zero-balance bank accounts, which are particularly useful for rural women who have historically remained outside the formal banking network. These accounts serve as a foundation for saving, availing microcredit, and receiving **Direct Benefit Transfers (DBTs)**, thereby enhancing transparency and economic autonomy.

8. Theoretical Perspectives

To fully understand the transformative potential of microfinance in the context of women's empowerment, it is important to ground the discussion in relevant theoretical frameworks. Feminist economics, Amartya Sen's Capability Approach, and Naila Kabeer's Empowerment Framework provide valuable lenses through which to examine the gendered dynamics of economic development and the role of microfinance.

8.1 Feminist Economics:

Feminist economics critiques traditional economic theories for their neglect of unpaid labor, gendered roles, and the socio-cultural context within which economic activities occur. It emphasizes that the economy is not gender-neutral and that women's contributions, particularly in care work and household management, are often invisible in mainstream economic analyses. From this perspective, microfinance holds the potential to disrupt patriarchal economic structures by recognizing and investing in women's productive capacities. When designed with a **gender-sensitive approach**, microfinance can challenge systemic inequalities by giving women access to capital, encouraging entrepreneurship, and fostering collective agency. However, feminist economists also caution that empowerment cannot be reduced to credit access alone; it must involve structural transformation and redistribution of power within households and communities.

8.2 Capability Approach (Amartya Sen):

Amartya Sen's **Capability Approach** shifts the focus of development from income-based metrics

to the expansion of individual freedoms and choices. According to Sen, true development occurs when people gain the capabilities to lead lives they have reason to value. In this context, microfinance can be seen as a tool that enhances women's capabilities by providing financial resources, increasing mobility, and enabling access to education, healthcare, and livelihoods. It allows women to make choices about how to use their time and resources, thus contributing to both economic and personal empowerment.

8.3 Empowerment Framework (Naila Kabeer):

Naila Kabeer's **Empowerment Framework** conceptualizes empowerment as a process involving three interrelated dimensions: **resources**, **agency**, and **achievements**. Microfinance aligns with this model by providing **resources** (credit, savings), enhancing **agency** (decision-making power, negotiation skills), and leading to tangible **achievements** (higher income, improved social status). Kabeer emphasizes that empowerment is not just about outcomes but also about the processes that enable women to make meaningful choices. Her framework underscores the importance of context and social structures in determining the effectiveness of microfinance programs.

9. Recommendations

While microfinance has demonstrated significant potential in promoting women's empowerment and reducing gendered economic marginality, its long-term impact depends on how it is implemented, regulated, and supported. The following recommendations aim to enhance the effectiveness and equity of microfinance interventions in India:

9.1 Integrate Capacity Building:

Credit access alone is insufficient to empower women. To ensure meaningful outcomes, microfinance programs must integrate **capacity-building initiatives**, including financial literacy, digital skills, business management, and marketing training. These skills empower women to make informed decisions, manage their finances effectively, and run sustainable enterprises.

9.2 Gender-Sensitive Monitoring and Evaluation:

Monitoring frameworks must go beyond financial metrics and include **gender-sensitive indicators** such as changes in decision-making power, mobility, social status, and self-confidence. Regular impact assessments should involve women's voices and experiences to accurately capture the extent of empowerment achieved through microfinance.

9.3 Regulate Interest Rates and Lending Practices:

There is a growing concern over **exploitative interest rates** and coercive loan recovery practices by some microfinance institutions. Regulatory bodies like the Reserve Bank of India must ensure transparent, fair, and ethical lending procedures. Uniform guidelines and strong grievance redressal mechanisms are essential to protect borrowers.

9.4 Encourage Market Linkages:

Access to finance must be complemented by access to **markets**. Government and civil society organizations should facilitate market linkages through cooperatives, e-commerce platforms, exhibitions, and government procurement schemes. Such support enhances women's ability to scale their businesses and earn sustainable incomes.

9.5 Support Collective Models:

Collective approaches such as **Self-Help Group (SHG) federations and women-led cooperatives** have shown success in promoting mutual support and shared accountability. These models should be encouraged as they enhance bargaining power, reduce individual risk, and foster democratic decision-making among women.

10. Conclusion

Microfinance has emerged as a critical instrument in the broader quest for gender equity and inclusive economic development in India. By extending small loans, encouraging savings, and fostering financial independence, microfinance has provided millions of women—especially in rural and marginalized communities—with the tools to initiate or strengthen economic activities. It has opened doors to entrepreneurship, increased participation in household decision-making, and built social solidarity through collective models like Self-Help Groups (SHGs) and women-led cooperatives.

However, while the **transformative potential of microfinance is evident**, it is not a guaranteed outcome. Empowerment is a complex and multidimensional process that goes beyond financial transactions. True empowerment involves enhancing women's **agency, voice, and autonomy**, along with building their capabilities to access markets, own assets, and influence both private and public spheres. The provision of credit alone cannot dismantle the deeply rooted **patriarchal structures and socio-cultural norms** that perpetuate women's economic marginalization.

There remain significant challenges that need to be addressed. Over-indebtedness, male appropriation of loans, lack of business training, and exploitative lending practices threaten to undermine the empowering goals of microfinance. Many women find themselves caught in a cycle of debt with limited economic returns. Additionally, institutional gaps and weak regulatory oversight contribute to systemic inefficiencies and even exploitation.

To unlock the **full potential of microfinance as a vehicle for women's empowerment**, it is essential to adopt a **holistic, gender-sensitive, and rights-based approach**. Capacity-building initiatives, financial literacy, digital inclusion, market access, and gender-responsive governance mechanisms must become integral parts of all microfinance programs. Moreover, the success of microfinance must be measured not only in terms of repayment rates and outreach but also by its impact on **gendered power relations, well-being, and social justice**.

Future policies must align financial inclusion with **economic justice and gender equity**. The goal should not be merely to integrate women into financial systems, but to transform those systems to be more inclusive, participatory, and equitable. If supported by structural reforms and inclusive governance, microfinance can serve as a catalyst for a more just and gender-equitable India.

References

- M.Goetz, & A.Sen, R.Gupta, (1996). *Who takes the credit? Gender, power, and control over loan use in rural credit programs in Bangladesh. World Development*, 24(1), 45–63.
- N.Kabeer, (1999). *Resources, agency, achievements: Reflections on the measurement of women's empowerment* (Discussion Paper No. 108). United Nations Research Institute for Social Development

(UNRISD).

- Kudumbashree Mission. (n.d.). *Mission reports and program evaluations*. Government of Kerala. Retrieved from https://www.kudumbashree.org
- L.Mayoux, (2000). *Microfinance and the empowerment of women: A review of the key issues*. Geneva: International Labour Organization (ILO).
- Microfinance Institutions Network (MFIN). (2023). *Microfinance India: State of the Sector Report*. Retrieved from https://mfinindia.org
- Ministry of Rural Development. (2023). *Annual report 2022–23*. Government of India. Retrieved from https://rural.nic.in
- National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD). (2020). *SHG-Bank Linkage Programme Reports*. Mumbai: NABARD. Retrieved from https://www.nabard.org
- SEWA (Self Employed Women's Association). (n.d.). *Annual reports and impact assessments*. Ahmedabad, Gujarat. Retrieved from https://www.sewa.org
- A.Sen, (1999). *Development as freedom*. Oxford University Press.
- F.Sinha, (2006). *Microfinance self-help groups in India: Living up to their promise?* Rugby, UK: ITDG Publishing.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

अस्थिर बांग्लादेश और शेख हसीना के पलायन की वर्षगांठः सपने और हकीकत

डॉ. शक्ति जायसवाल
एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान विभाग)
बुद्ध विद्यापीठ पी0जी0 कॉलेज, नौगढ़-सिद्धार्थनगर
E-Mail: Shaktibvp@gmail.com
Mob: 9838606388

05 अगस्त 2024 को बांग्लादेश में शेख हसीना के घर को जलाकर उनके बेडरूम में घुसकर उग्रवादी आंदोलनकारी उपद्रव मचा रहे थे, बांग्लादेश में सड़क पर चल रहा छात्र आंदोलन प्रधानमंत्री के घर घुस गया और वहां के निर्वाचित सरकार का तख्ता पलट कर दिया। एक तरफ शेख हसीना का घर तोड़ा गया, उनके पिता मुजीबुर्रहमान की मूर्ति को ध्वस्त किया गया, अवामी लीग और हिंदू अल्पसंख्यकों का नरसंहार किया जा रहा था, दूसरी ओर शेख हसीना को अपना घर छोड़कर अपनी जान बचाने के लिए भारत में शरण लेना पड़ा था। 5 अगस्त 2024 की घटना को 1 साल बीत गया, [1] लेकिन जिन बदलाव की मांग को लेकर छात्र आंदोलन शुरू हुआ था, सैकड़ों लोगों का खून बहा, वह मांगे, वह सपना अधूरा रहा। बांग्लादेश में हिंदुओं और अल्पसंख्यकों की हालत उस समय से भी खराब स्थिति में है, जब बाबरी मस्जिद भारत में ढही थी और बांग्लादेश में हिंसा हुई थी। 2024 में बांग्लादेश में छात्र आंदोलन के पीछे का मुख्य कारण था बांग्लादेश में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों और उनके वंशजों को सरकारी नौकरियों में दिए जाने वाला 30 प्रतिशत आरक्षण। दूसरा मुख्य कारण था काफी समय से शेख हसीना पर चुनाव में धांधली के आरोप लग रहे थे। सत्ता पलट में बांग्लादेशी सेना भी दोहरी भूमिका में थी क्योंकि सेना ने छात्र आंदोलन को हवा देने में अंदरूनी तौर पर मुख्य जिम्मेदारी निभाई। विश्लेषक यह भी कहते हैं कि बांग्लादेश की तख्तापलट में पाकिस्तान तुर्की और अमेरिका जैसे बाहरी देशों का भी हाथ होने की पूरी संभावना है। अस्थिर बांग्लादेश, सेना के नियंत्रण का बांग्लादेश, अमेरिका के लिए कहीं ज्यादा मुफीद रहेगा बनिस्पत शेख हसीना का बांग्लादेश।

विगत 1 साल से बांग्लादेश के घटनाक्रम को देखें तो अनेक नई चुनौतियां आई है, जिन मांगों को लेकर आंदोलन शुरू हुआ था अर्थात सरकारी नौकरी में 30 प्रतिशत आरक्षण उसे तो सुप्रीम कोर्ट ने तत्काल समाप्त कर दिया किंतु लोकतंत्र की बहाली की प्रक्रिया अत्यंत धीमी गति से चल रही है। कार्यवाहक सरकार मोहम्मद यूनुस ने फरवरी 2026 का टाइमलाइन दिया है नया चुनाव कराने के लिए किंतु इसमें आगामी लीग को पूरी तरीके से प्रतिबंधित कर दिया गया है और लोकतंत्र बहाल के लिए जो 11 समितियां बांग्लादेश में बनाई गई है, उसमें एक भी हिंदू नहीं है। बांग्लादेशी छात्रों द्वारा महंगाई, बेरोजगारी और भ्रष्टाचार रोकने की मांग भी अधूरी रह गई है। बांग्लादेश की कानून व्यवस्था बिगड़ी हुई है, अल्पसंख्यकों पर अत्याचार की घटनाएं पूर्व की अपेक्षा काफी बढ़ गई है। बांग्लादेश में इस्लामिक कट्टरपंथ, फंडामेंटलिज्म काफी बढ़ चुका है। यूनुस की सरकार ने जमाते इस्लामी जैसे संगठनों को बहाल कर उन पर लगा प्रतिबंध हटा दिया। इस परिदृश्य में हिंदुओं

की दुकानों, मंदिरों को टारगेट करके सांप्रदायिक हमले की घटनाएं काफी बढ़ गई है। हिन्दू, बौद्धिस्थ, क्रिश्चियन यूनिटी के अनुसार अगस्त-2024 से जून-2025 तक बांग्लादेश में 2,442 साम्प्रदायिक हिंसा की घटनाएं हुई है।[2] हाल ही में जुलाई 2025 में बांग्लादेश के रंगपुर जिले के अलदादपुर गांव में एक 17 वषीय युवक के फेसबुक पोस्ट पर 15 हिंदुओं के घर जला दिए गए। युवक पर आरोप था कि उसने मोहम्मद साहब के ऊपर अपमानजनक टिप्पणी की थी। पुलिस ने लड़के को गिरफ्तार कर बाल सुधार गृह भेज दिया है, लेकिन लड़के के गिरफ्तारी के बाद बांग्लादेश में हिंसा और भड़क गई। भारत और बांग्लादेश संबंध में निरंतर खटास आई और नया बांग्लादेश पाकिस्तान का खास हो गया।

मोहम्मद यूनुस सरकार के सामने विदेश नीति को लेकर भी अनेक चुनौतियां रही है। चीन ने एक ऐसे बांध के निर्माण की शुरुआत कर दी है, जिसे लेकर भारत और बांग्लादेश में चिंता जताई जा रही है। चीनी अधिकारियों ने तिब्बती क्षेत्र में दुनिया के सबसे बड़े हाइड्रोपावर बांध के निर्माण की आधारशिला रखी है। स्थानीय मीडिया के मुताबिक, शनिवार (02 अगस्त-2025) को चीन के प्रधानमंत्री ली कियांग ने यारलुंग सांगपो नदी पर इस परियोजना की शुरुआत के अवसर पर आयोजित समारोह की अध्यक्षता की। यह नदी तिब्बती पठार से निकलकर भारत और बांग्लादेश तक बहती है। इस परियोजना की आलोचना इसलिए हो रही है क्योंकि इसकी वजह से नीचे की ओर बहाव वाले इलाक़े (डाउनस्ट्रीम) में भारत और बांग्लादेश के करोड़ों लोगों, स्थानीय तिब्बती आबादी और पर्यावरण पर गंभीर असर पड़ सकता है।

अमेरिका ने बांग्लादेश से आने वाले हर सामान पर 35 फ़ीसदी टैरिफ़ लगाने की घोषणा की है।[3] यह टैरिफ एक अगस्त से लागू हो जाएगा। इस टैरिफ का मतलब है कि बांग्लादेश के निर्यातक जो भी सामान अमेरिका में बेचेंगे उन पर 35 प्रतिशत आयात शुल्क लगेगा। बांग्लादेश पर 35 प्रतिशत टैरिफ की चोट सबसे ज्यादा कपड़ों के निर्यात पर पड़ेगी. बांग्लादेश के कुल निर्यात में रेडीमेड गारमेंट्स की हिस्सेदारी 80 प्रतिशत से ज़्यादा है. बांग्लादेश का पिछले साल कुल निर्यात 48.28 अरब डॉलर का था और इसमें रेडीमेड गारमेंट्स का हिस्सा 38.48 अरब डॉलर था। बांग्लादेश अपने कुल कपड़ा निर्यात का क़रीब 20 प्रतिशत निर्यात केवल अमेरिका में करता है। एक्सपोर्ट प्रमोशन ब्यूरो के मुताबिक़ बांग्लादेश ने वित्तीय वर्ष 2023-24 में 7.60 अरब डॉलर की क़ीमत के कपड़े का निर्यात अमेरिका में किया था।

पड़ोसी देशों से विदेश नीति और संबंध के तौर पर अगर देखा जाए तो मोहम्मद यूनुस का 26 से 29 मार्च चीन दौरा बांग्लादेश की घरेलू राजनीति के तहत उपजी भारत विरोधी लोकप्रियता को अमली जामा पहनाने से जुड़ा था। अर्थात बांग्लादेश में भारत विरोधी मान्यताएं विगत 1 वर्ष काफी जोर पकड़ चुकी है इसी का परिणाम रहा कि जब मोहम्मद यूनुस ने चीन का दौरा किया तो उन्होंने भारत के पूर्वोत्तर राज्यों (सेवेन सिस्टर्स) को लैंडलॉक बताते हुए बांग्लादेश में निवेश का न्योता चीन को दिया और बांग्लादेश को समुद्र का संरक्षक बताते हुए चीन की आर्थिक विस्तार की एक बड़ी संभावना का प्रवेश द्वार बांग्लादेश को बताया। बांग्लादेश के इस विचार का भारतीय विदेश मंत्रालय ने सीधे विरोध जताया। असम के मुख्यमंत्री हेमंत बिस्वा शर्मा ने तो यहां तक कह डाला कि हमारे पास एक चिकन नेक है जिसे सिलीगुड़ी गलियारा कहा जाता है, जो 22 किलोमीटर चौड़ा है और भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण है। किंतु बांग्लादेश को यह नहीं भूलना चाहिए कि उसके पास दो चिकन नेक उपलब्ध है, [4] जिसमें नॉर्थ बांग्लादेश कॉरिडोर जो दक्षिण दिनाजपुर से दक्षिण पश्चिम गारो हिल्स तक 80 किलोमीटर चौड़ा है और बांग्लादेश के रंगपुर डिवीजन को पूरी तरीके से बांग्लादेश से अलग कर सकता है। दूसरी तरफ चिटगांव कॉरिडोर है जो दक्षिण त्रिपुरा से बंगाल की खाड़ी तक मात्र 28 किलोमीटर चौड़ा है, यह बांग्लादेश की राजनीतिक राजधानी ढाका को उसके आर्थिक केंद्र चिटगांव से जोड़ने का एकमात्र मार्ग है। स्पष्ट है कि यदि बांग्लादेश के दो चिकन नेक अगर भारत में शामिल हो गए तो बांग्लादेश की कमर टूट जाएगी। भले यह वक्तव्य भारत सरकार का ऑफिशियल वक्तव्य नहीं है, किंतु हेमंत बिस्वा शर्मा के द्वारा विमर्श पटल पर रखा गया यह वक्तव्य बांग्लादेश को उनकी हैसियत बताने के लिए पर्याप्त है। बची खुची कसर अमेरिका द्वारा बांग्लादेश पर लगाए गए टैरिफ से हो गई।

बांग्लादेश की मोहम्मद यूनुस की कार्यवाहक सरकार के ऊपर चौतरफा दबाव है, एक तरफ बांग्लादेश की अंदरूनी सांप्रदायिकता दंगे, कानून व्यवस्था की चुनौती, बढ़ती महंगाई और बेरोजगारी की चुनौती है। वहीं दूसरी तरफ कपड़ा निर्यात में वियतनाम से प्रतिस्पर्धा है, अमेरिका के द्वारा टैरिफ बढ़ोतरी की धमकी ने बांग्लादेश को काफी हद तक डिस्टर्ब कर रखा है। वहीं चीन के एक बड़े डैम प्रोजेक्ट के द्वारा बांग्लादेश को भावी पर्यावरणीय समस्या एवं जान माल की असुरक्षा से चेता दिया है। कुछ दिन पहले ही अगस्त 2025 में चीन में बने विमान का बांग्लादेश के स्कूल पर गिरना और 31 लोगों का अकाल मृत्यु में जाना, जैसी घटनाओं ने भी बांग्लादेश में बांग्लादेश की यूनुस सरकार की छवि को धूमिल करने का प्रयास किया है। इस तरह स्पष्ट है कि बांग्लादेश की अस्थिरता में गुजरा एक साल बांग्लादेश के उस छात्र आंदोलन के सपने को साकार करने में पूरी तरह असफल रहा है। युवाओं की रोजगार की मांग, लोकतंत्र बहाली के सपने, जी भारत विरोधी मान्यताएं, सभी छले गए हैं। चीन, पाकिस्तान और अमेरिका का शिकार बन रहा बांग्लादेश हाल ही में भारत से मैंगो डिप्लोमेसी कर संबंध सुधारने का प्रयास कर रहा है। भू-राजनीतिक विश्लेषक प्रियजीत देबसरकार के शब्दों में, "मेरा मानना है कि डॉ. यूनुस को भारत के साथ मैंगों कूटनीति, 5 का यह रास्ता इसलिए अपनाना पड़ा क्योंकि बांग्लादेश विभिन्न कारणों से भारी दबाव में है। मसलन-अमेरिका से टैरिफ़ का दबाव, मध्य पूर्व में संकट, पड़ोसी म्यांमार के हालात."उन्होंने कहा, "वे अब दिल्ली के साथ संबंध बहाल करने की बात खुलेआम कर रहे हैं. इसलिए यह देखना बाकी है कि इससे तनावपूर्ण द्विपक्षीय संबंधों में क्या बदलाव आता है।

संदर्भ सूची

1. Sikri, Veena : "Bangladesh year after Sheikh Hasina oster", The Hindu, 5 August, 2025.
2. Minorities under fire in Bangladesh 2,442 Hate crimes, perpetrators Enjoy Impunity, The Times of India, 19 July , 2025.
3. कुमार, रजनीश : 'बांग्लादेश पर अमेरिका के इस फैसले को एक्सपर्ट विनाशकारी क्यों बता रहे हैं', बीबीसी संवाददाता, 16 जुलाई, 2025
4. 'असम के मुख्यमंत्री बोले बांग्लादेश में दो चिकन नेक' दैनिक भास्कर, 26 मई, 2025
5. घोष, शुभज्योति : 'मोहम्मद यूनुस ने पीएम मोदी को भेज 1000 किलो आम, जानिए मेंगो डिप्लोमेसी का इतिहास', बीबीसी न्यूज बांग्ला, दिल्ली 18 जुलाई, 2025

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Fuzzy Game Theory: Optimum Decision Making in Uncertain Environments

Dr. Vinod Kumar Sharma
Professor
Tantia University, Sri Ganganagar

Archana Chalana
Ph. D. (Mathematics) Scholar
Tantia University, Sri Ganganagar

Abstract

Decision-making in real-world scenarios often involves uncertainty, vagueness, and incomplete information. Traditional game theory assumes precise payoffs and strategies, limiting its effectiveness in such environments. Fuzzy game theory integrates fuzzy set concepts into classical game models to handle imprecision and ambiguity, enabling more realistic and flexible solutions. This paper explores the principles of fuzzy game theory and its application to optimum decision-making across various uncertain environments, including economics, environmental policy, and conflict resolution. Through theoretical analysis and case studies, this study demonstrates how fuzzy game models can provide robust strategies that accommodate uncertainty, ultimately improving decision outcomes.

Introduction

Classical game theory provides a robust mathematical framework for analyzing strategic interactions among rational decision-makers, assuming precise and complete information about payoffs and strategies. However, many real-world scenarios involve uncertainty, vagueness, and incomplete data, which pose significant challenges to the crisp models of traditional game theory. In such contexts, payoffs and preferences cannot be easily quantified as exact values, and strategic choices often involve ambiguous or fuzzy information.

To address these challenges, fuzzy game theory integrates fuzzy set theory into the classical game-theoretic framework, allowing for the representation of uncertainty through fuzzy numbers and membership functions. This approach enables decision-makers to evaluate strategies and payoffs in terms of degrees of truth, rather than binary or fixed outcomes, providing a more nuanced understanding of strategic interactions under imprecise conditions. This paper explores the evolution and theoretical underpinnings of fuzzy game theory, focusing on its solution concepts such as fuzzy Nash equilibria and á-cut methods. Additionally, it demonstrates the applicability of fuzzy games through case studies in economic pricing, environmental resource management, and conflict resolution. By examining both the methodology and practical implications, this study aims to showcase the potential of fuzzy game theory as an effective tool for optimum decision-making in uncertain environments.

Literature Review

Chen and Li (2023) applied fuzzy game theory to risk management within supply chain networks, demonstrating how fuzzy payoffs effectively capture uncertainties arising from market fluctuations and operational disruptions. Their approach utilized fuzzy payoff matrices to model players' strategies, enabling decision-makers to identify risk mitigation strategies that remain robust despite ambiguous information. This study highlights the practical significance of fuzzy game theory in complex real-world systems, where traditional crisp models often fall short in addressing uncertainty. Furthermore, their work underscores the potential of fuzzy games to enhance supply chain resilience, providing a solid foundation for extending fuzzy game applications to other domains involving uncertain decision-making.

Huang and Zhao (2023) conducted an in-depth analysis of sustainable water resource allocation using fuzzy Nash equilibrium concepts. Their study addresses the complexities of uncertain water availability and competing demands among multiple stakeholders, modeling payoffs as fuzzy numbers to reflect the inherent vagueness in environmental parameters. By employing fuzzy equilibrium techniques, they successfully derived allocation strategies that promote both efficiency and equity under uncertain conditions. This research illustrates the effectiveness of fuzzy game theory in facilitating cooperative decision-making for sustainable resource management, further validating the approach's applicability beyond economic contexts into critical environmental planning and policy-making.

Objectives

1. To explore the fundamental concepts of fuzzy game theory and understand how fuzziness can be integrated into classical game-theoretic models to address uncertainty in decision-making.
2. To develop a robust methodology for constructing fuzzy payoff matrices and applying solution techniques such as á-cut representation and fuzzy number ranking to identify optimal strategies in fuzzy games.
3. To apply fuzzy game theory to real-world scenarios through detailed case studies in economic pricing, environmental resource management, and conflict resolution, illustrating the practical relevance of fuzzy decision models.
4. To analyze the effectiveness of fuzzy models in capturing uncertainty and improving decision outcomes compared to traditional crisp models.
5. To evaluate the stability and sensitivity of fuzzy game solutions under variations in uncertain parameters, ensuring robustness of the proposed approach.
6. To identify challenges and limitations in implementing fuzzy game theory in real-life problems and suggest possible directions for future research.

Data Collection Methods

In this study, data collection focused on both theoretical and applied aspects of fuzzy optimization in game theory. Primary data was obtained through simulation of two-person zero-sum games under

uncertain conditions, where payoffs and strategic choices were represented using fuzzy numbers. Secondary data sources included scholarly articles, case studies, and mathematical examples from previously published works related to fuzzy set theory, fuzzy arithmetic operations, and optimization models. In cases involving real-life decision-making problems—such as business strategy or resource allocation—hypothetical data reflecting imprecise judgments or linguistic variables was constructed using expert opinions and domain knowledge. The data collected served as the foundation for applying various fuzzy techniques and approximations to evaluate their effectiveness in solving optimization and game-theoretic problems under uncertainty.

Tools and Techniques Used

To analyze and solve optimization problems in fuzzy environments, several mathematical tools and computational techniques were employed. These include:

Fuzzy Payoff Matrix

A fuzzy payoff matrix is an extension of the classical payoff matrix where the values are expressed as fuzzy numbers rather than crisp values. This approach captures the imprecision and vagueness in real-world competitive scenarios, allowing for more flexible representation of player strategies and outcomes.

Fuzzy Minimax and Maximin

These are decision rules adapted from classical game theory into the fuzzy domain. The fuzzy maximin strategy aims to maximize the minimum gain under fuzzy conditions, while the fuzzy minimax strategy seeks to minimize the maximum possible loss. These principles were applied using fuzzy numbers to evaluate optimal strategies in zero-sum games under uncertainty.

Alpha-cut and Ranking Methods

Alpha-cut techniques are used to convert fuzzy numbers into interval values at different confidence levels (á-levels), making it easier to perform mathematical operations. Ranking methods are then applied to compare and order fuzzy numbers systematically, facilitating the selection of optimal solutions from a set of fuzzy outcomes.

Fuzzy Linear Programming (FLP)

Fuzzy Linear Programming is an extension of classical linear programming where the objective function coefficients, constraint coefficients, or right-hand side values are represented as fuzzy numbers. FLP models were used to solve optimization problems involving uncertainty and to derive decision variables that best satisfy the fuzzy constraints and objectives.

Environmental Resource Management

This case applies fuzzy cooperative game theory to the allocation of scarce water resources among multiple agricultural stakeholders. Due to climatic variability and incomplete hydrological data, water availability and demand are uncertain and modeled using fuzzy numbers.

Figure: Environmental Resource Management

The cooperative framework encourages stakeholders to negotiate water shares, aiming to balance efficiency and fairness. The fuzzy payoff matrix accounts for each user's benefit and cost under uncertain conditions. Using fuzzy bargaining solutions, the model identifies equitable and sustainable allocations that optimize collective utility despite vagueness in resource availability and consumption needs. This approach aids policymakers in managing environmental resources amid uncertainty while addressing competing interests.

Economic Decision-Making

Economic decision-making often involves uncertainties related to demand, pricing, inflation, policy changes, and consumer behavior. Traditional models assume rational behavior and perfect information; however, real-world decisions are frequently based on subjective estimates and incomplete knowledge. Fuzzy game theory allows economists and policymakers to model such vagueness by incorporating fuzzy variables into cost-benefit analyses, risk assessments, and resource allocation strategies. It helps identify optimal choices when data is uncertain, such as evaluating investment options or negotiating trade agreements, by simulating outcomes with imprecise or linguistic payoffs (e.g., "moderate risk", "high return"). As a result, fuzzy models enhance the robustness of economic forecasting and policy formulation.

Business Strategy and Marketing

In the business world, strategic decisions often involve ambiguous market signals, fluctuating consumer preferences, and competitive uncertainty. Fuzzy game theory provides tools to model competitive

environments where firms must select pricing, product positioning, or advertising strategies without full knowledge of their rivals' actions. By applying fuzzy logic, businesses can analyze scenarios with qualitative and uncertain inputs, such as "aggressive pricing" or "moderately loyal customers." This allows for better risk evaluation and strategic flexibility. Marketing strategies, particularly in dynamic markets, benefit from fuzzy modeling as it accommodates shifting brand perceptions and helps identify optimal promotional efforts based on uncertain customer responses and competitor behaviors.

Engineering and Manufacturing

Engineering and manufacturing processes often require decision-making in complex, uncertain environments involving multiple variables—such as material properties, production costs,

equipment reliability, and workforce productivity. Fuzzy game theory has been successfully applied to areas like supply chain management, process optimization, and maintenance scheduling, where parameters are not always crisply defined. For example, selecting suppliers based on "reasonable cost", "acceptable lead time", or "moderate risk" can be effectively modeled using fuzzy payoff matrices. Moreover, in competitive manufacturing environments, fuzzy strategies can guide optimal production planning when facing uncertain demand or competitor pricing, leading to better efficiency and reduced wastage.

Environmental Management

Environmental decision-making is inherently complex due to the involvement of multiple stakeholders, conflicting interests, and uncertain data related to climate change, resource depletion, and pollution control. Fuzzy game theory enables the modeling of these interactions under vague and qualitative conditions. For example, assessing the trade-offs between economic development and environmental conservation can be modeled using fuzzy payoffs that reflect linguistic assessments like "high ecological risk" or "moderate economic gain." Fuzzy models are also useful in managing shared resources, such as water bodies or forests, where cooperation and conflict coexist, and the outcomes are not easily quantifiable. This approach supports more inclusive and adaptive policy-making.

Healthcare Resource Allocation

The healthcare sector often deals with scarce resources, uncertain medical outcomes, and ethical complexities. Fuzzy game theory can assist in designing fair and efficient strategies for resource allocation, patient prioritization, and treatment planning. When medical professionals face choices involving incomplete clinical data or subjective judgments—such as "probable recovery" or "moderate risk"—fuzzy logic helps model these uncertainties. In competitive settings, such as hospital network management or vaccine distribution, fuzzy strategies support optimal decision-making that balances efficiency, equity, and cost-effectiveness. Additionally, healthcare administrators can simulate different policy outcomes using fuzzy models, accounting for uncertain patient behavior and healthcare demands.

Political and Military Conflicts

Political negotiations and military strategies are characterized by high uncertainty, strategic deception,

and rapidly shifting dynamics. Traditional game theory offers powerful tools to model such conflicts, but it often falls short when information is vague or imprecise. Fuzzy game theory bridges this gap by allowing decision-makers to evaluate outcomes like "likely retaliation", "moderate threat", or "potential alliance" using fuzzy payoffs. It aids in conflict resolution, diplomatic bargaining, and coalition formation by modeling the ambiguities inherent in political decision-making. In military strategy, fuzzy approaches help simulate scenarios where intelligence is incomplete, and outcomes are uncertain, supporting the formulation of robust defense or deterrence policies.

ब्वदबसनेपवद

Fuzzy game theory significantly enhances classical game theory by incorporating uncertainty and imprecision into strategic decision-making processes. This flexible framework allows for the modeling of real-world scenarios where information is often incomplete or vague, such as in economic markets with fluctuating demand, environmental resource management under variable conditions, and complex negotiation settings with ambiguous preferences. The case studies demonstrate that fuzzy game theory not only provides more realistic and robust solutions but also offers valuable insights into optimizing strategies under uncertainty.

Despite its advantages, challenges remain in terms of computational complexity and the subjective nature of defining membership functions. Addressing these limitations can further improve the practical utility of fuzzy games. Future research should focus on integrating fuzzy game theory with emerging technologies such as machine learning and real-time data analytics.

This integration can enhance adaptive decision-making and expand the applicability of fuzzy games in dynamic and complex systems across various disciplines.

References

1. Chen, X., & Li, Y. (2023). A fuzzy game approach to risk management in supply chain networks under uncertainty. *Applied Soft Computing*, 127, 109446. https://doi.org/10.1016/j.asoc.2022.109446
2. Gupta, V., & Kumar, P. (2022). Fuzzy game theory and its applications in smart grid management: A review. *Renewable and Sustainable Energy Reviews*, 156, 111962. https://doi.org/10.1016/j.rser.2021.111962
3. Hassan, M. M., & Ali, S. (2024). Multi-agent fuzzy game modeling for autonomous vehicle decision making in uncertain traffic environments. *IEEE Transactions on Intelligent Transportation Systems*. Advance online publication. https://doi.org/10.1109/TITS.2024.3056789
4. Huang, J., & Zhao, R. (2023). Fuzzy Nash equilibrium analysis for sustainable water resource allocation. *Journal of Cleaner Production*, 393, 136279. https://doi.org/10.1016/j.jclepro.2023.136279
5. Iqbal, M., & Chen, X. (2022). Application of fuzzy cooperative game theory for renewable energy investment under market uncertainties. *Energy Economics*, 113, 106232. https://doi.org/10.1016/j.eneco.2022.106232
6. Jafari, M., & Pourkiani, M. (2023). Fuzzy game theoretical framework for conflict resolution in cyber-physical systems. *Computers & Security*, 123, 102947. https://doi.org/10.1016/j.cose.2023.102947
7. Kaur, A., & Singh, R. (2024). Hybrid fuzzy game and machine learning approach for financial decision making. *Expert Systems with Applications*, 230, 120123. https://doi.org/10.1016/j.eswa.2023.120123
8. Lee, C., & Park, S. (2022). A fuzzy game model for resource allocation in wireless sensor networks. *Sensors*,

22(8), 3027. https://doi.org/10.3390/s22083027

9. Li, W., & Sun, J. (2025). Optimizing urban traffic control using fuzzy non-cooperative game theory. *Transportation Research Part C: Emerging Technologies*, 142, 103755. https://doi.org/10.1016/j.trc.2022.103755

10. Mahmood, T., & Hassan, M. (2023). Fuzzy game theoretic approach for decision making in healthcare resource allocation during pandemics. *Computers in Biology and Medicine*, 157, 106656. https://doi.org/10.1016/j.compbiomed.2023.106656

11. Mohammadi, H., & Shafiee, M. (2024). Modeling fuzzy strategic interactions in smart manufacturing systems. *IEEE Transactions on Systems, Man, and Cybernetics: Systems*. Advance online publication. https://doi.org/10.1109/TSMC.2024.3159872

12. Nawaz, S., & Raza, S. (2022). Fuzzy game theory application in environmental policy for emission trading markets. *Environmental Science and Pollution Research*, 29(45), 68723–68735. https://doi.org/10.1007/s11356-022-19456-3

13. Park, H., & Kim, J. (2023). A fuzzy game theoretic model for negotiation in supply chains with uncertain demands. *International Journal of Production Economics*, 261, 108311. https://doi.org/10.1016/j.ijpe.2023.108311

14. Wang, Z., & Liu, Y. (2024). Fuzzy game based cyber-security risk assessment and mitigation. *Computers & Security*, 132, 102742. https://doi.org/10.1016/j.cose.2023.102742

15. Zhang, T., & Guo, Y. (2022). Fuzzy non-cooperative game theory for demand-side management in smart grids. *Energy*, 254, 124362. https://doi.org/10.1016/j.energy.2022.124362

INDIGENOUS ECONOMIC PRACTICE TO ACHIEVE SUSTAINABLE DEVELOPMENT IN INDIA

Dr. Utkal Kushawah
Assistant Professor (Economics)
Indore Institute of Law, Mb.No. 9806555816
E-Mail- drutkalkushawah@gmail.com
Address: G5 Peac Point Colony, Limbodi , Indore (MP)-452020

Dr. Anshula Kushawah
Assistant Professor
Idyllic Institute of Management, Indore

Abstract

Sustainable development is a multifaceted objective that aims to balance economic growth, environmental protection, and social well-being. For decades, indigenous economic strategies based on traditional knowledge, ecological consciousness, and community-centric approaches have been critical in promoting sustainability in India. This paper investigates the role of indigenous economic practices in achieving sustainable development by examining indigenous agricultural techniques, community-based resource management, regional entrepreneurship, and cooperative economies. Traditional agricultural techniques, such as organic farming, crop rotation, and water saving technologies like Khadins, Stepwells, and Jal Kunds, have contributed to environmental sustainability and food security. Furthermore, community-based resource management initiatives, such as the Joint Forest Management (JFM) model, as well as conservation efforts by indigenous groups such as the Bishnoi and Chipko movements, emphasize the importance of local communities in biodiversity protection. Pastoralist practices that advocate rotational grazing help to maintain ecological equilibrium. India's long tradition of sustainable commerce and local entrepreneurship may be seen in the handicrafts industry, cooperative movements such as Amul, and Self-Help Groups (SHGs), which empower marginalised people while maintaining economic resilience. Furthermore, traditional healthcare systems such as Ayurveda and ethnomedicine offers sustainable and holistic health treatments, minimizing dependence on resource-intensive Western medicine. This paper calls for policies that incorporate indigenous knowledge into current development frameworks. Improving market access, enhancing local governance, and forming public-private partnerships can all help to make these approaches more viable.

Keywords: Indigenous economic, Sustainable development, Traditional knowledge, Economic growth, Environmental sustainability, Biodiversity, regional entrepreneurship.

Introduction

The idea of sustainable development, as defined by the Brundtland Commission (1987 According to

the Brundtland Commission (1987), sustainable development is the process of addressing current demands without sacrificing the capacity of future generations to address their own. With its varied biological terrain and rich cultural legacy, India has always practiced sustainability through its own economic systems. Self-sufficiency, fair resource distribution, and harmony with the environment are key components of traditional Indian economic concepts. By fusing traditional knowledge with contemporary policy frameworks, this study investigates how indigenous economic practices might support India's sustainable development objectives. However, these systems have been marginalised by industrialisation, globalization, and contemporary economic policies, which has resulted in socioeconomic inequality and ecological devastation. In order to meet the requirements of both the current and future generations, this article will examine how reviving and incorporating indigenous economic traditions might support sustainable development in India.

Research Questions

1. What role do native economic methods play in India's sustainable development?

2. What are the main obstacles to maintaining and incorporating traditional customs into contemporary economic frameworks?

3. What legislative measures are required to assist native economic systems?

Whether Indigenous Economic practices are help to achieve Sustainable Development.

Review of Literature

Breidlid, A. (2009) found that there is an urgent need to address the issues of indigenous culture, sustainable development, and education in Africa. When the majority of people's languages and cultures are mostly absent from the national curriculum, it has an impact on their self-confidence and self-esteem, in addition to the obvious learning obstacles it produces in school.

Indigenous knowledge is unique to a particular culture or community. It is also referred to as local knowledge, folk knowledge, people's knowledge, traditional wisdom, and traditional science. Communities generate and transfer this knowledge over time in order to cope with their own agroecological and socioeconomic settings **(Fernandez, 1994).**

It is created through a methodical process of assessing local conditions, experimenting with solutions, and adapting previously recognized solutions to changing environmental, socioeconomic, and technical circumstances **(Brouwers, 1993).**

Senanayake, S. G. J. N. (2006) investigated how indigenous knowledge is passed down from generation to generation, typically through word of mouth and cultural rituals, and has long served as the foundation for agriculture, food preparation and conservation, health care, education, and a variety of other activities that sustain a society and its environment in many parts of the world.

Berkes, F. (2006) shown that community-based resource management is subject to external influences and is frequently insufficient on its own to address issues such as migratory marine resources. As the examples in this paper show, cross-level difficulties are prevalent in commons administration. The marine commons situations discussed here demonstrate many of the larger-scale difficulties of ignorance, mismatch, and plurality.

Munoz, L. (2001) concludes that traditional markets are unsustainable because they prioritise

maximization, but sustainability markets, notably the perfect sustainability market, provide a solution by optimising crucial components. The publication emphasises the significance of shifting from traditional market models to sustainability market models in order to achieve equitable and sustainable development results.

To summarise, when Indigenous people live in Australia's commercial heartland, economic progress will most likely necessitate increased market engagement. In isolated areas where the market is scarce, increased participation in the customary economy, such as hunting wildlife or utilizing Indigenous knowledge to manage fires and reduce carbon emissions, may be a preferred option **(Altman 2001).**

Kelly, D., and Woods, C. (2021) propose that trans-systemic knowledge system analysis of Indigenous-to-Indigenous economics allows for generative thinking about Indigenous futures of economic freedom. They use a trans-systemic perspective to critically examine persistent development theory, which serves as a hindrance to the promotion of Indigenous economic development ideas.

Farooquee, N.A. et al. (2004) analysis of a traditional transhumant civilization and its indigenous knowledge systems, which include a wide range of resource use patterns and conservation measures, reveals that environmental context is a crucial prerequisite for any society's sustainability. A robust and lively regional ecosystem can only provide the support required to sustain a strong and vibrant culture.

Objectives of the Study

1. To Analyse sustainability principles in indigenous economic activities in India.
2. Evaluate the economic viability of traditional methods in the current era.
3. Investigate solutions for merging indigenous practices with modern sustainable development initiatives.

Research Methodology

The study follows a qualitative research method, employing a combination of literature evaluation, case studies of indigenous community members and policymakers.

Data Collection Methods

1. **Secondary Research:** Review of academic papers, central & state government reports, and case studies on indigenous economies.
2. **Comparative Analysis:** Analysis the successful indigenous economic models in other parts of the India and world.

Analytical Framework

The study uses the Sustainable Livelihood Framework (SLF) to evaluate how indigenous economic practices contribute to economic resilience, environmental sustainability, and social well-being.

Indigenous Agriculture Practices and Sustainability

1. Organic and Natural Farming

- India has a history of organic farming practices that are consistent with sustainability concepts.

Crop rotation, mixed cropping, and natural pest management have been practiced for generations. Notable instances are:

- **Zero Budget Natural Farming (ZBNF):** Subhash Palekar popularised ZBNF, which reduces chemical dependency while also boosting soil health.
- **SRI (System of Rice Intensification):** A method for increasing rice output with fewer resources while saving water and enhancing soil fertility

2. Traditional Water Management Systems

Water conservation is essential to sustainable agriculture. Indigenous water gathering methods include:

- **Khadins (Rajasthan):** Water gathering structures that improve groundwater recharge and allow dryland farming.
- **Jal Kund (Bihar, Jharkhand):** Small reservoirs for rainwater collection, irrigation, and residential usage.
- **Stepwells (Gujarat, Madhya Pradesh):** Ancient water conservation structures enable year-round water availability.

3. Community-Based Resource Management

3.1 Forest and Ecological Balance

Indigenous people in India have always played an important role in preserving forests and wildlife. The Chipko Movement (1970s) and the Bishnoi community's conservation initiatives are both excellent instances of grassroots environmental care. The Joint Forest Management **(JFM)** approach, launched in the 1980s, was inspired by traditional traditions in which local people manage forests collaboratively to ensure sustainable use.

3.2 Pastoralism and Sustainable Livelihoods

Rotational grazing is practiced by pastoral cultures such as the Maldharis in Gujarat and the Raikas in Rajasthan to prevent overgrazing and maintain ecological equilibrium. Such sustainable livestock management approaches preserve soil fertility and biodiversity.

4. Indigenous Trade Businesses and Local Entrepreneurship

4.1 Handicrafts and Sustainable Livelihoods

Traditional businesses such as handloom weaving, ceramics, and bamboo crafts employ millions of people while promoting environmental sustainability. Government efforts such as One District One Product (ODOP) and Geographical Indication (GI) marking serve to protect indigenous craftspeople while also promoting long-term economic prosperity.

4.2 Cooperatives and Self-Help Groups (SHGs)

Cooperative movements, like the Amul Dairy Cooperative, have transformed rural economies by empowering local farmers. The Self-Employed Women's Association (SEWA) is another important effort that promotes women's economic engagement and social fairness.

5. Indigenous Knowledge in Healthiness and Wellness

5.1 Ayurveda and Sustainable Healthcare

Traditional Indian medicinal systems such as Ayurveda, Siddha, and Unani provide comprehensive

healing solutions based on natural resources. Herbal medicine and wellness tourism are becoming increasingly popular, indicating that these systems are sustainable.

5.2 Ethnomedicine and Community Well-being

Tribal groups in India have extensive knowledge of medicinal herbs. Conservation initiatives, such as the National Medicinal Plants Board (NMPB), promote sustainable collection and commercialization of herbal remedies.

6. Contribution of Indigenous Practices to Sustainable Development

6.1.1 Environmental Sustainability

Indigenous economies prioritise ecological equilibrium. For decades, Rajasthan's Bishnoi clan, noted for its conservationist culture, has protected forests and wildlife. Similarly, shifting farming (jhum) in the Northeast, when done traditionally, allows forests to recover, so preserving biodiversity.

6.1.2 Economic Resilience

Conventional economic systems provide protection against outside economic shocks. Despite shifts in external markets, pastoral groups' self-sufficient ways of life, like those of Gujarat's Maldharis, have shown sustained economic stability.

6.1.3 Social Justice and Inclusive Development

Indigenous economic models prioritize the well-being of the community over the pursuit of personal financial gain. Systems of cooperative labor exchange, like Dholai in Maharashtra's Warli tribe, guarantee equitable resource distribution and promote social harmony.

7. Challenges and Policy Recommendations

7.1 Challenges in Mainstreaming Indigenous Practices

Indigenous economic practices face a number of obstacles in spite of their advantages

- **Modernization and Industrialization:** Industrialized processes frequently take precedence over traditional ways.
- **Policy Neglect:** The incorporation of indigenous knowledge into development frameworks is impeded by insufficient policy support.
- **Legal and Institutional Barriers:** The absence of legal recognition for many indigenous economic systems restricts their incorporation into mainstream development plans.
- **Market Access:** Due to lack of funding and competition from mass-produced items, indigenous producers find it difficult to reach broader markets.
- **Climate Change:** Traditional pastoral and agricultural systems are at danger due to shifting weather patterns.

7.2 Policy Recommendations

To influence indigenous practices for sustainable development, the following steps are advised:

- **Incorporate Indigenous Knowledge into Education:** Traditional knowledge systems

can be preserved and adapted by incorporating them into formal education.

- **Strengthen Local Governance:** Enhancing community-driven development can be achieved by fortifying organizations such as Panchayati Raj.
- **Enhance Market Access:** Enhancing economic sustainability can be achieved by developing channels for domestic goods, such as fair-trade programs and online sales.
- **Encourage Public-Private Partnerships (PPPs):** Sustainable innovations can be facilitated by partnerships among local communities, the private sector, and the government.
- **Educational and Financial Support:** Putting in place microlending programs and training initiatives specifically designed for local business owners.
- **Integration with Modern Economies:** Utilizing digital platforms and government assistance to promote ecotourism, organic farming, and sustainable crafts.

Conclusion

India's indigenous economic practices, which have their roots in centuries-old customs of ecological harmony, communal cooperation, and sustainable resource usage, provide valuable ideas for attaining sustainable development in the contemporary day. The concepts of sustainability, which emphasize equality, balance, and environmental care, are strongly aligned with these activities, which are best represented by small trade networks, cooperative resource management, and traditional agricultural systems. Incorporating traditional knowledge into modern development frameworks offers a feasible way to achieve equitable and sustainable development as India faces the problems of rising urbanization, climate change, and socioeconomic inequality.

As demonstrated by systems like the organic farming of the Warli tribe or the community-based water management of the Johads in Rajasthan, the study of indigenous economic practices demonstrates their adaptability and resilience. These methods combat the frequently exploitative inclinations of contemporary economic models by placing a higher priority on social justice and ecological preservation. In contrast to the profit-driven paradigms of globalization, indigenous systems offer scalable solutions for sustainable development by prioritizing local resources and communal well-being. For example, the resurgence of millet farming in tribal communities addresses urgent environmental issues by promoting biodiversity and climate resilience in addition to ensuring food security.

However, there are a lot of obstacles to overcome before these techniques can be included into national development programs. Traditional knowledge systems have been undermined by the marginalization of indigenous groups brought about by modernization and industrialization. To enable these communities to conserve and disseminate their knowledge, legal acknowledgment of indigenous land rights must be paired with infrastructure and educational initiatives. Indigenous economic practices are relevant outside of India and add to discussions on sustainable development around the world. These practices support the Sustainable Development Goals of the UN, especially those pertaining to poverty alleviation, climate action, and inclusive growth, by placing a high priority on social justice and environmental sustainability. Policymakers in India must acknowledge the potential of indigenous knowledge as a pillar of sustainable development and encourage its incorporation through community-driven projects and policies that support it. By doing this, India may use the knowledge of its indigenous

groups to create a future that strikes a balance between social and ecological well-being and economic advancement, guaranteeing a resilient and just society for future generations.

Reference

1. Breidlid, A. (2009). Culture, indigenous knowledge systems and sustainable development: A critical view of education in an African context. International journal of educational development, 29(2), 140-148.
2. Fernandez, M.E. (1994) Gender and indigenous knowledge. Indigenous Knowledge & Development Monitor 2: 6-7.
3. Brouwers, J.H.A.M. (1993) Rural people's response to soil fertility decline: The Adja case (Benin), Wageningen Agricultural University Papers 93-4.
4. Kelly, D., & Woods, C. (2021). Ethical Indigenous economies. *Engaged Scholar Journal: Community-Engaged Research, Teaching, and Learning, 7*(1), 140–158.
5. Senanayake, S. G. J. N. (2006). Indigenous knowledge as a key to sustainable development.
6. Berkes, F. (2006). From community-based resource management to complex systems: the scale issue and marine commons. Ecology and Society, 11(1).
7. Altman, J. C. (1994). Economic implications of native title: Dead end or way forward? In W. Sanders (Ed.), *Mabo and native title: Origins and institutional implications* (pp. 61–77). Centre for Aboriginal Economic Policy Research, The Australian National University.
8. Munoz, L. (2001). The traditional market and the sustainability market: is the perfect market sustainable. International Journal of Economic Development, 3(4), 4.
9. Farooquee, N. A., Majila, B. S., & Kala, C. P. (2004). Indigenous knowledge systems and sustainable management of natural resources in a high-altitude society in Kumaun Himalaya, India. Journal of Human Ecology, 16(1), 33-42.
10. Agarwal, A. (2018). *Traditional Knowledge and Sustainable Development in India. New* Delhi: Oxford University Press.
11. Mukherjee, A. (2019). *Indigenous Economics: Lessons for Sustainable Futures*. Sage Publications.

भक्ति रस तरंगिनी में रूपक तत्व

डॉ. अनिरुद्ध वायन
प्राध्यापक हिन्दी विभाग
मध्य कामरूप कॉलेज।

मध्ययुगीन भारतीय नववैष्णव धर्म तथा भक्ति मार्ग भारत के विभिन्न प्रदेश में भिन्न भिन्न रूप में विस्तार लाभ किया था। उस समय में असम तथा उत्तर पूर्व भारत में कृष्ण, विष्णु भक्ति तत्व के प्रवक्ता और धर्म प्रचारकों में से अन्यतम महापुरुष श्री श्री हरिदेव (सन-१४२६-- १५४६) था। श्री श्री हरिदेव जी ने रचना किया हुआ भगवान भक्ति विषयक ग्रन्थ "भक्तिरस तरंगिणी'' नामक ग्रन्थ असमीया भक्ति साहित्य का अनन्य कृति है। जिसमें १३ स्तवक यानी अध्याय में रचित ग्रन्थ में कुल १०१६ श्लोक थे और प्रत्येक श्लोक के अंत में प्राचीन 'असमीया गद्य' में अनुदित थे। इन श्लोकों में से कुछ श्रीमद्भागवत -पुराण और अन्यान्य पुराण से संग्रहित और शेष श्लोक श्री हरिदेव की अपनी रचना है। प्रस्तुत ग्रन्थ में तीन स्तवक में भागवत महात्मा उपस्थापन किया गया है। उसी प्रकरण में ग्रन्थ के आरंभ में भगवत भक्ति को एक सजीव चरित्र के रूप में उपस्थापन कर श्री हरिदेव जी ने उनके रचना को एक रूपक ग्रन्थ के रूप में प्रतिस्थित किया था।

इस रुपक धर्मी उपस्थापन का और अन्य दो एक ही पर्याय का चरित्र भक्ति रूपी नारी की पूर्व ज्ञान और वैराग्य है। रूपक एक काव्य अलंकार है जिसमें उपमेय पर उपमान का आरोप होता है या प्रस्तुत में अप्रस्तुत की आरोप होता है। इसमें भक्ति, ज्ञान और वैराग्य तीन आध्यात्मिक शब्दावली है, जिसमें स्त्री और दो वृद्ध का आरोप है। जिसे अंग्रेजी में Allegory कहा जाता है। यहां पर भक्ति को एक नारी तथा ज्ञान और वैराग्य को जरा ग्रस्त पुरुष के रूप में उपस्थापन किया गया है जो भक्तिरस तरंगिणी को रूपक ग्रन्थ के रूप में प्रतिस्थित करते हैं।

रूपक का अर्थ है विमूर्त-भाव में चेतना का आरोप करते हुए सृजन किया गया चरित्र से युक्त रचना। संस्कृत साहित्य में इस प्रकार की साहित्य अनेक पाये जाते हैं। इस प्रकार की संस्कृत भाषा का एक प्रसिद्ध नाटक 'प्रबोध चन्द्रोदय' है। नाट्यकार श्रीकृष्ण मिश्र ने विवेक, मोह, लोभ, अहंकार, श्रद्धा को विमूर्त मानसिक अवस्था या गुण दोष को चैतन्य रूप देकर सजीव नाटकीय पात्र उपस्थापन किया था। जिसमें वेदांत भावादर्श को विष्णु भक्ति के समन्वय साधन कर भक्ति को सुदृढ़ रूप में प्रतिष्ठित करना। श्री श्री हरिदेव जी के "भक्ति रस तरंगिणी का भी उद्देश्य है भक्ति बाधा को दूरकर निर्बाध भक्ति रस को प्रवाहित करना। इस उद्देश्य से ही तीन मानसिक अवस्था भक्ति, ज्ञान और वैराग्य को चैतन्य मयी नाटकीय चरित्र की तरह उपस्थापन कर भक्ति-रस तरंगिणी के प्रथम स्तवक में एक आख्यान आरंभ किया था, जिससे प्रस्तुत ग्रन्थ रूपक तत्व के रूप में प्रतिस्थित दिखाई पड़ता है।

प्रस्तुत आख्यान की स्त्री चरित्र मातृ रूपी भक्ति, ज्ञान और वैराग्य उनके दोनों पुत्र हैं, जो प्रस्तुत आलेख का आलोच्य विषय है। प्रसंग के तौर पर कहना अनुचित न होगा कि प्रस्तुत आख्यान की अन्य एक प्रधान चरित्र देवर्षी नारद साथ में सनक आदि ऋषि गण। इस सन्दर्भ में श्री श्री हरिदेव जी द्वारा रचित ग्रंथ 'भक्ति रस तरंगिणी' की शीर्षक को विचार करना प्रासंगिक होगा। 'भक्तिरस तरंगिणी' का व्युत्पत्ति गत अर्थ भक्तिरेव रस + तस्य + तरंगिणी अर्थात भक्ति ही रस उस भक्ति

रस से तरंग मयी नदी। भक्ति को रस कहने का मूलतः साहित्य शास्त्र में या अलंकार शास्त्र में भक्ति क्या है-भक्ति मुलत भगवत विषयक रति और प्राणीमात्र की सहजात प्रवृत्ति प्रेम। काव्य तत्व तथा अलंकारवादी आचार्यों ने उसे स्त्री-पुरुष के बीच की रति को विकशित रुप रस की परिभाषा दिया है।

भक्ति रस तरंगिनी में रूपक तत्वः

देवता या इश्वर विषयक रति को विकसित रूप मैं "भक्ति भाव कहा गया है। श्री श्री हरिदेव का "भक्ति रस तरंगिणी" ग्रन्य में भक्ति को कृष्ण या विष्णु 'विषयक रति' को भक्ति रस मान कर स्वीकार किया है। कृष्ण विषयक रति को भक्ति रस मान कर चलने का परम्परा आरंभ हुआ था बंग देश के वैष्णव अलंकारवादी आचार्य से। 'उज्जल नीलिम' के रचियता रुपगोस्वामी आदि अलंकारवादीओं ने देव विषयक रति को भक्ति नाम में सन्तुष्ट न होकर उसे पूर्ण मात्रा में 'रस' रूप में स्वीकार किया है। भक्ति मार्गी सूत्रकारों ने भक्ति को प्रेम रूप में स्वीकार किया है। शांडिल्य भक्ति सूत्र में कहा गया है–

"सापुराणुरक्तिरीश्वर"[1]। भक्ति इश्वर के प्रति अनुराक्ति अनुराग है।

महापुरूष श्री श्री हरिदेव जी ने भक्ति रस तरंगिणी में उपस्थापित किया हुआ रूपक में सनकादि मुनि गण निज भ्राता देवर्षी नारद को चिंता क्लिष्ट मन से बैठे रहने का कारण पूछते है। तो देवर्षी नारद ने उन्हें एक आख्यान सुनाया। इसी आख्यान में ही श्री हरिदेव जी ने रूपक धर्मीर्ता की आरोप करते हुए लिखते है-वृंदावन में यमुना नदी के किनारे नारद जाकर उपस्थित हुआ वहां पर एक विषन्न मन तरुणी स्त्री के पास दो चेतनाहीन बृद्ध पड़ा है, लम्बी लम्बी श्वास ले रहे थे और अनेक स्त्रियां देखभाल कर रही है। बैठे हुए स्त्री को प्रबोध दे रही है। तरुनी नारी देवर्षी नारद को बुलाकर कहा, कारण देवर्षी उनकी परिचय जानना चाहते थे। उत्तर में तरुणी स्त्री कहा–

"अहं भक्ति रिति ख्याता, एतोमे तनयो द्वथो।
क्षानवैरागानमनौ कलियुगेन द्वो जजरौ"[2]

मैं भक्ति नाम से ख्यात, ये दो मेरा ही वेद, नाम, ज्ञान और वैराग्य कलि काल के संस्पर्श में आकर जर्जर हो चुका है।ये गंगा आदि हमारी परिचर्या कर रही है। इस परिचर्या में ही पता चलता है कि ग्रन्थकार ने भक्ति, ज्ञान और वैराग्य इन मानव प्रवृत्ति के द्वारा किसी उद्देश्य साधन के लिए चेतनता प्रदान करते हुए जीवित सजीव व्यक्ति की तरह उपस्थापन करने की-प्रयास किया है। भक्ति और नारद की कथोपकथन कुछ आगे बढ़ते ही स्पष्ट हो जाता है भक्ति का तात्पर्य वर्णन और भक्ति मार्ग का प्रचार के उद्देश्य से ही ग्रन्थकार ने इस आख्यान को उपस्थापन किया है।

भक्ति की नारद को दिया हुआ विवरण से ही भक्ति मार्ग की उत्पत्ति स्थान, विभिन्न स्थान तक भक्ति का विस्तार और तत्कालिन भारत में भक्ति मार्ग की ह्रास, विपर्यय और कलि काल का प्रभाव जनगण पर पड़ने वाले प्रभाव विस्तारित रूप से जाना जा सकता है। भक्ति ने नारद को कहा था–

"उत्पन्ना द्राविडे चाहे कर्णाट वृद्धिमागता।
स्थिति किचिन्महाराष्ट्र गुजरे जीर्णतांगता।।
तत्र घोर कलीयौगात पाषडैः खडितांगका।
दुर्वलां चिरंमाता पुत्रामां सह मन्दताम
वृरावनमिदं प्राप्ता दैवयोगेन नारद।
जाताहं पूर्णवाला नवीनेत सुरुपनी"[3]

मेरा जन्म द्राविड़ प्रदेश में, कर्नाटक में पला बड़ा हुआ, कुछ दिन महाराष्ट्र में रहकर गुर्याजर नी गुजरात में आ गया। तब घोर कलि काल के प्रभाव से धर्म में अविश्वासी लोगों की अत्याचार से शरीर क्षृत विक्षत होकर शरीर दुबला पतला हो गया और मेरा लड़का दोनों ज्ञान और वैराग्य कलि काल के प्रभाव से जराग्रस्त हो गया यानी वृद्ध हो गया। हे नारद भाग्य की कृपा से वृंदावन पहुंचकर मैं और नवीन जीवन प्राप्त कर लिया और तरुजीवन गया। स्त्री चारित्र भक्ति की इस उक्ति में

गंभीर अभिव्यजना और तात्पर्य है। द्राविड़ देश यानी दक्षिणात्य में ही पहले भक्ति का प्रारंभ होता है।

जनश्रुति के अनुसार द्राविड़ देश में उत्पन्न वैष्णव भक्ति को रामानन्द जी ने ही अन्यत्र लेकर आया है। पुराण, श्रीमदभागवत में भी विष्णु भक्ति का जन्म का उलेख करते हुए लिखा है–

'क्कचिन्माहाराज द्रविड़ेषु चभुरिश' - ११/५/३६-४०

भक्ति की नारद के प्रति उक्ति से प्रतीत होता है। यही भक्ति मार्ग कर्णाटक में विकशित हुआ था। महाराष्ट्र में भी भक्ति की विकास में बाधाग्रस्त नहीं हुआ था, किन्तु कलि के प्रभाव से गुजरात में भक्ति प्रचार में बाधाग्रस्त हुआ था। किन्तु कलि ग्रस्त होते हुए भी श्री कृष्ण की रम्यभूमि वृंदावन में भक्तिभाव का प्रवाह अविरत रूप में प्रवाहित होता रहा है। फिर भी कलि के प्रभाव में भक्ति की फल ज्ञान और वैराग्य यथावत विस्तार लाभ नहीं किया है। इसमें ध्यान देने की बात यह है कि "भक्ति ज्ञानय कल्पते'' भक्ति से ही ज्ञान का उदय होता है। इस ज्ञान का नाम परमात्मा निर्गुण निराकार परम ब्रह्म है। ज्ञान, परमात्मा और जीवात्मा का अभेदज्ञान। इस परम ज्ञान ही वैराग्य को उत्पन्न करता है। वेद का निर्देश यही है कि अन्यशक्ति को साथ लेकर जीवन उपभोग करना।

अही भक्ति के उदघ्य के साथ साथ जीव में ज्ञान और वैराग्य का उदय होता है इसलिए प्रस्तुत रूपक में मातृरुपी भक्ति ने अपनी पुत्रद्वय का जरा से मुक्ति लाभ हेतु नारद से उपदेश मागते हुए कहता है–

"इमौतु सयितावत्र सुतौ में क्लिष्टौमानसे।
अतिवृद्धौ है परित्याच्या गस्तुं नाहं क्षमधुनां।
अहंवाला कथं जाता सुतौ जठरौ कुतः
त्रयाणां मेकभावानां वैपरितां कुतौत्यवत।।
घटते जरठा माता वालकै तनयावती।
अतरू शोचामि चात्माहो विस्मया विस्टमानस।
यदि वेतसी धर्मक्ष कृपालु दीनमालकरू।
वद सर्व यथातत्वां कारनचं मद्भवेत''।।[4]

मानसिक दृष्टि से भी कमजोर मेरी दोनो पुत्र ज्ञान और वैराग्य पूरा जराग्रत होकर वह सो रहा है। अब में इनको छोड़कर भी कही नहीं जा सकता हूँ। आमतौर पर मातृ वृद्ध होता है और पुत्र बालक होता है। किन्तु अब में तरुणी और मेरा दोनों पुत्र वृद्ध हो गया है। इस प्रकार विपरीत दशा क्यों हो रहा है और यही मुझे चिन्ता ग्रस्त बना दिया है। और में कौतुहल की दशा में पर चुका हूँ। हे धर्मक्ष दीन दघ्याल ऐसा होने का कारण क्या है अगर आपको पता है तो मुझे कहिए। भक्ति रूपी नारी देवर्षि नारद इसप्रकार कातर आव्हान करने के बाद देवर्षि नारद भक्ति को प्रबोध देते हुए कहा कि भगवान हरि तुम्हारी मंगल विधान देगी। विस्तृत रूप से नारद द्वारा भक्ति की कहने वाली कथा का सार यही है कि–

कलि के प्रार्दुभाव में मानव भ्रष्टाचारी होकर असुर सदृश आचरण करने लगा है श्री कृष्ण के संस्पर्श का पूण्यभूमि वृंदावन के संयोग में आने के कारण तुम तरुनी बन गयी हो। किन्तु भक्ति की ग्राहक के अभाव में तुम्हारी पुत्र दोनों मृतवत हो रही है। देवर्षि नारद ने कलि काल सुलभ अधर्म का लक्षण और अवस्था वर्णन किया है और स्त्री रूपी भक्ति को प्रवोध दिया है कि पुण्डरीकाक्ष में शरण लेकर तुम सुख अनुभव कर पाओगे।

"अयस्तं युगधर्मोहस्ति दीयते कस्य दुषणम्।
अतस्तुं पुण्डरीकक्षं स्मृत्वां सौखमवास्यमि''[5] **१/१६**

स्त्री चरित्र भक्ति पुण देवर्षि से पूछते हैं–

"कथं परिक्षित राक्षा स्थापित्यौ, ध्वशुचिः कलि।
दघ्यापरेण हरिणा हयधर्म किमुपेक्षितः।।

एनं में संशेय चिद्धि तद्वाच सस्वितासभ्यहम।
तस्य वचः समाकर्ण्य भूयोहहमवदं द्विजा।''[6] १/६६-६१

हे ब्राह्मण राज परिक्षित किसलिए ऐसे अशुचि कलि को प्रतिष्ठा किया? किस लिए दघ्यावान हरि धर्म को उपेक्षा किया? मैं आपकी बात से खुस हूं। आप मेरी संशय को दूर कीजिए। भक्त की इस बात को सुनकर नारद ने दुबारा कहा-भगवान हरि श्री कृष्ण अपने स्वगृह प्रेमागमन करने के साथ-साथ कलि सत्य के बाधक रूप मैं स्थिति ले लिया। पृथ्वी जय के लिए निकलने के बाद परिक्षित ने कलि को अवलोकन किया। दीन रूप में कलि महाराज परिक्षित के शरणागत हुआ। दुष्ट कलि का एक असाधारण गुण देख लिया जिसको तपस्या, योग या समाधि से प्राप्त नही किया जा सकता। कलि युग के मानव श्रीकृष्ण केशव को नाम -कीर्तन कर प्राप्ति लाम कर सकते हैं। इस गुण को देखकर ही राजा परिक्षित कलि को मानव हित के लिए पालन किया–

"यत फलं तपस्या नैति न योगिन समाधिना।
ततफलं लभते धीमान कलौ केशवकीर्तनात
एतादृशां कलि दृष्टां सरात सारघ्फल प्रद्य।
विष्णु रातः स्थपितवान कलि जातं हिताय च।।''[7] 4/90-92

देवर्षि नारद पुणः कलि काल सुलभ अनियम, व्यभिचार और संकट का आभास देते हुए भक्ति को केवल पुण्डरीकाक्ष भगवान श्रीकृष्ण की स्मरण का उपदेश देते है। भक्ति के द्वारा पुनः पार्थित्व प्राप्त करते इस देवर्षि भक्ति की अतीत स्मरण देते हुए कहा है कि– भक्ति ही भगवन श्री कृष्ण की क्रिया प्राणाधिकरण प्रिया है। भगवान श्री कृष्ण ही भक्ति को ज्ञान और वैराग्य रूपी दो पुत्र को दिया था साथ ही दासी मुक्ति को भी प्रदान किया था। इस रूप में कथा का अन्तर्निहित तत्पर्य यह है कि हरि भक्ति ही ज्ञान और वैराग्य अनासक्ति का जन्म देता है और तब मुक्ति दासी की तरह पीछे आ जाते है अर्थात हरि भक्ति से मुक्ति अनायास प्राप्त होता है।

देवर्षि नारद भक्ति को प्रबोध देते हुए फिर कहा है - तुम चिन्ता मत करो, मैं तुम्हारे लिए चिन्ता करुंगा। हे सुन्दरी कलि के समान और कोई युग नहीं है। मैं तुमको इस युग में हर घर में, प्रत्येक जन जन में तुम्हे स्थापित करूँगा–

"तथापि चिन्तां मुचं त्वमुपायं चिन्तायमध्यम।
कलिना सादृश्यरू कोहपि युगों नास्ति वरानेन।
त्वम्सितां स्थापयिस्यमि गेहे गेहे जन जने''[8] 2/93

हे मुनिवर अब कैसे मुझे सुख का उपाय मिलेगा उसको बताओं। आप जैसा सर्वज्ञ के लिए कछ भी असम्भव नहीं है। इस प्रकार स्तुति वन्दना करते हुए भक्ति ने ध्रुव पद के अधिकारी ब्रह्मपुत्र नारद को प्रणाम किया है–

ध्रुवपद मनुयातो यत कृपातो ध्रुव वै।
तमहम रमूतं ब्रह्मपूत नतास्मि।।[9] 1/24

इस प्रकार अजनाम पुत्र हरिदेव द्वारा रचित 'भक्ति रस तरंगिनी' में निहत भागवत महात्मा नाम की प्रथम स्तवक में उपस्थापित इस रूपक तत्व गहीन-गंभीर होते हुए भी पाठक श्रोता के ह्रदय....

सन्दर्भ

1. भक्ति सूत्र : शाण्डिल्य
2. भक्ति रस तरंगिणी : श्लोक १/४८ हरिदेव
3. भक्ति रस तरंगिणी : श्लोक १/५३-५४ हरिदेव
4. श्रीमदभागवत : श्लोक ११/५/३६/४०

5. भक्ति रस तरंगिणी : श्लोक १/७६ हरिदेव
6. वही, श्लोक ६६/६१ हरिदेव
7. वही, श्लोक १/७०/७२ हरिदेव
8. वही, श्लोक २/१३ हरिदेव
9. वही, श्लोक १/८४ हरिदेव

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

The Role of MGNREGA in Enhancing Livelihood Security Among Tribal Communities: A Case Study of the Oraon Tribe in Jashpur District, Chhattisgarh

Dr. K.K. Sharma
Associate Professor, Guru Ghasidas Central University Bilaspur (C.G.)

Abstract

This research paper examines the impact of the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) on livelihood security among the Oraon tribal community in Jashpur district of Chhattisgarh. MGNREGA, launched in 2005, aims to provide at least 100 days of guaranteed wage employment to rural households. For tribal communities like the Oraons, who are historically marginalized and economically vulnerable, the scheme holds transformative potential. Through both primary and secondary data collection, this paper analyzes the effectiveness of MGNREGA in terms of income enhancement, employment generation, reduction in seasonal migration, and empowerment of marginalized groups. The study highlights successes, identifies structural limitations, and offers policy suggestions for improving MGNREGA's implementation in tribal regions.

Key words: MGNREGA, Oraon Tribe.

1. Introduction

India's tribal population constitutes about 8.6% of the total population (Census 2011), yet they remain disproportionately affected by poverty, unemployment, and underdevelopment. The Oraon tribe, one of the major Scheduled Tribes of central India, primarily inhabits the forested regions of Chhattisgarh, Jharkhand, and parts of Odisha. In Chhattisgarh, especially in districts like Jashpur, their livelihood largely depends on agriculture, wage labor, forest produce, and seasonal migration.

MGNREGA, by assuring wage employment and creating durable rural assets, is aimed at reducing rural poverty and unemployment. This research focuses on the role MGNREGA plays in securing the livelihoods of the Oraon tribe in Jashpur district and evaluates whether it has truly succeeded in its objective.

2. Research Objectives

1. To examine the extent of participation of the Oraon tribal households in MGNREGA in Jashpur district.

2. To analyze the impact of MGNREGA on income, employment stability, and migration patterns

among the Oraons.

3. To assess the gender dimension and women's empowerment through the scheme.

4. To identify challenges and gaps in the implementation of MGNREGA in tribal areas.

5. To suggest actionable policy recommendations for improving outcomes in tribal regions.

3. Hypotheses

• H• (Null Hypothesis): MGNREGA has no significant impact on the livelihood security of the Oraon tribe in Jashpur district.

• H• (Alternative Hypothesis): MGNREGA has a significant positive impact on the livelihood security of the Oraon tribe in Jashpur district.

4. Research Methodology

The study adopts a mixed-method approach with both qualitative and quantitative data collection.

Study Area: Jashpur district, Chhattisgarh – particularly blocks with high Oraon population such as Bagicha and Kunkuri.

Sample Size and Sampling Technique: 150 Oraon households selected through stratified random sampling.

Tools of Data Collection: Structured questionnaire, Focus Group Discussions (FGDs), Key Informant Interviews (KIIs) with Panchayat members and MGNREGA officials.

Data Analysis: Descriptive statistics, percentage analysis, and chi-square test were used to test the hypotheses.

5. Chi-Square Test Analysis

To statistically verify the relationship between employment through MGNREGA and the reported increase in household income among Oraon tribal families, a Chi-Square ($÷^2$) Test of Independence was conducted.

Hypothesis Formulation:

H• (Null Hypothesis): There is no significant relationship between MGNREGA employment and improvement in household income.

H• (Alternative Hypothesis): There is a significant relationship between MGNREGA employment and improvement in household income.

Observed Frequencies:

Employment Days under MGNREGA	Income Improved	No Improvement	Total
Up to 50 Days	20	25	45
51–100 Days	40	15	55
Above 100 Days	35	15	50
Total	**95**	**55**	**150**

Result: Calculated $\div^2$ = 9.87; Degrees of Freedom = 2; Critical Value (0.05 level) = 5.991

Interpretation: Since 9.87 > 5.991, we reject the null hypothesis.

Conclusion: There is a statistically significant association between number of days worked under MGNREGA and improvement in household income among Oraon tribe respondents.

6. Findings

• MGNREGA has significantly contributed to livelihood security by offering supplementary income and reducing migration.

• The scheme has empowered tribal women by creating avenues for public work and participation.

• There is a positive change in household expenditure patterns, with more being spent on education and nutrition.

• However, systemic issues like delayed wages, lack of durable assets, and poor awareness need to be urgently addressed.

7. Conclusion

MGNREGA, despite its implementation challenges, remains a cornerstone of rural employment and social protection in tribal regions like Jashpur. For the Oraon tribe, it has offered a buffer against income insecurity and marginalization. Yet, its full potential remains untapped due to administrative inefficiencies, limited participation in planning, and awareness deficits. There is a pressing need for tribal-specific strategies that ensure equitable implementation, capacity building at the grassroots level, and integration with other developmental schemes.

References

1. Dreze, J., & Khera, R. (2009). The Battle for Employment Guarantee. Oxford University Press.
2. Shah, A., & Mehta, A. (2010). Experience of MGNREGA in Tribal Regions. Economic and Political Weekly.
3. Government of India (2020). MGNREGA Annual Report. Ministry of Rural Development.
4. Census of India (2011). Office of the Registrar General & Census Commissioner.
5. Chhattisgarh MGNREGA Cell (2023). District-wise Progress Reports.
6. Planning Commission (2014). Evaluation Report on MGNREGA.
7. UNDP (2022). Human Development and Social Protection.
8. Kabeer, N. (2011). Gender and Social Protection in the Informal Economy.

==00==

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

'जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ नई' में निहित मानवीय एवं सामाजिक सरोकार

तहरीम फातमा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुज़फ्फरपुर

असगर वजाहत का नाटक 'जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ नई' सांप्रदायिक वैमनस्य की भावना को दरकिनार कर धार्मिक सहिष्णुता के विजय का आख्यान है। यह नाटक देश के विभाजन के बाद पाकिस्तान की सरजमीं पर रह गई एक बूढी हिंदू महिला तथा उसके आसपास रह रहे विभिन्न मुस्लिम परिवारों के आपसी सद्भावपूर्ण आचार-व्यवहार पर केंद्रित है। अमूमन देश के विभाजन पर लिखे गये नाटकों में विभाजन के बाद की वीभत्सता, हिंसाचार, बलात्कार, द्वेष, घृणा आदि प्रसंगों का सिलसिलेवार वर्णन रहता है। यह नाटक इस मामले में मुख्तलिफ है कि वह सांप्रदायिक सौहार्द एवं मानवीयता को मानव धर्म के रूप में स्थापित करने में सफल हुआ है। रतन की मां अपने हार्दिक स्नेह, सेवाभाव और हृदयतल की सरलता के बल पर सभी मुस्लिम परिवारों से आपसी सद्भाव कायम कर लेती है। वहीं परिवारों के सारे सदस्य 'माई' से आंतरिक प्रेम करने लगते हैं और उनके बारे में काफी उच्च विचार रखते हैं। इन परिवारों में सबसे अहम है सिकंदर मिर्जा का परिवार। समग्र नाटक का फोकस रतन की मां के साथ मिर्जा परिवार तथा अन्य मुस्लिम परिवारों के मेलजोल एवं आपसी मधुर संपर्क पर केंद्रित है। नाटक के अंत को छोड़कर धार्मिक हिंसाचार का चित्रण बिल्कुल नदारद है। यही इस नाटक में नया एवं प्रगतिशील दृष्टिकोण है।

भूमिका

देखा जाए तो हिंसाचार का वर्णन हकीकत का बयान तो करता है लेकिन सांप्रदायिक प्रवृत्ति से निकलने का रास्ता नहीं दिखाता। धार्मिक तत्ववाद का समाधान क्या हो, यह नहीं सुझाता। तो दूसरी ओर यह हिंसक मनोवृत्ति में इजाफा भी करता है। जिस प्रकार जनसंचार माध्यमों में हिंसा के लाइव कवरेज से दहशत एवं आक्रामक सोच की बढ़ोतरी होती है, वैचारिक एवं सीधे हिंसाचार में वृद्धि होती है, उसी प्रकार नाटक में कत्लेआम के दृश्य एवं उसका सनसनीखेज वर्णन इंसान के मन में वैमनस्य और असमानता की भावना का संचार करता है। असगर वजाहत का मानना है कि हमें अपनी दृष्टि भविष्य की ओर रखनी चाहिए। दंगे और कत्लेआम से निकलकर भाईचारे के संपर्क को सुदृढ़ करना चाहिए। हम हिंसाचार के वर्तमान परिदृश्य को परंपरा मानें या हमारी मिश्रित सभ्यता के सुदीर्घ इतिहास को? इतिहास गवाह है कि हम सदियों से मिलजुल कर रहते आए हैं।

आम तौर पर सांप्रदायिक दंगों, कत्लेआम एवं जातिसंहार के मूल में वर्ग और धार्मिक भेदभाव की अग्रिम भूमिका होती है। हालांकि इतिहासकारों ने यह माना है कि दंगों के पीछे की बड़ी वजह धार्मिक समुदाय होते हैं। इस नाटक के जरिए असगर वजाहत इस बात को उकेरते हैं कि हर धर्म में सहिष्णु तत्व है जो शांति और सद्भाव के साथ रहने का संदेश देता है। हर

धर्म घृणा और विद्वेष का विरोध करता है। कोई भी धर्मग्रंथ अन्य धर्म, जाति या संप्रदाय के लोगों को आक्रमण करने, उन्हें जलील करने, उनसे घृणा करने या उनकी हत्या करने का उपदेश नहीं देता। लेकिन निहित स्वार्थी शक्तियां अपने मकसद के लिए हर धर्म का अपने विचार के पक्ष में इस्तेमाल करती है। ऐसी ताकतें हर धर्म का संकुचित क्षेत्रियतावादी अर्थ निकालती हैं और गरीबों, बेघरों, अशिक्षितों के पास जाकर इसका खूब प्रचार-प्रसार करती हैं। इस प्रकार इंसान के ऊपर धर्म को तरजीह दी जाती है। इंसान के नागरिक अस्मिता के ऊपर धार्मिक अस्मिता को महत्व दी जाती है। लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता के बजाय पृथकतावाद को महत्व दिया जाता है। पृथकतावाद साझा संस्कृति की बजाय अलगाववादी संस्कृति का हिमायती है। धर्म विभाजनकारी नहीं है लेकिन वह तभी घातक चेहरा धारण करता है जब उसका घालमेल राजनीति से होने लगता है।

प्रगतिशील चिंतक डॉ. असगर अली इंजीनियर के अनुसार, “भारत-विभाजन में जनसमुदाय की कोई रुचि नहीं थी। ना वे शक्ति-संरचना का हिस्सा थे ना ही उनमें अलगाव की कोई इच्छा थी। याद रहे, पृथकतावाद धार्मिक प्रवृत्ति नहीं बल्कि राजनीतिक प्रवृत्ति है। जनसमुदाय में उस समय भी एकता थी और आज भी है लेकिन राजनीतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक अभिजात वर्ग में पर्याप्त मत-वैभिन्न्य था, जिनका लक्ष्य था राजनीतिक सत्ता के माध्यम से अपनी किस्मत चमकाना। जनता ने तंगहाली और विपत्तियों का सामना साझा तरीके से किया... सन् 1909 में ब्रिटिश शासकों ने जिस नए निर्वाचक वर्ग पर कार्यभार डाला, उसने अलगाववाद की नींव रखी और यह अलगाववाद धर्म का उत्पाद नहीं था बल्कि प्रतियोगिता की राजनीति का उत्पाद था। इस प्रकार धर्म मूल रूप से विभाजक नहीं होता। वह किसी राजनीतिक संदर्भ में ही विभाजक की भूमिका अदा करने लगता है।”[1]

जब मनुष्य की अस्मिता पर धार्मिक अस्मिता हावी हो जाती है तो सांप्रदायिक मानसिकता जन्म लेती है। धर्म और धार्मिकता में विशेष अंतर है। धर्म व्यक्तिगत चीज है लेकिन जब धर्म व्यक्ति की अंदरूनी आस्था की चीज से आगे बढ़कर सामाजिक रूप अख्तियार करने लगता है तब उसकी भूमिका बदल जाती है। प्रो. जगदीश्वर चतुर्वेदी के अनुसार, “धर्म ने सहिष्णु बनाया, मानवीय बनाया, सामंजस्यवाद और सम्मिश्रण पर जोर दिया। इसके विपरीत धार्मिकता ने असहिष्णु, अमानवीय, दौलत का दास और उपभोक्ता बनाया। धर्म जोड़ता है जबकि धार्मिकता तोड़ती है... धार्मिकता वस्तुतः पूंजीवाद का प्रमुख वैचारिक अस्त्र है। यह धर्म के उपभोक्ताओं का भावात्मक तौर पर एकीकृत समूह है। इसकी परिवर्तन में कम और प्रदर्शन में ज्यादा आस्था है।”[2]

धर्म में निहित सहिष्णु विचार एवं उदात्त स्वरूप को नाटक में कई बार पात्रों के बीच वार्तालाप के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। कट्टरपंथी सोच के पहलवान को मौलवी कहते हैं, “देखो पुत्तर हुक्मे इलाही है कि अगर कोई तुमसे पनाह मांग, तुम्हारी हिफाजत में आना चाहे तो उसको पनाह दो, उसकी हिफाजत करो... पुत्तर जुल्म को जुल्म से खत्म नहीं कर सकदे. .. नेकी, शराफत, ईमानदारी से जुल्म खत्म होंदा है।”[3] आगे मौलवी पहलवान को नेक सलाह देते हुए कहते हैं, “लड़ना ही है तो अपने नफ्स से लड़ो... वही सबसे बड़ा जिहाद-सी... खुदगर्जी, लालच, आरामो असाइश से लड़ो... बेसहारा ते बूढी औरत नाल लड़ना इस्लाम नहीं है।”[4] पहलवान जब रतन की मां को हिंदू और बेवा कहता है तो मौलाना इस्लाम धर्म के नियम समझाते हैं, “बेवा का दर्जा तो हमारे मजहब में बहुत बुलंद है... हदीस है कि बेवा और गरीब के लिए दौड़-धूप करने वाला दिन भर रोजा और रात भर नमाज पढ़ने वाले के बराबर है।”[5] नाटककार ने आगे लिखा है– “पुत्तर, इस्लाम ने बहुत से हक ऐसे दिए है जो तमाम इंसानों के लिए हैं... उसमें मजहब, रंग, नस्ल और जात का कोई फर्क नहीं किया गया।”[6] असगर वजाहत धर्म और धार्मिकता में निहित अंतर को उपरोक्त संलाप के द्वारा स्पष्ट करते हैं।

धर्मग्रंथों में जो लिखा है उसका पठन एवं पाठन कट्टरपंथी शक्तियां नहीं करती। वे धार्मिकता को ही धर्म मानकर चलती हैं तथा नफरत को ही एकमात्र सत्य मानकर उसका पालन करती है। नफरत का बीजवपन राजनीतिक आकाओं या निहित स्वार्थी संगठनों द्वारा किया जाता है जिससे उनके राजनीतिक फायदे प्रशस्त हो पाए। पहलवान जैसे लोग इनकी गलत शिक्षा के वशीभूत होकर तमाम आपराधिक हथकंडे अपनाते हैं और सांप्रदायिक जहर का खुलेआम समर्थन करते हैं। यह धर्म का राजनीति से जुड़ाव है जिसके फलस्वरूप धार्मिकता आकार लेती है। इस प्रकार सांप्रदायिकता सिर्फ राजनीति से ही नहीं

आपराधिक कृत्यों से भी मजबूत होता है। इस मायने में वह राजनीतिक ही नहीं आपराधिक संवृत्ति भी है।

नाटक के आरंभ में रतन की मां को हमीदा बेगम 'बुढ़िया' कहकर संबोधित करती है किंतु आगे चलकर रतन की मां मिर्जा परिवार द्वारा 'माई', 'दादी' जैसे प्रेमसूचक संबोधनों से पुकारी जाती है। शुरु में हमीदा बेगम रतन की मां को चोटी पकड़कर हवेली से निकालने की बात कहती हैं, बेटी तन्नो को अपने परिवार का काम निकालने के लिए 'दादी' कहकर पुकारने की सलाह देती हैं। उस वक्त मिर्जा परिवार को क्या पता था कि इस बूढी के साथ रक्त संबंध न होते हुए भी वह उनके लिए इतनी मकबूल हो जाएंगी। जब सिकंदर मिर्जा रतन की मां को जहन्नुम वासिल करने की बात करते हैं तो उत्तेजित होकर हमीदा बेगम सिकंदर मिर्जा से सवाल करती है, "हाय मेरे अल्लाह, इतना बड़ा गुनाह... जब हम किसी को जिंदगी दे नहीं सकते तो हमें धीनने का क्या हक है?"[7] आगे चलकर नाटक में जब पहलवान रतन की मां को मारने की धमकी देकर जाता है तो पूरा मिर्जा परिवार मिलकर माई की हिफाजत में जुट जाता है।

दूसरी ओर रतन जौहरी की मां को जब पता चलता है कि उनके भारत न जाने के कारण कुछ कट्टरपंची शक्तियां मिर्जा परिवार और खासकर तन्नो और जावेद को क्षति पहुंचा सकती हैं तब वह रात में बिना किसी को सूचित किए लाहौर छोड़ने के लिए दृढ़संकल्प होती हैं लेकिन नासिर, हमीद और मिर्जा परिवार की हार्दिकता उन्हें रोक लेती है। रतन की मां विभिन्न तरीकों से मिर्जा परिवार तथा अन्य परिवारों की लगातार मदद करती रहती हैं। यह परस्पर सोहबत का संबंध जो बढ़ता है तो क्रमशः पुख्ता होता जाता है। सवाल यह है कि एक इंसान दूसरे इंसान से क्या चाहता है? एक इंसान की पहचान किन-किन चीजों से तय होती है? इंसान अपनी मृत्यु के पश्चात किन-किन वजहों से लोगों के जेहन में जगह बनाता है और याद किया जाता है? उसके धर्म के कारण या जाति के कारण? संपत्ति के कारण या संप्रदाय के कारण? या उसके कर्म के कारण? दरअसल इंसान का कर्म महत्वपूर्ण है, उसका मजहब नहीं। कर्म इंसान की पहचान है, जाति या संप्रदाय नहीं। यही इस नाटक का मूल पैगाम है। माई के अंदर नेकनीयती, परोपकारिता, सत्यनिष्ठा और धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण जैसे गुण मौजूद हैं। सारे मुस्लिम परिवारों के संकट के दौरान मानवीय संवेदना के तहत माई जा-जाकर मदद करती रही। यही वजह है कि माई के अपने परिवार से बिछुड़ने की पीड़ा को सभी महसूस कर पाए। माई की आकस्मिक मृत्यु की घटना पर सभी बराबर पीड़ा में डूब जाते हैं स तकी कहता है, "मरहूमा का एक-एक लम्हा दूसरों के लिए ही होता था... कभी अपने लिए कुछ न मांगा...।"[8]

माई की मृत्यु के बाद उनकी अंतिम क्रिया के लिए सारे मुसलमान बेटे सामान इकट्ठा करते हैं। यह भूलकर नहीं कि वह हिंदू थी, इसे मानते और अनुभूति से समझते हुए। इसका एकमात्र कारण था रतन की मां का सबकी विपत्ति में शरीक होना, सबकी सेवा-शुश्रूषा करना। हमीदा बेगम रतन की मां के बारे में सिकंदर मिर्जा से कहती हैं, "माई घर में रहती ही कहां है। तड़के रावी में नहाने चली जाती है। सुबह अलीक साहब के यहां बड़ियां डाल रही है, तो कभी नफीसा को अस्पताल ले जा रही हैं, तीसरे पहर बेगम आफताब के लड़के की तीमारदारी कर रही हैं तो शाम को सकीना को अचार-डालना सिखा रही है... रात में दस बजे लौटती है। हम लोगों से मुलाकात हो तो कैसे हो। मोहल्ले के बच्चे की जबान पर माई का नाम रहता है। द्वार मर्ज की दवा है माई।"[9]

इंसान का नेक कर्म उसके चरित्र का निर्माण करता है। उसकी मृत्यु के पश्चात भी उसकी स्मृति को समाज वहन करता चलता है। जब माई की लाश की आखिरी रस्म अदायगी की बात आती है तो मौलाना सभी पड़ोसियों को हिंदू रीति-नीति से अंतिम संस्कार की हिदायत देते हैं। हालांकि पहलवान नफरत से भरी बातें करता है और इसे कुफ्र आदि कहता है लेकिन मौलाना बाकियों को परामर्श देते हैं, "उसकी मय्यत के साथ आप लोग जो सुलूक चाहे कर सकते हैं. उसे चाहे दफना दीजिए, चाहे टुकड़े-टुकड़े कर डालिए, चाहे गर्यो आबे कर दीजिए, इसका अब उस पर कोई असर नहीं पड़ेगा.. उसके ईमान पर कोई आंच नहीं आएगी... लेकिन आप उसके साथ क्या करते हैं, इससे आपके ईमान पर जरूर फर्क पड़ सकता है।"[10]

नाटक में नासिर साहब के साथ अलीम का वार्तालाप मजहबी कट्टरतावाद की कई परतों को खोलकर पेश करता है और एक नई बात हमारे सामने रखता है। नासिर साहब अलीम से पूछते हैं, "देखो तुम क्या इसलिए मुसलमान हो कि जब

तुम समझदार हुए तो तुम्हारे सामने हर मजहब की तालीमात रखी गई और कहा गया कि इसमे से जो मजहब तुम्हें पसंद आए, अच्छा लगे, उसे चुन लो?''[11] अलीम के 'नहीं' में उत्तर देने पर नासिर साहब उन्हें समझाते हैं, "इसका मतलब है. तुम्हारा जो मजहब है उसमें तुम्हारा कोई दखल नहीं है... तुम्हारे मां-बाप का जो मजहब था वही तुम्हारा है।"[12]

कहीं-कहीं नॉस्टेलजिया का मर्म भी नाटक में मौजूद है। खासकर नजीर और अलीम के हृदयाकाश में हिंदुस्तान के परिवेश की कई छोटी-छोटी स्मृतियां लगातार उड़ान भर रही थीं। इन स्मृतियों को वे अंतर्मन के संदूक से निकालते है जिन्हें उन्होंने करीने से संजोकर रखा था और पाकिस्तान की धरती में उन्हें खोजते हैं। मिल जाने पर हिंदुस्तान के प्राकृतिक परिवेश के साथ उसकी तुलना करते हैं कि कहां तक पाकिस्तान में हिंदुस्तान वाली बात है। भारत से पाकिस्तान रहने आए लोगों के अंदर छूटे हुए वतन की आब-ओ-हवा, कुदरत की खूबसूरती, यहां की हर चीज में भरी हुई है जिसकी तलाश दिल और आँखों को रहती है इसे असगर वजाहत ने लफ़्ज़ों में उतारा है। श्यामा चिड़िया, सरसों के खेतों की खोज से लेकर कई अनन्य चीजें हैं जो इंसान के मन में एक अविरत आकर्षण छोड़ जाता है। वे स्मृतियां स्मृतिपटल से निकलकर लाहौर के परिवेश में हकीकत-ए-मंतजिर बनना चाहती हैं। नासिर और हमीद से अलीमा कहता है, "जब में यहां शुरु-शुरु में आया तो उन सब चीजों की तलाश थी जिन्हें दिलो जान से चाहता था. सरसों के खेतों से भी मुझे इश्क है.. तो भाई मैने लाहौर आते ही कई लोगों से पूछा था कि क्या सरसों यहां भी वैसी ही फूलती है जैसी हिंदोस्तान में फूलती थी। मैंने ये भी पूछा था कि यहां सावन की झड़ी लगी है.. बरसात के दिनों की शामें क्या भोर की झंकार से गूंजती है? बसंत में आसमान का रंग कैसा होता है?''[13] इस प्रसंग में सबसे महत्वपूर्ण है अलीमा का यह वाक्य है, "शाम चिही मैं आपको दिखाऊंगा... मैंने उसे यहां तलाश किया है... उसकी तलाश मेरे लिए तरक्की पसंद अदब और इस्लामी अदब से बड़ा मसला था..।"[14]

इस प्रसंग को छेड़कर असगर वजाहत यह समझाते हैं कि पाकिस्तान यानी मुस्लिम देश और भारत यानी हिंदू बाहुल्य देश जैसी विभाजन रेखा सन् सैतालीस में नेताओं द्वारा खींची गई जिसका भयावह और गमजदा अंजाम हमें देखने को मिला। जनसाधारण का इस तरह के भौगोलिक और धार्मिक विभाजन से कोई संबंध न था। जिस देश में लोग रहते हैं वहीं उसका मन, उसकी आत्मा बस जाती है, उसे उसी जगह से राब्ता और प्रेम हो जाता है। लाहौर के प्रति रतन की मां का प्रेम, लखनऊ के प्रति हमीदा बेगम का बेइंतहा लगाव इसे प्रमाणित करता है। जनता की बेबसी को नाटक में पूरी मार्मिकता से उभारा गया है। जो भारत में रह रहे थे उन्हें अपनी जायदाद, पुरखों का मकान, अपनी आत्मा छोड़कर पाकिस्तान की ओर जाना पड़ा है। इसी तरह जो पाकिस्तान के विभिन्न हिस्सों में रह रहे थे उन्हें भी विभाजन के बाद मजबूरी में अपनी अजीज जगह, संपत्ति आदि छोड़कर भारत आना पड़ा है। यह जितना पीड़ादायक था उतना ही तकलीफदेह भी। ऊपर से देखने पर लगता है कि यह केवल देश बदलना था लेकिन इसका गम कायिक, मानसिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक स्तर पर पसरा हुआ था। इस त्रासदी की प्रतिध्वनि नाटक की इन पंक्तियों में सुनाई देती है और नतीजे में "हिंदोस्तां बंट गया/ ये जमी बंट गई, आसमां बंट गया/ तजे तहरीर, तर्ने बयां बंट गया शाखे गुल बंट गई, आशियां चंट गया/हमने देखा था जो ख्वाब ही और था. अब जो देखा तो पंजाब ही और था।''[15]

अपरिचित देश में अजनवी की तरह आकर अपना जीवनयापन करना भी कष्टसाध्य था। इसीलिए जनसाधारण की सुविधा के लिए शरणार्थी कैंप खोले गए। लेकिन शरणार्थी कैंप की गुमनाम जिंदगी से लोग हलकान थे और जल्द-से-जल्द कोई स्थाई बंदोबस्त चाहते थे। कुल मिलाकर भारत और पाकिस्तान की सरजमीं पर उस समय ग़मज़दा और त्रासद परिवेश था।

माई का अंतिम संस्कार भी हिंदू रीति-नीति से की जाती है। इसके लिए स्मृतियों का सहारा लिया जाता है। नासिर, सिकंदर मिर्जा, मौलाना को जितना याद रहा, वे दाह-कार्य के हिंदू नियम बताते हैं और तकी, कब्बन, मिर्जा परिवार मिलकर इसे रूप देने की व्यवस्था करते हैं। दरअसल असगर वजाहत यह याद दिलाना चाहते हैं कि हिंदुस्तान की संस्कृति चूंकि मिश्रित संस्कृति एवं मिश्रित परंपरा पर आधारित रही है स इसीलिए लोग एक-दूसरे की संस्कृति एवं परंपरा से इत्तेफाक रखते

आए हैं। भले ही हर संप्रदाय के तौर-तरीके अलग हो लेकिन वे हजारों सालों से पुल-मिल कर रहते आए थे। इसीलिए एक-दूसरे के नियमों से वास्ता रखते आए हैं। सियासी राजनीति के कारण घृणा का संचार किया गया और मिली-जुली संस्कृति के ऊपर इकसार संस्कृति को थोपने की जबरन कोशिश की गई। रतन की मां के जनाजे को मुसलमान कंधों पर 'राम नाम सत है, यही तुम्हारी गत है' कहते हुए ले जाया गया। कठमुल्ला पहलवान हिंदू रीति-नीति से अंतिम संस्कार के तरीके को मान नहीं पा रहा था। यह सब देखकर पहलवान के अंदर बसा धार्मिक तत्ववाद का जहर विकराल रूप धारण करता है। उसके अंदर का प्रतिशोध प्रबल हो उठता है। वह अलीमा से कहता है, "अलीमा... खून खौल रिया है... पट्टे फड़क रहे ने... कसम खुदा की... ए आग ऐंज नई बुझेगी.. ऐज नई बुझेगी...।''[16] मौलाना के पाक सलाहों का पहलवान पर कोई असर नहीं पड़ता। अंततः इस्लाम धर्म के सारे कायदे-कानून को ताक पर रखकर पहलवान, मौलवी की हत्या कर देता है।

निष्कर्ष

सांप्रदायिकता मूलतः आधुनिक काल की पैदाइश है। ब्रिटिशकाल में भारत की अखंडता को तोड़ने के लिए सांप्रदायिकता की बैसाखी का सहारा लिया गया। आगे चलकर इसे सरकारी संरक्षण देकर इसकी साख मजबूत की गई। बकौल असगर अली इंजीनियर भारत-विभाजन जनता की समस्या से संबंधित राजनीति का परिणाम नहीं था, यह सत्ता से संबंधित राजनीति का परिणाम था जिसने विभाजनकारी भूमिका अदा की तथा जिसके कारण आज सांप्रदायिकता की जड़े भारत में इतनी मजबूत हो पाईं। सांप्रदायिकता अनेकरूपा है, बावजूद इसके उसका लक्ष्य एक है... वह है सामाजिक विभाजन पैदा करना तथा राष्ट्रीय एकता को खंडित करना।

माई को लेकर प्रगतिशील खयालातों के शायर नासिर और कट्टरपंथी पहलवान के बीच जब बातचीत होती तो असगर वजाहत मानवाधिकार के सवाल को उठाते हैं। रतन की मां द्वारा दीवाली मनाने को पहलवान पीर-इस्लामी कर्म' कहता है तो नासिर सवाब देते हैं, "भई आप माई के दीवाली मनाने को गैर-इस्लामी जो कह रहे हैं, वो अपने हिसाब से कह रहे हैं। वो हिंदू हैं उन्हें पूरा एक है अपने मजहब पर चलने का।"[17]

साम्प्रदायिक परिवेश में सबसे ज्यादा उल्लंघन मानवाधिकार और मानवीय मूल्यों का होता है। सांप्रदायिक ताकतें व्यक्ति को महत्त्व न देकर उसके धार्मिक पहचान को महत्व देती हैं। ऐसे परिवेश में जनतांत्रिक संस्थाएं, जनतांत्रिक अधिकार आदि मूल्यहीन हो जाते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि हम मुस्लिम अस्मिता या हिंदू अस्मिता की कोटि से बाहर निकले और मनुष्य की अस्मिता के नजरिए से मनुष्य को पहचाने। जातिगत और धर्मगत आधार पर इंसान को पहचानने का परिणाम है अभेद से भेद की ओर कदम बढ़ाना जबकि हमारा उद्देश्य है हर किस्म के भेद को स्वीकारते हुए भेदहीन मानव-मात्र की प्रतिष्ठा करना। जाति, संप्रदाय, लिंग, नस्ल के भेद को दरगुजर कर मनुष्यता तक पहुंचना, मनुष्य बनना और अन्य को मनुष्य मानना है। असगर वजाहत का यह नाटक उपरोक्त सन्दर्भों को बहुत ही साहसिक तरीके से उद्घाटित करने में सफल रहा है।

संदर्भ

1. इंजीनियर, असगर अली, धर्म और साम्प्रदायिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 74
2. चतुर्वेदी, जगदीश्वर, मीडिया समग्र (भाग -5), स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 57
3. पल्लव (सं) वजाहत,असगर वजाहत संचयन, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली (भाग-2), पृ. 82
4. वही, पृ. 87
5. वही, पृ. 100
6. वही, पृ. 105
7. वही, पृ. 107

8. वही, पृ. 110
9. वही, पृ. 93
10. वही, पृ. 111
11. वही, पृ. 115
12. वही, पृ. 90-91
13. वही, पृ. 103
14. वही, पृ. 103
15. वही, पृ. 62
16. वही, पृ. 114
17. वही, पृ. 97

नई सदी, पुरानी बेड़ियाँ : शिक्षित समाज में दलितों की स्थिति और रजत रानी मीनू की दृष्टि

रेमीसा सी.यु.
शोधार्थी, हिंदी विभाग, श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय कालडी (केरल)
ईमेल: remeesacu7@gmail.com
मोबाईल : 8089260731

शोध सारांश

साहित्य अपने मौलिक रूप में और स्वरूप में सिर्फ साहित्य होता है। वह दलित अथवा गैर-दलित की दायरे से सर्वथा मुक्त है। किन्तु कालांतर में विघटित होती गई मानव-समाज की निरंतरता और उसमें समाहित होती गई ऊँच-नीच, जाति-पाँति, पाखंड इत्यादि मनुष्य-द्रोही अवगुणों ने साहित्य की असीमता का भंजन कर दिया और साहित्य को प्रत्येक वर्ग, समुदाय और समाज की सीमाओं के भीतर खींच लिया। ऐसे में स्वतंत्र रूप से दलित साहित्य का आविर्भाव होना एक अनिवार्य एवं स्वाभाविक प्रक्रिया माना जा सकता है। वर्त्तमान समय में दलित साहित्य, सदियों से बहिष्कृत समाज के प्रतिरोध का सबसे प्रखर अभिव्यक्ति का रूप धारण किया है। भारतीय साहित्य को समृद्ध बनाने हेतु दलित साहित्यकारों ने महत्वपूर्ण सृजनात्मक योगदान निभाया है और दलित साहित्य को एक नवीन विमर्श में रूपांतरित किया है। समकालीन हिंदी साहित्य में रजत रानी मीनू, दलित लेखिका के रूप में विशेष रूप से प्रतिष्ठित हैं। उनकी लेखनी के केंद्र में अधिकारों से वंचित, जातिगत भेदभाव से पीड़ित जनताओं के संघर्ष का स्वर गूंज उठते हैं। वे अपने रचनाओं के माध्यम से मुख्यधारा समाज के दलित-विरोधी हरकतों का खुलासा करती है, जो वर्त्तमान युग में भी मनुस्मृति काल की वापसी के कांक्षी हैं।

मुख्य शब्द - समकालीन, दलित, कहानी, रजत रानी मीनू, संघर्ष, जाति, हाशियेकृत।

प्रस्तावना

भारतीय साहित्य में विशिष्ट रूप में प्रतिष्ठित दलित साहित्य की नींव क्रांतिकारी नेता बाबासाहेब अंबेडकर की विचारधारा मानी जाती है। भारतीय साहित्य को समृद्ध कराने में दलित साहित्यकारों की भूमिका अनिर्वचनीय है। जातिगत न्याय केलिए संघर्ष के रास्ते में दीप जलाने हेतु दलित रचनाकारों ने अपनी कलम को तेज किया। समकालीन संदर्भ में इसकी संस्कारिक प्रासंगिकता को नज़र में रखते हुए गैर - दलित रचनाकारों ने भी इस साहित्य धारा की गति को तीव्र किया है। तुलसी राम लिखते है - 'आत्मकथा को छोड़कर कोई भी लेखक, गैर - दलित अन्य साहित्यिक विधाओं में दलित जीवन का चित्रण कर सकता है और उसे दलित साहित्य ही माना जाना चाहिए।'[1] बहरहाल साहित्य की सभी विधाएं दलित चेतना को सहर्ष स्वीकार किया है। इस वजह से भारतीय साहित्य में दलित साहित्य एक विमर्श का रूप धारण करते हुए एक समृद्ध अनुसंधान शाखा में बदल गया है।

मशहूर साहित्यिक पत्रिका 'वागर्थ' के लिए दिए गए साक्षात्कार में मोहनदास नैमिशराय ने बताया है - 'केवल यदार्थ का वर्णन करना ही दलित साहित्य नहीं है। इसके अलावा दलित साहित्यकार को बहुत सारी चीजें कागजों पर उतारनी होती है। इस मामले में मैं उनका समर्थन करता हूँ। दलित साहित्यकारों को बहुत सारी नई चीजों की तरफ बढ़ना चाहिए। समय बदल रहा है, परिस्थितियाँ बदल रही है और दलित और सवर्ण जाति के बीच में कुछ मेल-मिलाप की भावना भी आ रही है। ये तमाम परिस्थितियाँ है, दलित साहित्यकारों को उनसे सबक लेना चाहिए। उन्हें बेहतर तरीके से अपनी रचनाधर्मिता को सामाजिक सरोकारों के साथ आगे बढ़ाना चाहिए।'[2] हाल के दलित साहिय में रचनाकारों का दृष्टिकोण बदला हुआ नज़र आता है। पूर्वजों की गुलामी की अमिट छाप हेतु वर्तमानकाल में भी चिंताओं के सांकल्पिक दुख की घुटन से वे कबके रिहा हो चुका है। नए प्रणालियाँ एवं पद्धतियों के आविष्कार में संलग्न समकालीन दलित साहित्य को मात्र 'विलाप साहित्य' घोषित करना अन्याय होगा। जबकि यह सच भी है की तिरस्कृत प्रतिभाओं ने अपनी पीड़ा को ज़रूर व्यक्त किया हैं। आत्मानुभव की मात्रा कुछ बढ़ने से अभिजात वर्ग का इस साहित्यधारा पर आरोप लगाना उचित नहीं हैं। क्योंकि अब इसमें प्रतिरोध के प्रखर स्वर की गुंजाइश है।

'दलित कौन है?' यह सवाल अरसों से भारतीय समाज में मौजूद है। भारतीय संविधान द्वारा दलितों को कानूनी हिफाजत दिए जाने के बावजूद भी सामाजिक स्तर पर दलितों को अब भी उचित दर्जा हासिल नहीं हुआ है। 'इस सच्चाई से वस्तुतः मुह नहीं मोड़ा जा सकता कि भारत में दलितों का तिरस्कार व बहिष्कार सीमाहीन रहा है। दलितों पर बर्बर अत्याचार सर्वाधिक हुए हैं, सर्वत्र हुए हैं और भारत की राजनीतिक स्वाधीनता के बाद भी ये अत्याचार हो रहे हैं।'[3] पैदा होते ही अपने को बढ़तर समझनेवाले लोगों का दलितों से व्यवहार जानवरों से भी बदतर तरीके से है। यह क्रूर रवायतों का सिलसिला ऐतिहासिक काल से लेकर आधुनिक काल तक जारी है। ऊँची तालीम हासिल अध्यापक वर्ग भी इस पाखंडीपन से पूर्ण रूप से रिहा नहीं हुए है। इस पर सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय जैसे कई पहलुओं का असर है। पाखंडी मनोभावों पर टिकी भारतीय शिक्षाप्राणाली की संकीर्ण रास्तों के हर एक मोड पर एक एक दलित विद्यार्थी की खून की बूंदें कायम हैं। 'मैं लिखना चाहता था, हमेशा से, विज्ञान के बारें में, कार्ल सांग की तरह। और आखिर में बस यह खत (आत्महत्या का) हैं जो मैं लिख पा रहा हूँ।'[4] यह पंक्तियां हैदराबाद विश्वविद्यालय की शोधार्थी रोहित विमुला ने लिखा था। जो दलित होने के नाते अपने ही कमरे से बहिष्कृत हुए थे। 17 जनवरी 2016 को छात्रावास के एक कमरे में उसने खुद फाँसी लगायी। इसी तरह गवर्नमेंट मेडिकल कॉलेज चंडीगढ़ के विद्यार्थी जसप्रीत सिंह और उसकी बहन ने भी शिक्षकों की जालिम हरकतों के कारण अपनी जान की कुर्बानी की। 2008 से लेकर 2011 तक में हुए इस तरह की 17 घटनाओं के सबूत 'डेथ ऑफ मेरिट' नामक डॉक्युमेंट्री में दिए जाए थे। सवर्ण मानसिकता के शिकार होते गए दलित विद्यार्थियों की कहानी भारत केलिए कोई नई बात नहीं है।

रजत रानी मीनू समकालीन महिला दलित साहित्यकारों में विख्यात हैं। 2012 में प्रकशित उनकी कहानी संग्रह 'हम कौन हैं?' मुख्यधारा समाज के दलित विरोधी हरकतों के खुलासे के साथ- साथ अपने अधिकारों से वंचित, जातिगत भेदभाव से पीड़ित जनताओं के संघर्ष को भी चित्रित करते है। 'हम कौन है?', 'भाईचारा', 'गिरोह' आदि इस कहानी संग्रह कि कुछ प्रमुख कहानियां हैं , जो विशिष्ट रूप से आधुनिक शिक्षित वर्गों के दलित विरोधी हरकतों का पर्दाफाश करती हैं।

'हम कौन है?' कहानी में यह दिखाया गया है कि सवर्ण दृष्टि की संकुचित सीमा से नर्सरी स्कूल की बच्ची भी बाहर नहीं है। बालिका अजातिका कक्षा के पहले दिन ही जातिगत भेदभाव का शिकार हो जाती है। अजातिका मतलब, जिसकी कोई जाति नहीं है। लेकिन इस कहानी द्वारा यह सिद्ध होता है कि हिन्दू समाज में जातिविहीन होकर रहना और भी मुश्किल है। कोई बिना जाति के रहना भी चाहे, तो रह नहीं सकता। आधुनिक शिक्षा और पाश्चात्य संस्कार से प्रभावित पब्लिक स्कूल कि अध्यापिका एक अबोध बालिका से उसकी सरनेम पूछती है। सरनेम पूछना आधुनिक ढंग से जाति पूछना ही तो है। शायद भारत ही ऐसा देश होगा जहां शिक्षित और अशिक्षित सभी की जिज्ञासा इस विषय पर कुछ ज्यादा है।

अपने पूर्वजों से विरासत में मिली जन्मना श्रेष्ट होने की मिथ्या भावना से ग्रसित सवर्ण लोगों को अपने संपर्क में आनेवाले व्यक्तियों की जाति जाने बिना हरगिज राहत नहीं मिलता। बिना सरनेम वाली अजातिका कक्षा के दूसरे दिन ही भारतीय समाज

की अनुसूचित जातियों में अपनी पहचान पाती है। उसके सहपाठियों के नाम के आगे मिश्रा, गुप्ता आदि खानदानी चिह्न लगाए हुए थे। इसलिए वह घर आकर अपनी माँ से पूछती है -'मम्मी मेरी इतनी सारी फ्रेंड्स है - शालिनी मिश्रा , दीपिका गुप्ता ,चन्द्रिका तोमर, हबीबा बानू, गुरमीत कौर, रोज़ मेरी। इन सब से सरनेम क्यों नहीं पूछा जाता? मैम मुझसे ही बार बार सरनेम क्यों पूछती हैं?'[5] अगले दिन ही उसे किसी वॉलनटियर दीदी से पता चलता है कि - 'जो सरनेम नहीं लगाते वह नीची जाति के होते है।'[6] वह बालिका को जातिगत फर्क मालूम हो जाती है। और माँ के हजार बार उस बात को टालने की कोशिशों के बावजूद वह बार-बार अपनी अस्तित्व के सवाल पूछती है - 'मम्मी, बताओ न क्या होती हैं नीची जाति? हम कौन हैं?'[7]

हमारे बीच प्रचलित एक वहम है, जाति-पाँत की संकीर्ण भावना सिर्फ गाँवों में निहित है। प्रगतिशील सोच और जीवन रीति के नाते शहरीय ज़िंदगी बितानेवाले लोग अपने को जातिविहीन घोषित करते हैं। इसी संकीर्णता से मुक्त स्वतंत्र जीवन की लालच में भारी संख्या में लोग गाँवों से शहर की ओर पलायन करते है। सवर्ण मानसिकता से सदियों से घिसी-पिटी संस्कार का उन्मूलन लगभग असंभव्य है। इसका उत्तम उदाहरण हैं कहानी 'भाईचारा'। 'भाईचारा' एक अपार्टमेंट का नाम है, जहां मिश्रा, माथुर, पाठक इत्यादि सवर्ण लोग रहते है। उस अपार्टमेंट में चमार जाति के एक लेखक और उसकी पत्नी रहने केलिए आते हैं। लेखक की पत्नी नीता आस-पड़ोस की कुछ महिलाओं से मुलाकात होने के बाद उनके निमंत्रण पर कठोर जातिवादी महिला गीतांजलि पाठक की अपार्टमेंट में जाती है।

गीतांजलि पाठक गपशप के दौरान अपने कुछ संस्मरण सुनाने लगती है - 'एक बार हमारे गाँव से एक धोबी का लड़का आया। वह पढ़ा लिखा भी था. यदि उसे खाना न खिलाओ तो भी बुरी बात है। मैं बड़ी असमंजस्य कि स्थिथि में फँस गयी। क्या करूँ क्या नहीं। तब मुझे याद आया कि हमारे पास एक प्लास्टिक कि प्लेट और कटोरा पड़ा था जिसमें हम अपने प्यारे डॉनल (कुत्ता) को खाना खिलाते थे। उसके मरने के बाद उसकी याद में उसके बर्तन संभल कर रखे थे। मैं ने वे बर्तन निकाले, उसी में परोसकर उसे खाना खिलाया।'[8] नीता को यह असह्य लगती है। उसे ऐसा महसूस होने लगती है कि उसे ही कुत्ते को खिलाये गए बर्तन में खाना खिलाई है। नीता के वहां से जाने के बाद जब गीतांजलि पाठक को पता चलती है कि नीता दलित थी, तो उसे उबकाई आने लगती है। जिस सोफे पर नीता बैठी हुई थी वह उसे बदबूदार महसूस होने लगती है। वह तुरंत ही एक डंडे से सोफे पर रखी सारे गद्धियाँ और कुशन हटाकर बालकनी में खिसका देती है। कुछ दिन बाद उस अपार्टमेंट में एक 'सह्भोज' कार्यक्रम आयोजित किये जाते है, उसमें लेखक के परिवार को बहिष्कृत करते है। 'भाईचारा हमरे अपार्टमेंट की खास विशेषता है, इसलिए तो सोच समझकर इसका यह नाम रखा हैं.'[9] यह कथन अपने आपमें हास्यास्पद हो जाते है। कहानी की शीर्षक 'भाईचारा' हवा बनकर उड़ जाता है।

भ्रष्टाचार और अनैतिकता वर्तमानकालीन भारत में मामूली- सी बात है। जीवन के हर स्तर पर यह होता आ रहा है और शिक्षा जगत भी इससे भिन्न नहीं। कहानी 'गिरोह' अकादमिक भृष्टचार और विकृतियों का खुलासा करता है। ब्राह्मणवादी विचारधाराओं से ग्रसित कुछ युवा लोग कक्षा में उच्च स्थान हासिल करने और आसानी से नौकरी पाने केलिए सवर्ण होते हुए भी अपने को एस.सी साबित करनेवाले नकली प्रमाणपत्र बनवाते हैं। इस के लिए युवक राजबहादुर का चाचा सहायता और प्रोत्साहन देते हैं, जो कि इसी रास्ते से सफलता हासिल की हो। 'तुम्हारे लिए नौकरी का रिस्क क्या, अरे ज़िंदगी भी दाँव पर लगे तब भी हम आरक्षण नीती को विकृत, निष्क्रिय करने में कमी नहीं छोड़ेंगे।'[10] इस तरह चोरी से दलितों की सुविधाओं को हड़पनेवाले वर्ग के प्रति रजत रानी मीनू हमें अवगत कराती है।

'दलित साहित्य वंचितों की पक्षधरता का साहित्य है। यह वर्ण-व्यवस्था और जातिवाद के खिलाफ है। इसकी मान्यता है कि दुनिया मेंमनुष्य सर्वोपरि है। सब मनुष्य समान है।'[11] इसको उल्लंघन करते देखकर वर्तमानकाल में चुप रहना इन रचनाकारों केलिए नामुमकिन है। 'दलित साहित्य एक ओर वंचना के कारण होनेवाली हृदय विदारक यातनाओं को उद्गार प्रदान करता है और उसके साथ जिस सामाजिक व्यवस्था ने दलितों पर यह जीवन लादा उस समाज व्यवस्था के प्रति रोष प्रकट करता है।'[12]

निष्कर्ष

रजत रानी मीनू की कहानियां यथार्थवादी है। उनकी कहानियां सदियों से वंचित, जाति से आहत दलित समाज के अंतहीन संघर्षों का जीवंत दस्तावेज है। इन कहानियों में यह दिखाया गया है कि दलित चाहे जितना भी पढ़ो-लिखो, ऊंची तालीम और अधिकार हासिल करो, बौद्ध धर्म का आवरण ओढ़ो या अपने को जातिविहीन घोषित कर लो, कर्मकाण्डी सवर्ण दृष्टि में वे दलित ही बने रहेंगे। मुख्यधारा समाज के पाखंडी मनोभाव दलितों को हमेशा अपना सामजिक स्तर याद दिलाता रहेगा। आधुनिक युग में उच्च शिक्षा प्राप्त अध्यापिकाओं और पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित शहरीय लोगों के दलित विरोधी हरकतों का खुलासा करते हुए रजत रानी मीनू यही दिखाने कि कोशिश कर रही है कि नयी सदी में भी दलितों के पैर में पुरानी बेड़ियाँ मौजूद है। उनकी कहानियां इसका सही साक्ष्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अपनी माटी, ई पत्रिका, अंक 19, 2000
2. मोहनदास नैमिश्रय से प्रदीप कुमार ठाकुर की बातचीत, वागर्थ पत्रिका, अक्तूबर 2022, पृ.97
3. डॉ. बीआर धर्मेन्द्र, दलित चेतना के विविध सोपान(2016), अचिन्त प्रकाशन, पृ.109
4. अविनाश पाण्डेय, एशियन ह्यूमन राइट्स कममीशन, डॉक्युमेंट आई डी- ए एच आर सी-ए आर टी -004-2016
5. रजत रानी मीनू, हम कौन हैं(2012), वाणि प्रकाशन, पृ.19
6. वही, पृ.19
7. वही, पृ.20
8. वही, पृ.93
9. वही, पृ.85
10. वही, पृ.121
11. डॉ. रश्मि चतुर्वेदी, दलित विमर्श के आलोक में (2013), सरस्वती प्रकाशन, पृ.59
12. डॉ. विजयकुमार रोडे, उत्तरशती के उपन्यासों में दलित विमर्श (2014), पृ.43

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

संत रज्जब की काव्य-चेतना

डॉ. संजय कुमार यादव
सहायक प्राध्यापक
राम लखन सिंह यादव कॉलेज
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में निर्गुण धारा के संत कवियों की एक सुदीर्घ और प्रभावी काव्य-परंपरा रही है, जिसने अपनी उत्कृष्टता और वस्तुगत उपादेयता से हिन्दी काव्य-जगत को समृद्ध और विस्तृत किया है। निर्गुण संत कवियों में नाम-भक्ति की परंपरा की सूक्ष्म और चेतन धारा सदैव प्रवाहित होती रही है, जिसमें कई संतों के साथ संत कवि रज्जब का नाम उल्लेखनीय और विचारणीय है।

संत रज्जब भी दादूदयाल जी के प्रधान भिष्य थे। इनके जीवन के बारे में बहुत सारी किंबदंतियाँ और लोक कथाएँ विश्रुत हैं। श्री दादू पंथ परिचय के आधार पर रज्जब का जन्म विक्रमी संवत् 1624 (सन 1567 ई०) चैत्र माह में सांगानेर में हुआ। कहा जाता है कि एक पठान चाँद खाँ को यह बालक जंगल में एक निर्जन स्थान में मिला। वह निस्संतान था। उसने इस बालक को रज्जब अली खाँ नाम दिया और तत्कालीन परंपरा के अनुसार इन्हें व्यायाम, कुश्ती तथा अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा भी प्रदान की। रज्जब सुडौल और आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी थे। वे बचपन से ही जिज्ञासु प्रवृति के थे और उनके भीतर ज्ञान प्राप्ति की लगन थी। साधु-संतो एवं फकीरों की संगति और भगवद् चर्चा में इन्हें अत्यंत आनंद की अनुभूति होती थी।[1] रज्जब के पठानवंशीय होने के पक्ष में अलग-अलग मत प्रचलित हैं, परंतु यह तथ्य सर्वमान्य है कि मुगलों के शासनकाल में भारत के उत्तर-पश्चिमी प्रदेश में पठानों का अधिक आना-जाना था। रज्जब के के पिता चाँद खाँ पठान थे और आमेर में सेना के उप-सेनानायक थे। इसके अतिरिक पठानों के नाम के अंत में 'खाँ' लगाने की परंपरा आज भी प्रचलित है। अतः रज्जब के मूल नाम (रज्जब अली खाँ) के अंत में जोड़ा गया 'खाँ' शब्द भी उन्हें पठान वंश का मानने के लिए ठोस प्रमाण प्रस्तुत करता है।[2]

जनगोपाल द्वारा लिखित दादू जन्म लीला परची के अनुसार दादू जी आमेर में 1579-1591/93 ई. तक (संवत् 1636 से संवत् 1648 या 1650) रहे। इसी बीच रज्जब उनसे मिले और उनके शिष्य बने।[3] आचार्य परशुराम चतर्वेदी ने लिखा है- 'दादूदयाल जी के देहान्त के बाद जब तक रज्जब जी, सुन्दरदास और बनवारीदास जैसे शिष्य जीवित रहे, उनकी मूल बातों की ओर लोगों का ध्यान अधिक आकृष्ट रहा।'[4]

> **"रज्जब तैं गजब किया, सिर पर बांध्या मौर।**
> **आया था हरिभजन को, चला नरक की ठौर।"[5]**

संत रज्जब के जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना उनके विवाह के समय घटी जिसने उनका जीवन बदल दिया। सोलह वर्ष की आयु में उनका विवाह आमेर के एक प्रतिष्ठित पठान कुल में तय हुआ। बारात जब मावठा सरोवर पहुँची तो दादूदयाल के आश्रम पर रुकी। रज्जब उनके दर्शन के लिए गए और उनके सामने बैठ गए। दादू ने उनपर कृपा दृष्टि डालते हुए कहा—

"कीया था इस काम कौं, सेवा कारण साज।
दादू भूला बंदगी, सरया न एकौ काज।"[6]

इतना सुनते ही रज्जब ने अपना मौर-मुकुट उतारकर अपने छोटे भाई अज्जब अली खाँ के सर पर रख दिया और बोले- "जाओ तुम विवाह कर लो, मैं अब विवाह नहीं करूँगा।"[7] सब लोगों ने समझाया, परंतु रज्जब ने कहा—

''रज्जब त्यागी घर घरनी, पर नारी न सुहाय।
अहि अपनी तज काँचुली, का की पहरे जाय।"[8]

इसके बाद दादूदयाल ने रज्जब को अपना शिष्य स्वीकार कर लिया और उपदेश देकर मानव जीवन के लक्ष्य का बोध कराया। इसके बाद रज्जब ने संत परंपरा को अपने अनुभव से प्राप्त ज्ञान से अपनी वाणी के रूप में समृद्ध किया।

रज्जब ने अपनी वाणी में संतों के उपदेश के मूल सिद्धांतों की बड़ी स्पष्ट व्याख्या की है। उनका मानना है कि संत-महात्मा किसी भी मजहब, मुल्क या समय में क्यों न अवतरित हुए हों, उनका उपदेश एक समान होता है। मिसाल के तौर पर अद्वैत की चर्चा करते हुए रज्जब इस पहलू पर बल देते हैं कि साँई सबका एक है, परंतु अफसोस! दुनिया इस बात से बेखबर है। इसी तरह वे समझते हैं कि परमार्थ का खजाना हमारे अंतर में है और भरपूर है, जरुरत है तो केवल उस खजाने तक पहुँचने की। यह खजाना हमें एक देहधारी सतगुरु की शरण में जाकर ही प्राप्त हो सकता है। आंतरिक साधना में गुरु और गोबिन्द के प्रति प्रेम, शरण, विनती और प्रार्थना आवश्यक है। प्रेम ही सच्ची इबादत है, जो भल को उसकी मंज़िल तक पहुंचाता है। एक सच्चा प्रेमी ही विरह की धधकती हुई अग्नि में कूद सकता है। प्रेम से भरे भक्त की पुकार ही सच्ची विनती और प्रार्थना है।[9]

रज्जब ने सामान्य जीवन से उदाहरण प्रस्तुत करके संत मत के पथ को प्रशस्त किया है और आम जन को सचेत और जागरूक बनाने का कार्य किया है। वे दृष्टांत देगे में अत्यंत निपुण हैं। उनके दृष्टांत ही उनकी वाणी के शृंगार है।

रज्जब मानव जीवन की मुक्ति हेतु मानव देह को ही साधन मानते हैं। देह के बिना मानव कुछ नहीं है। इस देह में ही सारे रत्न भरे पड़े हैं, जिनके सदुपयोग से मानव-जीवन को धन्य बनाया जा सकता है।

"रज्जब रतनौं सौं भरी, मानहुँ मनिखा देह।
रे नर निर्धन हो गया, चौरासी की गेह।
आदम देह अलभ्य धन, पाई पूरण भाग।
तो रज्जब भगवत भज, हरि सुमिरण लौ लाग।
मनिखा जन्म राम बिन हारा, मानहुँ पारस पीस पहुघमि पर डारा।
सेवा सोना तिनहुँ न होय, या सम हानि नहीं कलि कोय।
प्राण पाणि पूंजी सु पिंड, मूल सु मिनखा देह।
रज्जब सौदा राम सौं, इहिं अवसर करि लेह।
पारस पौरस कल्पतर, कामद धेनु कहात।
मनुष्य देह माधव मिलत, महिमा कही न जात।''[10]

रज्जब एक ईश्वर के अस्तित्व में आस्था रखते हैं। वे भक्तों को समझाते हैं कि एक को पाये बिना हम अनेक ही रह जायेंगे। सबका स्वामी एक ही है, जो सबमें समाया हुआ है। आवश्यकता है उस एक को पहचानने की।

वे कहते हैं—

"रज्जब रमघ्ता राम वज, जाय कहाँ किस ठौर।
सकल लोक एक ही धरणि, नहिं साहिब कोउ और।
रज्जब राजी एक सौं, दूजा दिल न समाय।
देखो देही एक में, है जीव रहे न आय।

एक आतमा राम इक, एक हि हित चित होय।
इजा दोस्त क्यों करै, दिल दोन्ह नहिं दोय।''[11]

रज्जब सद्गुरु के महत्त्व को समझते हैं और सारे संसार को भी समझाते हैं कि सद्गुरु के बिना इस भवसागर से पार नहीं हुआ जा सकता है। अतः आवश्यक है कि समय रहते हम सद्गुरु को प्राप्त कर लें–

''रज्जब रहिये राम में, गुरु दादू के सुप्रसाद।
नातर जाता देखतों, जन्म अमोलक बाद।
दादू दीन दयालु गुरु, सो मेरे शिर मौर।
जन रज्जब उनकी दया, पाई निश्चल ठौर।
गुरु दादू सौ गमभयी, समझाया सिरजनहार।
रज्जब राते राम से, छूटे विषय विकार।
जन रज्जब युग युग सुखी, गुरु दादू की दाति।
आप समागम कर लीये, भयी निरंजन जाति।''[12]

रज्जब सदसंगति का महत्व समझते हैं और सलाह देते हैं कि मनुष्य को सदैव संतों की संगति करनी चाहिए। साधु और संत मनुष्य के कल्याण हेतु ही जीवन धारण करते हैं। संतों के दर्शन मात्र से ही परमात्मा की याद आने लगती है। देह, मन और प्राण सभी के दुरूखों की एक ही दवा है- संत दर्शन।

"ज्यों शिल सूखी नदी में, जड़ी तुम्बिका बेल।
सो रज्जब सहघ्जै तिरे, त्यों सत्संगति मेल।
रज्जब पलटे जीव सुध, साधू संगति आय।
पारस लोहा पहुप तिल, एक चन्दन बन राय।
तन मन सिमटे सहज ही, जो सत्संगति होय।
जन रज्जब दृष्टांत को, बेलि लजालू जोय।
साधू अभूघ्ली भूलिये, भूल्या आवे याद।
यहु रज्जब सत्संग फल, देखर दीज्यो दाद।
चिदानन्द का चिन्तवन, चौरासी में नाँहि।
जन रज्जब सो पाइये, साधू संगति माँहि।"[13]

मन चंचल है इसीलिए इसमें तरह-तरह की तरंगें उठती रहती हैं। यह न कभी एक पदार्थ से संतुष्ट होता है न ही एक स्थान पर टिकता है। पल-पल अपनी सोच बदलते रहता है- ष्पल-पल में पलटै मते, जैसी विधि किरकांट।" यह एक ऐसा भिखारी है, जो कभी संतुष्ट नहीं होता। मन बड़ा ही चंचल है, जिस पर नियंत्रण करना अति आवश्यक है। रज्जब कहते हैं कि तन धोने और तीर्थों में जाकर स्नान करने से भी कुछ नहीं होगा, अगर मन का मैल मन में ही रह जाय तो–

"तन धोया फिर तीरथों, मैल रह्या मन मांहि।
रज्जब पातक प्राण में, क्यों उर के अध जांहिं।
नाम बिना निर्मल नहीं, बहु विधि करै उपाय।
रज्जब रज किसकी गई, दह दिशि तीरथ न्हाय।
दह दिशि दौड़े दूरि को, भ्रम भ्रम तीरथ न्हाहिं।
रज्जब राम न सूझ हीं, जो इस काया माँहिं।
मनिष मीन सम व्है रहे, अड़सठ तीरथ न्हाय।
पै रज्जब रज नहिं उतरै, दुरमति बास न जाए।"[14]

रज्जब प्रेम को साधना का मूल मंत्र मानते हैं। कहते हैं कि जैसे वृक्ष की जड़ जमीन में फैलती है और पानी मिल जाता है, वैसे ही जब आत्मा में प्रेम उतरता है तब परमात्मा मिल जाते हैं। वे कहते हैं कि प्यार, प्रीत, हित, स्नेह और मुहब्बत चाहे जो कहिये सब प्रेम ही है, बस मन, वचन और कर्म से एकनिष्ठ बने रहना ही प्रेम की असली पहचान है–

"रज्जब रमि रमि राम सौ, पीवै प्रेम अघाय।
रसिया रसमय ह्वै रह्या, सो मुख कह्या न जाए।
हरि दरिया में मीन मन, पीवै प्रेम अगाध।
महा मगन रस में रहै, जन रज्जब सो साध।
रज्जब पावक प्रेम है, कंचन आतम राम।
गाल मिलावै दुहिन को, प्रेम करे यह काम।
प्रेम प्रीति हित नेह के, रज्जब दुविधा नाँहिं।
सेवक स्वामी एक ह्वै, आये इस घर माँहिं।"[15]

रज्जब परमात्मा को पाने के लिए विरह की आग में जलना भी स्वीकार करते हैं। वे कहते हैं कि विरह दसवें कुल का नाग है, अर्थात नौ कुल के नागों के काटने का इलाज है, परंतु विरह रूपी दसवें नाग के काटने का कोई इलाज नहीं है। जैसे प्रियतम से बिछुड़ कर विरहिणी का हृदय फटने लगता है, वह कुछ दिन रोती है, परन्तु परमात्मा का ज्ञान होने पर उसे आनंद आने लगता है, हृदय में अखंडित प्रेम की फुहार बनी रहती है। जहाँ विरह की आग प्रकट हो जाती है, वहाँ विषय-भोगों का प्रेम और मन की कुटिलता सब नष्ट हो जाते हैं–

"साधु शब्द श्रवणों सुने, विरह वियोगी बैन।
तब तैं वेधी आतमा, रज्जब परै न चैन।
कबहूँ सो दिन होयगा, पीव मिलेगा आय।
रज्जब आनंद आतमा, त्रिविध ताप तन जाय।
विरहिन बिहरै रैन दिन, बिन देखे दीदार।
जन रज्जब जलती रहै, जाग्या विरह अपार।
बादल विरह वियोग के, दर्द दामिनी माँहिं।
रज्जब घट ऐसी घटा, भैझड़ भागे नाँहिं।
रज्जब कहिये कौन सौं, इस विरहा की बात।
मानहुँ रावण की चिता, अह निभि नहीं बुझात।
विरहा पावक उर बसे, नख शिख जारे देह।
रज्जब ऊपर रहम कर, वर्षहु मोहन मेह।
विरही बालक गूंग पशु, काहि कहै दुख सुख।
रज्जब मन की मन रही, लहै न मारग मुख।"[16]

रज्जब गुरु की कृपा का महत्त्व समझते हैं और वे तैंतीस करोड़ देवताओं को त्यागकर गुरुरुपी आज्ञा रूपी अंगुली से चक्री की तरह बँध कर कुत्ते जैसा संतोष धारण करने के लिए तैयार हैं। वे अग्नि-परीक्षा हेतु तैयार हैं। वे कहते हैं- 'अगर जीव परमात्मा से रुठकर दुनिया के खेल तमाशों में लीन हो जाए तो भी परमात्मा शरण में आये जीव को बरबाद नहीं होने देते। जिस प्रकार नदियाँ अपना सारा पानी सागर को समर्पित करके अपने अस्तित्व को समाप्त कर लेती हैं, उसी तरह तन-मन गुरु को सौंपकर मुक्त हो जाना चाहिए। जब तक अग्नि काठ के सहारे रहती है और काठ अग्नि के सहारे रहता है, दोनों का कल्याण होता है, परंतु जैसे ही काठ से अग्नि अलग होकर प्रकट हो जाती है, दोनों का अकल्याण हो जाता है। जैसे सीप समुद्र के जल को त्यागकर स्वाति को ग्रहण करता है, उसी तरह हमें भी संसार के मोह को त्यागकर प्रभु की कृपा का ही

भरोसा करना चाहिए। सतगुरु की शरण में जाने से काम-क्रोध आदि कभी न मरनेवाले शत्रु भी धीरे-धीरे मर जाते हैं और शील-संतोष आदि मित्र जी उठते हैं—

"साँचे के शरणे बचौ, सूत पान दिव देत।
तो रज्जब सुन साध का, शरणा क्यों नहीं लेत।
जलनिधि में जलचर बड़े, तो सौ योजन देह।
सो भी शरणे सलिल के, मन मत मानी चेह।
अठारद भार अंधियार को, देखो दीपक खाय।
सो रज्जब शरणे बिना, वायु लागि बुझ जाय।
लिहूँ काल ताकै शरण, तन मन काचे जानि।
आश्रम बिन अंतक उदय, प्राण पिण्ड ह्वै हानि।
अग्नि आश्रय काष्ट के, काष्ट सु शरणे आग।
जुदे होत जीवसौं गये, रहें एकठे लाग।"[17]

रज्जब ने अपनी वाणी में कर्मकांडों का जोरदार शब्दों में खंडन किया है ताकि हम सचेत हो जाएँ और विचार करें कि असलियत क्या है। दिखावे की भक्ति का खंडन करते हुए वे कहते हैं- "रज्जब मन मूंडे बिना, शिर मूंडे कछु नाँहिं।" रज्जब की वाणी का प्रभाव सुननेवालों पर गहरे पड़ता है। उनमें दृष्टांत देने की अद्‌भुत क्षमता है। इसके संबंध में एक लोक विश्रुत किंबदंती है कि यह निपुणता उन्हें अपने गुरु के आशीर्वाद से प्राप्त हुई थी।[18] जैसे मन की निर्मलता हेतु यह दृष्टांत—

"रज्जब सेवा संत की, मन मैले करि कीज।
सो कृषि कैसे नीपजे, भून जु बाद्या बीज।"[19]

संत रज्जब के बारे में 6 जनवरी 1987 को राजस्थान पत्रिका में नन्दकिशोर पारिक ने 'नगर परिक्रमा' लेख की पहली कड़ी में 'महात्मा दादू के पठान शिष्य' शीर्षक से लिखा।[20] रज्जब जी की वाणी का प्रकाशन दादू महाविघ्यालय के संस्थापक स्वामी सेवादास ने कराया। संत रज्जब के संबंध में बनारस हिन्दू विश्वविघ्यालय के एक डच विद्वान भी डबल्यू. एम. कौलवर्ट ने 'द सर्बांगी ऑफ द दादूपंथी रज्जब' पुस्तक लिखी है।[21] डॉ. नन्दकिशोर पांडेय ने 'संत रज्जब' और ब्रजेन्द्र कुमार सिंहल ने 'रज्जब की सरबंगी' पुस्तक लिखी है।[22] संत रज्जब का उल्लेख आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने 'उत्तरी भारत की संत परंपरा'[23] में और गोपाल नारायण बहुरा ने 'राजस्थान का संत साहित्य'[24] में भी किया है। इसके अलावा भी संत रज्जब के बारे में काफी कुछ लिखा गया है।

संत रज्जब की काव्य-चेतना की अन्विति और संरचना को समझने के लिए हमें उनके संपूर्ण जीवन, जीवन में घटित घटनाओं और उनकी वाणियों में निहित उनके संदेशों को दृष्टिपथ में रखना अनिवार्य है। रज्जब ने अपनी वाणी में प्रश्नों द्वारा, दृष्टांतों द्वारा अपनी काव्य-चेतना का परिचय दिया है। उन्होंने अपने दोहों में 'कही विचार करि', 'समझ देख मन माहीं' और 'देखि जीव में जोड़ि' जैसे पदों का प्रयोग किया है। उनकी वाणी के ये शब्द जिज्ञासु को चिंतन के लिए आमंत्रित करते हैं। उन्होंने अपनी बातें अपने अनुभवों को आधार बनाकर कही हैं- "रज्जब ज्यों थी त्यों कही, ता में फेर न सार' और 'जन रज्जब साँची कही, ता में फेर न सार।" रज्जब की वाणी गूढ़ रहस्यों से भरपूर तथा चित्रकारी की तरह मनमोहक और सुंदर है। उनकी काव्य-चेतना परमात्मा के अद्वैत स्वरूप वर्णन, अध्यात्म का निधान, सद्‌गुरु मार्गदर्शन, संपूर्ण शरणागति, शुद्ध आचरण और जीवात्मा के वास्तविक अस्तित्व की पहचान से निर्मित है।

संदर्भ-सूची

1. श्री दादू पंथ परिचय, स्वामी नारायण दास, प्रथम भाग, जयपुर, श्री दादूदयाल महासभा, सं.-1967, पृष्ठ-4
2. संत कवि रज्जब (संप्रदाय और साहित्य), डॉ. ब्रजलाल वर्मा, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, प्रकाशन- सं.

1965
3. दादू जन्म लीला परची, जनगोपाल, विश्राम-16, श्रीलक्ष्मी राम ट्रस्ट, जयपुर, 2006, पृष्ठ-188-89
4. दादूदयाल ग्रन्थावली, स. परशुराम चतुर्वेदी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं.-1966, भूमिका, पृष्ठ-10
5. संत रज्जब, जनक गोरवानी रा. स. व्यास, सं-2014, पृष्ठ-15.
6. दादूदयाल की बानी, भाग-1, पृष्ठ-99
7. श्री दादूचरितामृत, नारायण दास स्वामी, पृष्ठ-325
8. श्री रज्जब वाणी, नारायण दास स्वामी, पुष्कर : नारायण सिंह शेखावत, अजमेर, प्र.-सं. 1967, पृष्ठ-112.
9. संत रज्जब, जनक गोरवानी, रा.स. व्यास, सं-2014, पृष्ठ-11-12
10. श्री रज्जब वाणी, नारायण दास स्वामी, अजमेर, प्र.- सं.1967, पृष्ठ- 489 490
11. उपरिवत, पृष्ठ-412
12. उपरिवत, पृष्ठ-4
13. उपरिवत, पृष्ठ-208-209
14. उपरिवत, पृष्ठ-226-228
15. उपरिवत, पृष्ठ-429-432
16. उपरिवत, पृष्ठ-87-88
17. उपरिवत, पृष्ठ-521-522
18. संत रज्जब, जनक गोरवानी, रा.स.व्यास, सं.-2014, पृष्ठ-12
19. रज्जब की सरबंगी, डॉ. ब्रजलाल वर्मा, उपमा प्रकाशन, दूसरा संस्करण, कानपुर, 1963, पृष्ठ- 76
20. राजस्थान पत्रिका, नगर परिक्रमा, जयपुर, 1987
21. द सरबंगी ऑफ दादूपंथी रज्जब, विनांड कैलवर्ट, बेल्जियम, 1978
22. रज्जब की सरबंगी, ब्रजेन्द्र कुमार सिंहल, रायगढ़, प्र.सं-2010
23. उत्तरी भारत की संत परंपरा, इलाहाबाद, साहित्य भवन प्रा. लि. 1964
24. राजख्यान का संत साहित्य, भी गोपाल नारायण बहुरा राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, संस्करण-2002

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'रश्मिरथी' खंडकाव्य में वर्णित समस्याओं की विवेचना

डॉ. सुषमा माधवराव नरांजे
सहयोगी प्राध्यापक (हिंदी विभाग)
श्रीमती रेवाबेन मनोहरभाई पटेल महिला कला महाविद्यालय, भंडारा (महाराष्ट्र)
मोबाईल नंबर- 9881679234
ईमेल- sushamanaranje@gmail.com

भूमिका : मनुष्य का कोई भी कार्य निरुद्देश्य नहीं होता। साहित्य के निर्माण में भी यही सिद्धांत लागू होता है। वस्तुतरू दिनकरजी का खंडकाव्य 'रश्मिरथी' एक विशिष्ट उद्देश्य को लेकर लिखी गयी काव्यकृति है। काव्य को पढ़ने के बाद कवि के सामने महाभारत के चिर-परिचित पात्र कर्ण के चरित्र का पुनर्मूल्यांकन करना तथा उसके माध्यम से आधुनिक जगत की ज्वलंत समस्याओं का निराकरण पाठकों के समक्ष लाना ही मुख्य उद्देश्य प्रतीत होता है। इस खंडकाव्य में कवि ने जातिभेद की समस्या, युद्ध की समस्या, धर्म के निर्वाह की समस्या आदि के संबंध में गहन चिंतन किया है। इसमें कवि ने अतीत को नया स्वर प्रदान किया है तथा इसमें सत्प्रेरणा, कर्मयोग, सदाचरण की प्रतिष्ठा करते हुए कवि ने हमारे सांस्कृतिक प्राचीन गौरव की रक्षा की है। आज के युग की ज्वलंत समस्याओं के सन्दर्भ में पौराणिक पात्रों का पुनर्मूल्यांकन करके, जीवन को नई दिशा, नई गति प्रदान करना ही कवि का उद्देश्य है। प्रारम्भ से लेकर अंत तक कवि ने काव्य में मानवतावादी दृष्टिकोण को अपनाया है।

विस्तृत विवेचन : प्रत्येक रचना का अपना एक प्रयोजन हुआ करता है। 'रश्मिरथी' की रचना के पीछे भी निश्चय ही प्रयोजन दृष्टि रही है। वस्तुतरू 'रश्मिरथी" एक विशिष्ट उद्देश्य को लेकर लिखी गयी काव्य रचना है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। वह अपने युग का प्रतिबिंब होता है। समाज से अलग होकर साहित्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती। 'रश्मिरथी' में महाभारत के युग की समस्याओं का विवेचन किया गया है किन्तु वे केवल उसी युग की समस्याएँ नहीं हैं बल्कि वे आज के युग में भी कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में विद्यमान हैं।

कर्ण के उपेक्षित किन्तु तेजस्वी चरित्र का सजीव चित्रण करना इस काव्य का उद्देश्य अवश्य है किन्तु साथ में कवि ने इस काव्य में कर्ण के व्यक्तित्व-निरूपण के माध्यम से वर्त्तमान युग की बहुत-सी समस्याओं के संबंध में गहन चिंतन भी अभिव्यक्त किया है। 'रश्मिरथी' में परंपरागत महाभारत के पात्र कर्ण की कथा के साथ-साथ विचारात्मकता का भी संयोग किया है। 'रश्मिरथी' की मूल समस्या, सामाजिक एवं आर्थिक आधारों पर किये गए जातिभेदों एवं वर्णभेदों की समस्या है। आज भी यह समस्या किसी न किसी रूप में दिखाई देती है। आधुनिक युग में व्याप्त सामाजिक विषमताओं, नैतिक मूल्यों में गिरावट आदि के मूल में मनुष्य की स्वाथी प्रवृत्ति और वैभव-विलास के संचय की मनोवृत्ति है। आज सर्वत्र हताशा, निराशा और असंतोष ही दिखाई देता है जो कि स्वयं में सामाजिक अन्याय का परिचायक है। इस काव्य में कवि दिनकरजी ने इन्हीं तत्वों का विवेचन

किया है। इस खंडकाव्य में आधुनिक परिप्रेक्ष्य में वर्णित जिन समस्याओं को चित्रित किया गया है ये निम्नलिखित हैं—

१. जातिभेद की समस्या : 'रश्मिरथी' में सर्वप्रथम जातिभेद की नीति की आलोचना की गयी है। कर्ण के माध्यम से कवि ने यह सिद्ध किया है कि जाती अथवा वंश की उच्च्य परंपराएं ही जीवन को उन्नत नहीं बना सकतीं। मानव उन्नती के लिए केवल उच्च्य जाति अथवा वंश का होना पर्याप्त नहीं है। वस्तुतरू मानव जीवन में कर्म का ही अत्याधिक महत्व है और कर्म द्वारा ही कोई भी व्यक्ति या तो उंचा उठ सकता है या फिर वह समाज में तिरस्कृत होता है तथा सर्वत्र ही उसकी निंदा होती है। अतरू मनुष्य की जाति का निर्धारण उसके कर्मों द्वारा होता है। इसीलिए द्रोणाचार्य द्वारा कर्ण से उसकी जाति और वंश के बारे में पूछे जाने पर कर्ण कहता है—

"पूछो मेरी जाति, शक्ति हो तो, मेरे भुजबल से,
रवि सामान दीपित ललाट से, और कवच कुंडल से।''

इन पंक्तियों में कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि यदि कोई व्यक्ति निम्न वर्ग का है पर वह सत्कर्म करता है तो उसे अपनी उन्नती का पूरा अधिकार है। मनुष्य की वास्तविक जाति उसके सत्कर्म, उसका पौरुष आदि होते हैं। कवि ने यह प्रतिपादित किया है कि समाज में छोटे-बड़े सभी को उन्नति के समानाधिकार मिलना चाहिए। उन्नति के लिए मनुष्यों में भेद करना युक्ति संगत नहीं है।

२. न्याय और अन्याय का द्वंद्व : कर्ण को बचपन से ही अन्याय का सामना करना पड़ता है। न तो उसे शिक्षा पाने का पूरा अधिकार दिया गया, न ही सम्मान। उसकी योग्यता को न्याय नहीं मिलता, जो एक बड़ी नैतिक समस्या को दर्शाता है। कुँवारी माता की कोख से जन्म लेने के कारण और सूत वंश में पालन-पोषण होने के कारण जन्मतरू उच्च्य कुल का होने के बावजूद उसे जीवन भर जातिभेद का दंश सहना पड़ा। पराक्रमी और शूरवीर होते हुए भी युवावस्था में वह अर्जुन से केवल इसलिए द्वंद्व नहीं पाता क्योंकि वह क्षत्रिय नहीं है। परशुराम भी उसके द्वारा अर्जित की गयी संपूर्ण शस्त्रास्त्र विद्या भूल जाने का श्राप देकर कर्ण के साथ अन्याय ही करते हैं। मानव ही नहीं वरन देवराज इंद्र भी छल से उसके कवच-कुंडल छीनकर उसके साथ अन्याय ही करते हैं तभी तो कर्ण कहता है

देवराज! हम जिसे जीत सकते न बाहु के बल से,
क्या है उचित उसे मारें हम न्याय छोड़कर छल से?

३. नायक और खलनायक की सीमाएँ : 'रश्मिरथी' में कर्ण को एक नायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जबकि पारंपारिक दृष्टिकोण से वह दुर्योधन का सहयोगी होने के कारण खलनायक माना जाता है। यह रचना इस सीमारेखा को तोड़ती है और दिखाती है कि परिस्थितियाँ किसी को नायक या खलनायक बनाती हैं। उत्तराधुनिक युग में तो गुणों और अवगुणों से युक्त व्यक्ति ही समाज का नायक बनता हुआ दिखाई देता है। परन्तु प्राचीन काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण से नायक के गुणों की अवधारणा पर कर्ण पूरी तरह से खरा नहीं उतरता। दिनकरजी ने 'रश्मिरथी' के माध्यम से कर्ण के रूप में उत्तराधुनिक नायक का चित्रण किया है। अतरू कर्ण में निहीत मानवोचित गुणों-अवगुणों के कारण वह खलनायक होते हुए भी नायक सदृश्य हमारे सामने आता है।

४. राजनीति और नैतिकता का टकराव : कर्ण का दुर्योधन के पक्ष में खड़ा होना, द्रौपदी वस्त्र-हरण जैसी घटनाओं पर चुप रहना—ये सभी प्रश्न उठाते हैं कि व्यक्ति को राजनीति में कितनी नैतिकता बनाये रखनी चाहिए।

५. नारी अपमान की समस्या : कर्ण का द्रौपदी के प्रति व्यवहार (उसे वेश्या कहना) एक गम्भीर सामाजिक समस्या की ओर संकेत करता है। इसमें नारी अस्मिता और पुरुष सत्ता का द्वंद्व झलकता है। उच्च नैतिक गुणों से युक्त होने के बावजूद कर्ण का यह कथन नारी के प्रति उसके कुत्सित दृष्टिकोण को इंगित करता है। पांडवों से जुए में हारने के बाद कौरव सभा में जब द्रौपदी लायी जाती है और उसके चीरहरण का प्रयास होता है तो कर्ण न सिर्फ इसका दृष्टा रहता है वरन वह दुर्योधन को यह कुकर्म करने से रोकने की कौन कहे, किंचित बढ़ावा ही देता है। कर्ण का यह कार्य ऐसा है जिसे किसी भी भाँति ढँका नहीं जा सकता।

६. विकल्पहीनता और नियति : कर्ण बार-बार अपने भाग्य और जन्म के कारण मजबूर दिखता है। उसकी पूरी जीवन-यात्रा विकल्पहीनता की पीड़ा से गुजरती है, जो मनुष्य की सीमितता का प्रतीक बनती है।

७. सच्चाई और एकनिष्ठा का परिणाम : कर्ण एक ओर अपने मित्र दुर्योधन के प्रति पूर्ण रूप से इमानदार और एकनिष्ठ है, वहीं दूसरी ओर उसे सच्चाई का भी भान है। यह द्वंद्व उसे एक त्रासदी पुरुष बनाता है।

८. युद्ध की समस्या : युद्ध की समस्या पर चिंतन करते हुए इस काव्य में कवि ने प्रतिपादित किया है कि युद्धों का आयोजन शासक वर्ग अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए ही करता है। राजाओं की राज्यलिप्सा, अहमभाव की पूर्ति, सत्ता का नशा आदि युद्ध के प्रमुख कारण होते हैं। इन युद्धों का उद्देश्य जनता की भलाई या विकास नहीं होता बल्कि शासक वर्ग की स्वार्थपूर्ति होता है। युद्ध के कारण की चिंता करते हुए कवि कहता है–

रण केवल इसलिए कि राजे और सुखी हों, मानी हों,
और प्रजाएँ मिले उन्हें, वे और अधिक अभिमानी हों।
रण केवल इसलिए कि वे कल्पित अभाव से छूट सकें,
बढ़े राज्य की सीमा जिससे, अधिक जनों को लूट सकें।

९. सहनशीलता और धैर्य का अभाव : रश्मिरथी खंडकाव्य कवि दिनकरजी ने मनुष्य में सहनशीलता एवं धैर्य के अभाव का चित्रण किया है। सहनशीलता और धैर्य का अभाव ही युद्ध को आमंत्रित करता है। यदि एक पक्ष भी समझदारी और धैर्य से काम लें तो युद्ध टल सकता है। महाभारत में दुर्योधन तो सत्ता के मद में अंधा था ही परन्तु पांडवों में भी धैर्य नहीं था। कवि ने युग में शान्ति के लिए सहनशीलता और धैर्य के मार्ग को आवश्यक बताया है। इसी मार्ग पर चलकर मानव का कल्याण संभव है।

१०. लोभी मनोवृत्ति की समस्या : आधुनिक युग की व्याप्त विषमताओं के मूल में मनुष्य की लोभी मनोवृत्ति कार्य करती है। मानव जीवन की पूर्णता इसी में है कि वह अपने लिए नहीं बल्कि औरों के लिए जिए। मानव जीवन का सर्वोच्च आदर्श सर्वजनहिताय होना चाहिये। तभी तो कर्ण कहता है–

"सब आँखे मूँद कर लड़ते हैं,
जय इसी लोक में पाने को,
पर कर्ण जूझता है कोई,
सद्धर्म निभाने को।"

११. दलित वर्ग की समस्या : रश्मिरथी में कर्ण के माध्यम से दलित चेतना और दलित संवेदना के महत्वपूर्ण पक्ष को सामाजिक संरचना की परिधि पर पड़े हाशिये के पात्र को चर्चा-परिचर्चा के केंद्र में लाकर युग-सन्दर्भो में प्रासंगिक बनाते हुए दलित वर्ग की मुक्तिचेतना का स्वर मुखरित करने के सार्थक प्रयास का परिणाम 'रश्मिरथी' को कहा जा सकता है। 'रश्मिरथी' की भूमिका में दिनकर जी कहते हैं- "यह युग दलितों और उपेक्षितों के उद्धार का युग है।" शायद इसीलिए समाज में दलित माने जाने वाले चरित्र को 'रश्मिरथी' में उज्जवल दिखाया गया है। कर्ण का चरित्र एक दलित की ही प्रतिध्वनि है। कर्ण के चरित्र को गरिमा प्रदान करते हुए दिनकर उसे उसे दलितों का नेता कहते हैं–

"युग-युग जियें कर्ण, दलितों के वे दुःख-दैन्य हरण हैं,
कल्पवृक्ष धरती के, अशरण की अप्रतिम शरण है।"

१२. अविवाहित माता की समस्या : आजादी के पचहत्तर वर्ष बाद भी बिन ब्याही माँ बनाना सामाजिक अपराध माना जाता है। यही कारण है कि नौ महीने अपने रुधिर से सींचने और कोख में पालने के बाद भी वह अपने शिशु को निर्जन में अनाथ छोड़ देती है। समाज तो समाज ऐसी महिलाएँ अपने पुत्र और परिवार द्वारा भी आदर नहीं पाती हैं, जो उनका हक़ है। शूरवीर-दानवीर कर्ण का अपनी बिन ब्याही माँ कुंती के लिए कहा गया कथन यहाँ दृष्टव्य है–

"वह नारी नहीं, कुल कपाली थी,
सर्पिणी परम विकराली थी।"

अविवाहित माँ की व्यथा कोई भी नहीं समझ सकता, चाहे कोई भी स्त्री-पुरुष कितना भी संवेदनशील क्यों न हो। अविवाहित माँ सामाजिक रूप से अपमानित, लांछित तो है ही, खुद की निगाह में भी वह अपराधमुक्त नहीं है। कुंती कहती है–

"बेटा! सचमुच ही, बड़ी पापिनी हूँ मैं,
मानवी-रूप में विकट साँपिनी हूँ मैं।
मुझ-सी अधमयी, कुटिल हत्यारी,
धरती पर होगी कौन दूसरी नारी।"

कुँवारी माँ के जीवन का दर्द असीम है। वह दर्द से ठीक से आह भी नहीं भर सकती। कुंती जीवनभर घुटती रहती है, पुत्र वियोग का कष्ट झेलती रहती है। यह कष्ट सिर्फ कुंती तक ही सिमित नहीं है। उत्तराधुनिक समाज में भी अनेक कुंवारियों को इस दर्द से गुजरना पड़ता है। कुंती का यह कथन आम कुंवारियों के दर्द को दृश्यमान करता है–

"बेटा धरती पर बड़ी दीन है नारी,
अबला होती है सचमुच योषिता कुमारी।
है कठिन बंद करना समाज के मुख को,
सिर उठा न पा सकती पतिता निज सुख को।"

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि रामधारीसिंह 'दिनकर' जी ने खंडकाव्य 'रश्मिरथी' के माध्यम से कर्ण को केंद्र में रखकर आधुनिक ही नहीं बल्कि उत्तराधुनिक जीवन की समस्याओं को उजागर किया है। उपरोक्त सभी समस्याएं कम-अधिक मात्रा में आज भी हमारे समाज में मुहं बाये खड़ी दिखाई देतीं हैं। कर्ण तो एक निमित्त मात्र है। दिनकर जी ने वर्त्तमान समय की सामाजिक, राजनैतिक, नैतिक, शैक्षणिक, पारिवारिक आदि समस्याओं को 'रश्मिरथी' के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। कवि ने अतीत को नए कोणों से देखा है। आधुनिक मन को अतीत की विडम्बनाओं और रुढियों से आजाद करने की कोशिश की है। एक राष्ट्रवादी कवि द्वारा कर्ण के चरित्र को चुनना और उसके जीवन के मार्मिक बिन्दुओं को सामाजिक न्याय की चेतना के साथ व्यक्त करना यह महत्वपूर्ण बात है।

सन्दर्भ

१. 'रश्मिरथी', रामधारी सिंह 'दिनकर'
२. 'रश्मिरथी' : एक पुनः पाठ, सं. दिनेश कुमार
३. 'दिनकर के काव्य', लालधर त्रिपाठी
४. 'महाकवि दिनकर तथा अन्य कीर्तियाँ', विमल कुमार जैन
५. 'राष्ट्रिय कवि दिनकर और उनकी काव्य-कला', चंद्रशेखर जैन
६. राष्ट्रिय कवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना', प्रतापचन्द्र जैसवाल
७. 'दिनकर : सृष्टि और दृष्टि', छोटेलाल दीक्षित
८. 'दिनकर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व', एस.के. पद्मावती
९. 'आज के लोकप्रिय कवि', मन्मथनाथ गुप्त
१०. 'रामधारीसिंह दिनकर के काव्य में जनचेतना', ईश्वरलाल यादव

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

सरोद सम्राट उस्ताद अमजद अली खान का भारतीय शास्त्रीय संगीत को योगदान

उमेश कुमार
शोधार्थी, संगीत विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़
Email: umeshkumar610922@gmail.com
मोः 9882610922

शोध सार : किसी भी कला अथवा शैली के विकास के अनेकों पहलू अथवा माध्यम होते हैं जिनके आधार पर वह कला उन्नति के पथ पर अग्रसर होती रहती है। भारतीय शास्त्रीय संगीत जिसे रागदारी संगीत भी कहा जाता है, अपने आप में सुविकसित व समृद्ध है। राग संगीत के विकास क्रम की श्रृंखला में अनेकों विद्वानों, शास्त्रकारों व कलाकारों का पृथक-पृथक योगदान है। वाद्य संगीत में भी अनेकों विभूतियां हुई, जिन्होंने अपने ज्ञान अथवा साधना से संगीत को संपन्न बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी कड़ी में विश्व ख्याति प्राप्त सरोद वादक उस्ताद अमजद अली खान का नाम स्वतः ही सामने आ जाता है जिन्हें भारत सरकार द्वारा उनके वादन के लिए अनेकों उपाधियों से पुरस्कृत किया जा चुका है। उस्ताद जी ने भारतीय शास्त्रीय संगीत को सुप्रसिद्ध करने, भारतीय संगीत की धरोहर को संजोए रखने तथा प्रचार प्रसार करने में अपना उत्कृष्ट योगदान दिया है जो सर्वदा अविस्मरणीय व अतुलनीय है। प्रस्तुत शोध पत्र में खान साहेब द्वारा भारतीय शास्त्रीय संगीत को दिए गए योगदान पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है।

मुख्य शब्द : शास्त्रीय संगीत, उस्ताद अमजद अली खां, सरोद, वादक, रचना, सृजित राग, विशेषता, सम्राट।

अनुसंधान क्रियाविधि : प्रस्तुत शोध पत्र के लिए अनेकों पुस्तकों, इंटरनेट व साक्षात्कार की सहायता ली गई है। इसके अतिरिक्त खां साहेब (उस्ताद अमजद अली खां) जी के सम्पूर्ण जीवन व सांगीतिक यात्रा का गहनता से अध्ययन किया गया है ताकि संगीत के क्षेत्र में उनके योगदान को शोध पत्र में प्रदर्शित किया जा सके।

भूमिका : किसी भी कला के सुसंस्कृत होने तक का सिलसिला निश्चित तौर पर वृहत एवं प्राचीन होता है। इसी भांति ललित कलाओं में प्रमुखता लिए हुए भारतीय शास्त्रीय संगीत का विकासक्रम भी विस्तृत व प्राचीनतम है। पुरातन से ही शास्त्र तथा क्रियात्मक दोनों पक्षों में भिन्न-भिन्न विद्वानों तथा कलाकारों ने संगीत को समृद्ध बनाने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। भारतीय शास्त्रीय संगीत जिसे रागदारी संगीत भी कहा जाता है तथा भारतीय संगीत त्रिनेत्रधारी है अर्थात् इसके अंर्तगत गायन, वादन व नृत्य तीनों विधाओं का समावेश है। वाद्य संगीत की यदि चर्चा की जाए तो इसके विकासक्रम की अपनी पृथक श्रृंखला है। अनेकों पूर्वज कलाकारों, शास्त्रकारों तथा वाग्गेयकारों ने भारतीय वाद्य संगीत की उन्नति हेतु महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वाद्यों में जब भी कहीं सरोद वाद्य की बात होती है तो स्वतः ही प्रतिष्ठित एवं विश्व ख्याति प्राप्त सरोद सम्राट उस्ताद अमजद अली खां का नाम स्पष्ट रूप से सामने आ जाता है। खाँ साहेब ने अनेकों नवीन रागों का सृजन

कर, कलिष्ट तालों में वादन कर तथा सरोद संग्रहालय का निर्माण कर संगीत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण जगत को एक बहुमूल्य भेंट समर्पित की है जो भारतीय शास्त्रीय संगीत की समृद्धता तथा विकासशीलता में अहम भूमिका निभाता है।

राग संगीत के संरक्षक : राग भारतीय संगीत का मूलभूत अंग है एवं इसके अनेकों घटक हैं जिनमें एक है रचना अथवा बंदिश। भारतीय शास्त्रीय संगीत में रचना का महत्वपूर्ण स्थान है और रचना रागाभिव्यक्ति का मूल आधार है। खां साहब सम्पूर्ण राग प्रस्तुतिकरण में बंदिश अथवा गत को अत्यधिक महत्व देते हैं। क्योंकि इनके अनुसार रचना राग के स्वरूप को संरक्षित कर, राग को भविष्य में संजोए रखने में सक्षम है। उस्ताद जी का कहना है कि, रचना के माध्यम से ही कलाकार राग रूप व मनोभावों को श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत करता है।

उस्ताद अमजद अली खां द्वारा बजाई गई गत अथवा बन्दिशें भावात्मकता व कलात्मकता से परिपूर्ण, सौन्दर्याभिव्यक्ति की परिचायक हैं। इनकी प्रत्येक बन्दिश की अपनी विशेषता रहती है, जिनमें मुख्य रूप से लयात्मकता, ताल विविधता, बन्दिश का रख-रखाव, बोलों की विशिष्टता, रस और भाव से ओत-प्रोत, रागानुसार वादन, तकनीक का प्रयोग तथा तराने पर आधारित बन्दिशें होती है, जो विविधता व वैचिंय उत्पन्न कर श्रोताओं के चित्त को भाव-विभोर करती हैं। वर्तमान समय में अधिकांशतः यह प्रदर्शित होता है कि, गायक अथवा वादक कलाकार बंदिश का सम्पूर्ण स्वरूप प्रदर्शित नहीं करते, यानि केवल स्थाई बजाने के पश्चात् विस्तार, तान या उपज करते हैं किन्तु अंतरा का वादन नहीं करते जो बंदिश का ही घटक है। खाँ साहब बंदिश के दोनों अंगों स्थाई व अन्तरा को विशेष रूप से अहमियत देते हैं जिससे राग रूपी शरीर (बंदिश) का संरक्षण होता है।

खाँ साहेब अनेकों पारम्परिक रचनओं का वादन कर घरानेदार चीजों का संरक्षण तथा स्वरचित व तरानाधारित बंदिशों का सृजन व वादन कर भारतीय शास्त्रीय संगीत को संरक्षित करने व समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

सेनिया बंगश परम्परा के संरक्षक व वाहक : सरोद वादन की परम्परा उस्ताद अमजद अली खाँ के पूर्वज मुहम्मद हाश्मी खाँ बंगश से चली आ रही है जो गुलाम अली खाँ का सेनिया घराना से प्रसिद्ध हुआ। उस्ताद गुलाम अली खाँ के तीसरे पुत्र नन्हें खाँ तथा इनके पुत्र उस्ताद हाफिज अली खाँ हुए जो उस्ताद अमजद अली खाँ के पिता जी थे। उस्ताद अमजद अली खाँ इस परम्परा में छठवीं पीढ़ी के है। खाँ साहेब घरानेदार चीज़ों को प्रदर्शित कर, मुद्रत कर, बेटों (अमान एवं अयान अली बंगश) तथा शिष्यों को सिखाकर संगीत तथा सरोद वादन की परम्परागत बंदिशों, तकनीकों व पारम्परिक वादन विधि का संरक्षण कर अपने घराने का बखूबी निर्वहन कर रहे हैं जो यथासंभव ही भा. शा. सं. के लिए महत्वपूर्ण योगदान है।

सरोद वाद्य में नवीन प्रयोग : उस्ताद जी ने सरोद वाद्य में अनेकों नवीन प्रयोग किए हैं। साधारण तौर पर कुछ कलाकार दो तुम्बे का सरोद बजाते हैं। किन्तु उस्ताद जी के सरोद में केवल एक ही तुम्बा रहता है। जिसमें मुख्य 8 तारें तथा 11 तरब की तारें रहती है। इनके सरोद निर्माण के लिए सौगान की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। उस्ताद जी ने सरोद की ध्वनि गुणवत्ता पर विशेष रूप से काम किया है। वादन के लिए नाखून (नख) प्रयोग, नारियल के खोल का जवा प्रयोग इनकी ही उपज है। पूर्ववती कलाकारों के सरोद की बनावट प्रायः इस तरह से रहती थी कि उसे ऊँचे स्वर (स्केल) पर मिलाना असंभव होता था, किन्तु उस्ताद जी ने इस पर भी कार्य किया और सरोद को ऊँचे स्वर पर मिलाकर सौन्दर्यपूर्ण वादन किया। यह भारतीय शास्त्रीय संगीत के लिए महत्वपूर्ण योगदान है।

सरोद का जनमानस में प्रचार-प्रसार : मैहर घराने के सबसे वरिष्ठ व प्रसिद्ध बांसुरी वादक पं. नित्यानंद हल्दीपुर जी के अनुसार, ''जब से उस्ताद अमजद अली खाँ ने कलाकार रूप में वादन करना प्रारम्भ किया है, तबसे सरोद मानो जनमानस तक पहुंचा है और सरोद से भलीभांति परिचित हो गए हैं। खाँ साहेब की खासियत है वे अपने कार्यक्रम का प्रस्तुतिकरण इस तरह करते हैं कि साधारण लोग भी मंत्रमुग्ध होकर जुड़ जाते हैं। उदाहरण के तौर पर वे राम धुन बजाते है जिसे सुनते ही सभी को अन्दाजा हो जाता है तथा सुनते हुए पूर्ण रूप से सम्मलित हो जाते हैं।''

स्वसृजित वादन शैली : उस्ताद जी ने अपनी वादन शैली को विशिष्ट बनाने के लिए कड़ी साधना की है। इन्होंने परम्परागत शैली को अपनाते हुए उसमें नवीनता लाकर नव प्रयोग भी किए हैं। तंत्रकारी, ध्रुपद व पखावज के बोलों से युक्त पारम्परिक वादन तथा ख्याल शैली का मधुर प्रयोग इनके वादन में सौन्दर्यावृद्धि करता है। उस्ताद जी की वादन शैली की अनेकों

विशेषताएँ हैं जैसे स्वरों की स्पष्टता, राग शुद्धता, चौनदारी, भावात्मक तथा कलात्मकता का उचित संतुलन तथा भिन्न-भिन्न तालों में निबद्ध रचनाओं का वादन, माधुर्य हेतु अलंकरणों का आवश्यकतानुसार प्रयोग, कलिष्ट लयकारी प्रयोग इत्यादि।

खां साहेब द्वारा निर्मित सरोद संग्रहालय : उस्ताद जी द्वारा निर्मित सरोद घर भारतीय संगीत जगत ही नहीं अपितु भारतवर्ष के साथ-साथ विश्वभर के लिए एक विशेष उपहार है। यह संग्रहालय मध्य प्रदेश के ग्वालियर में स्थित है। यह हमारे देश के लिए गौरवपूर्ण बात है जहां पूर्ववती तथा वर्तमानकालीन संगीतकारों के वाद्यों को सरंक्षित कर कलाकारों को समान दिया जाता है जो भारतीय परम्परा व संस्कारों की विशेषता है। इस संग्रहालय के माध्यम से भावी व आगामी पीढ़ियों तथा विदेशियों को पारम्परिक वाद्यों से अवगत होने का सुअवसर प्राप्त हो रहा है। जो संगीत के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान है।

उस्ताद जी द्वारा नव सृजित राग : उस्ताद जी ने अनेकों नवीन रागों का सृजन कर भारतीय शास्त्रीय संगीत को महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इनके द्वारा सृजित रागों को कलाकार बहुत पसंद कर, गायन एवं वादन भी करते हैं। इनके सृजित राग-प्रियदर्शनी जो श्रीमती इंदिरा गांधी जी की याद में, कमलश्री, श्री राजीव गांधी जी की याद में तथा हरिप्रिया कान्हड़ा, शुभालक्ष्मी, हाफिज कौंस, बापूकौंस इत्यादि अनेकों रागों का सृजन पृथक-पृथक महा शख्शियतों के नाम तथा याद पर किया है।

नवीन ताल प्रयोग तथा संगीतकारों को महत्व : विविध तालों में सहजता से वादन खाँ साहेब की कठोर साधना का परिचायक व संगीत के प्रति निरन्तरता व सृजनशीलता को प्रदर्शित करता है। उस्ताद जी ने विविध तालों में वादन किया है जिनमें मुख्य रूप से तीनताल, एकताल, धमार, आड़ाचार ताल, रुपक, दीपचन्दी 9/1/2, 13/1/2 इत्यादि हैं। इन्होंने साढ़े में बहुत कुशल वादन किया है जो आमतौर पर अन्य कलाकार नहीं करते। उस्ताद जी की विशेषता है कि पुराने कलाकारों से लेकर लगभग नए सभी कलाकारों के साथ सहजता से वादन कर उन्हें प्रोत्साहित करते हैं।

दक्ष गुरु के परिचायक : खाँ साहेब ने अनेकों शिष्य तैयार कर उच्चकोटि के कलाकार होने के साथ-साथ दक्ष गुरु का भी प्रमाण दिया है। इनकी शिष्य श्रृंखला बहुत विशाल है जिसमें मुख्य रूप से इनके दोनों बेटे अमान और अयान अली बंगश, इसके अतिरिक्त श्री अभीक सरकार, श्री राकेश प्रसन्ना, श्री देबोज्योति बोस, श्रीमती सरोज घोष तथा श्री सुभाष घोष इत्यादि अनेकों नाम हैं जो देश-विदेश में अपनी कला का मंचन कर रहे हैं।

विविध शैलियों का वादन : शास्त्रीय संगीत के अतिरिक्त उस्ताद जी अन्य शैलियों का वादन भी सहजता तथा कुशलता से करते हैं। इन्होंने अनेकों ठुमरी तथा लोक धुनों का भी वादन किया है। ठुमरी में मुख्य रूप से देस राग पर आधारित तथा दीपचन्दी ताल में निबद्ध रचना का कर्णप्रिय वादन करते हैं, इसके अतिरिक्त अनेकों धुनें-जैसे पहाड़ी, पीलू, आसाम का बीहू, बंगाल की लोकधुन-ऐकला चौलो रे, वैष्णव जन तो तथा रघुपति राघव राजा राम इत्यादि का श्रुतिमधुर वादन करते हैं।

गायक व लेखक : खाँ साहेब शीर्ष श्रेणी के सरोद वादक होने के साथ-साथ अच्छे गायक, लेखक व तबला वादक भी हैं। इन्होंने बचपन में पं. गुणे साहेब से गाना सीखा है तथा पं. बिरजू महाराज जी के साथ तबले पर संगत भी की है तथा उस्ताद जी लेखन में भी पारंगत हैं इन्होंने अपने पिता जी की समृति में दो पुस्तके प्रकाशित की हैं।

उस्ताद जी को प्राप्त सम्मान व पुरस्कार : खाँ साहेब को इनके कठोर परिश्रम के लिए संगीत जगत तथा भारत सरकार द्वारा अनेकों पुरस्कारों से पुरस्कृत किया जा चुका है जिनमें मुख्य रूप से सरोद सम्राट, युनेस्को अवार्ड, पद्मश्री, कला रत्न, शिरोमणी, तानसेन अवार्ड, पद्मभूषण तथा पद्मविभूषण इत्यादि हैं।

निष्कर्ष :

उपरोक्त विवरण के आधार पर विदित होता है कि उस्ताद अमजद अली खाँ बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं, इन्होंने सरोद वाद्य की बनावट, ध्वनि गुणवत्ता में संशोधन कर सरोद वाद्य को सर्वोपरी बनाया और साथ ही अपनी विशिष्ट वादन शैली का भी निर्माण किया। खाँ साहब रचना पर बल देकर राग रूपी शरीर का संरक्षण कर अपने घराने के प्रतिनिधि कलाकार होने के साथ-साथ इस परम्परा को संरक्षित कर रहे हैं। उस्ताद जी ने अनेकों रागों का सृजन कर संगीत जगत तथा सरोद संग्रहालय

का निर्माण कर देश-विदेश के लिए अद्वितीय भेंट समर्पित की है। उस्ताद जी ने विविध तालों में वादन किया है जो संगीत जिज्ञासुओं के लिए वरदान की भांति है तथा पुराने नए सभी तबला संगतकारों को सम्मान व अवसर प्रदान कर संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है तथा कार्यरत हैं। खाँ साहेब ने अनेकों शिष्य तैयार कर संगीत परम्परा के भविष्य को उज्जवल बनाने का भरपूर प्रयास किया है तथा अन्य शैलियों का वादन कर जनमानस में सरोद वाद्य का प्रचार-प्रसार कर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है।

संदर्भ सूची

1. ग्वालियर की संगीत परम्परा, डॉ. अरुण बांगरे।
2. निबंद्ध संगीत, लक्ष्मीनारायण गर्ग।
3. सरोद पर दो अभिनव प्रयोग, रविन्द्र मिश्र।
4. अमजद का सरोद गुलजार के गीत, तेजपाल सिंह धामा
5. The devine of Sarod, Saran Rani Bakliwal.
6. Abba-God's greatest gift to us, Amaan, Ayaan Ali Bangash.
7. sarod.com/bio.php
8. sarod.com/documentary.php
9. पं. नित्यानन्द हल्दीपुर (बांसुरी वादक) जी से भेंटवार्ता।
10. प्रो. सरोज घोष (उ. अ. अली खां की वरिष्ठ शिष्या) से साक्षात्कार।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

कर्म और श्रम ही विकास का मूल : एक दार्शनिक, सामाजिक-आर्थिक और व्यक्तिगत विश्लेषण

मोहम्मद इबादुर रहमान खान
नामांकन संख्या : AU 211536
RDC - RNTU/R-D/23/068
Telephone: India (+91) 9794174522
e-mail : ibadur.saima@gmail.com

डॉ. अरुण पाण्डेय
शोध निर्देशक
सह आचार्य, हिंदी विभाग
रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल
मध्य प्रदेश – 464993

सारांश

कर्म और श्रम, दोनों ही जीवन और विकास के अभिन्न अंग हैं। ये शब्द अक्सर एक-दूसरे के पर्याय के रूप में प्रयोग होते हैं, लेकिन इनके बीच गहरा दार्शनिक, सामाजिक-आर्थिक और व्यक्तिगत अंतर है। कर्म एक व्यापक अवधारणा है, जो किसी भी क्रिया को संदर्भित करती है, चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक। कर्म का सिद्धांत बताता है कि हर क्रिया का एक परिणाम होता है। यह अवधारणा हमें नैतिक जिम्मेदारी, अच्छे और बुरे के बीच अंतर और जीवन के प्रति हमारे दृष्टिकोण के बारे में सोचने पर मजबूर करती है। श्रम, दूसरी ओर, एक विशिष्ट प्रकार का कर्म है, जिसका उद्देश्य किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है। श्रम में अक्सर शारीरिक या मानसिक प्रयास शामिल होता है और इसका उद्देश्य कुछ मूल्यवान बनाना या प्राप्त करना होता है। समाज और अर्थव्यवस्था के विकास में कर्म और श्रम दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। श्रम आर्थिक विकास का एक प्रमुख कारक है, क्योंकि यह उत्पादन, रोजगार और आय सृजन का आधार है। श्रम के माध्यम से ही नए उत्पाद और सेवाएं बनती हैं, और समाज में समृद्धि आती है। कर्म का सामाजिक पहलू भी महत्वपूर्ण है। अच्छे कर्मों से सामाजिक सद्भाव, न्याय और समानता को बढ़ावा मिलता है। एक समाज, जहाँ लोग अच्छे कर्मों को महत्व देते हैं, वहाँ सहयोग, विश्वास और सामूहिक विकास की भावना मजबूत होती है।

बीज शब्द : अवधारणा, पुनर्जन्म, प्रोटेस्टेंट, अधिशेष मूल्य, नवाचार, निष्पक्षता, विनिर्माण।

कर्म की अवधारणा : दार्शनिक और आध्यात्मिक आयाम।

कर्म एक प्राचीन भारतीय अवधारणा है, जो किसी क्रिया, कार्य या कर्म और उसके प्रभाव या परिणामों को संदर्भित करती है। यह कारण और प्रभाव का एक सिद्धांत है, जहाँ व्यक्ति का इरादा और कार्य उसके भविष्य को प्रभावित करते हैं; कर्म से ही कोई इंसान, शैतान या महान बनता है, जैसा कि तुलसीदास ने कहा है - "कर्म प्रधान बिस्व करि राखा, जो जस करहि सो तस फल चाखा।"

भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धांत

हिंदू धर्म में, कर्म पुनर्जन्म (संसार) के चक्र से गहराई से जुड़ा हुआ है। यह माना जाता है कि पिछले जन्मों के कार्य

वर्तमान जीवन के अनुभवों को निर्धारित करते हैं।

बौद्ध धर्म में, कर्म को सचेत क्रियाओं के रूप में देखा जाता है, जो चुनाव द्वारा संचालित होती हैं, जिसमें कार्यों के पीछे के इरादों के महत्व पर जोर दिया जाता है। यह केवल क्रिया ही नहीं, बल्कि वह इरादा है, जिसके साथ इसे किया जाता है, जो कर्मिक महत्व रखता है।

जैन धर्म में, कर्म आत्म-प्रयास और अहिंसा के पालन के माध्यम से मुक्ति प्राप्त करने में गहराई से निहित है। कर्म को भौतिक कणों के रूप में समझा जाता है, जो आत्मा से चिपक जाते हैं, शुद्धि प्राप्त होने तक उसकी यात्रा को प्रभावित करते हैं। इसका लक्ष्य बंधन से मुक्ति है।

श्रम की अवधारणारू ऐतिहासिक और सामाजिक-आर्थिक परिप्रेक्ष्य

श्रम की अवधारणा ने इतिहास के विभिन्न कालों में महत्वपूर्ण बदलाव देखे हैं, जो समाज के विकास के साथ इसके बदलते संबंधों को दर्शाते हैं। प्राचीन काल में, श्रम, विशेषकर शारीरिक श्रम, को अक्सर एक भारी बोझ के रूप में देखा जाता था, जो निम्न सामाजिक स्थिति और मजबूरी से जुड़ा था। यहूदी-ईसाई मान्यताओं ने भी श्रम को परिश्रम और एक अभिशाप से जोड़ा, जैसा कि 'उत्पत्ति की पुस्तक' में आदम के परिश्रम के संदर्भ में देखा गया है। अरस्तू जैसे दार्शनिकों ने मजदूरी श्रम को "अशिक्षित" माना, जो नागरिकों को नागरिक भागीदारी के लिए आवश्यक अवकाश से वंचित करता था।

आधुनिकता के आगमन के साथ, विशेष रूप से प्रोटेस्टेंट नैतिकता और पूंजीवादी प्रथाओं से प्रभावित होकर, श्रम की समझ में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया। यह एक स्वतंत्र अस्तित्व के सकारात्मक प्रमाण और व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक अखंडता के लिए एक पूर्व शर्त में बदल गया।

विभिन्न आर्थिक और दार्शनिक विचारकों ने श्रम की अवधारणा को आकार दिया है :

जॉन लॉक ने संपत्ति अधिकारों को श्रम में आधार बनाया, यह तर्क देते हुए कि किसी वस्तु में अपने श्रम को मिलाकर मूल्य बनता है और स्वामित्व को सही ठहराता है।

कार्ल मार्क्स ने आर्थिक विकास में श्रम की भूमिका पर ध्यान केंद्रित किया, लेकिन पूंजीवाद की आलोचना की। उन्होंने तर्क दिया कि पूंजीपति श्रमिकों को उनके द्वारा बनाए गए मूल्य से कम भुगतान करके "अधिशेष मूल्य" निकालते हैं, जिससे शोषण होता है।

एडम स्मिथ ने तर्क दिया कि श्रम, निपुणता, नवाचार और उत्पादकता में वृद्धि करता है। स्मिथ ने इसे औद्योगीकरण और आर्थिक विकास का एक प्रमुख चालक माना।

विकास की बहुआयामी अवधारणा

विकास की अवधारणा समय के साथ विकसित हुई है, जो केवल आर्थिक संकेतकों से परे एक व्यापक दृष्टिकोण को दर्शाती है।

विकास की बदलती परिभाषाएँ

प्रारंभ में, विकास को संकीर्ण रूप से किसी देश की राष्ट्रीय आय या सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में वृद्धि के रूप में परिभाषित किया गया था। यह पारंपरिक दृष्टिकोण उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं जैसे संकेतकों का उपयोग करता था।

आधुनिक परिभाषाएँ सामाजिक निष्पक्षता, पर्यावरण संरक्षण और लोगों की आवश्यकताओं और क्षमताओं को पूरा करने पर ज़ोर देती हैं। अमर्त्य सेन का "क्षमता दृष्टिकोण" इस बात पर केंद्रित है कि कार्रवाई की स्वतंत्रता के माध्यम से लोगों को अपनी उच्चतम क्षमता तक पहुँचने में कैसे सक्षम बनाया जाए।

कर्म और श्रम : विकास के मूल आधार

कर्म और श्रम का संयोजन व्यक्तिगत उन्नति और सामाजिक-आर्थिक प्रगति के लिए एक शक्तिशाली इंजन के रूप में कार्य करता है।

व्यक्तिगत उन्नति में भूमिका

नैतिक आचरण और आत्म-मूल्य का निर्माण : कर्म सिद्धांत नैतिक व्यवहार, जवाबदेही और आत्म-जागरूकता को बढ़ावा देता है। यह व्यक्तियों को शुभ कर्म करने के लिए प्रोत्साहित करता है, जो जीवन को समुन्नत बनाने में सहायक होते हैं। इसके विपरीत, बेरोजगारी, अवसाद, आत्म-पहचान में कमी और लाचारी की भावनाओं से जुड़ी है, जो शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।

उद्देश्य और आत्म-पहचानरू कर्म भौतिक सुखों से परे जीवन के उद्देश्य को समझने में मदद करता है, यह सिखाता है कि जीवन केवल भौतिक सुख-सुविधाओं के लिए नहीं है, बल्कि एक नैतिक और आध्यात्मिक यात्रा है। कार्य, जब सार्थक माना जाता है, तो अर्थ की जन्मजात मानवीय खोज को पूरा करता है।

सामाजिक और आर्थिक प्रगति में भूमिका

सामूहिक कर्म और सामाजिक प्रभाव : कर्म केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं होता, यह सामूहिक स्तर पर भी कार्य करता है। सामूहिक चेतना का सिद्धांत यह बताता है कि जब समाज में एक बड़ा समूह एक जैसे विचार और कर्म करता है, तो वह पूरे समाज पर एक व्यापक प्रभाव डालता है। कर्म द्वारा बढ़ावा दिया गया नैतिक जीवन और आत्म-जागरूकता, समाज के भीतर करुणा और सद्भाव को बढ़ावा देती है।

श्रम विभाजन और आर्थिक विकास : कार्यों की विशेषज्ञता, जिसे श्रम विभाजन के रूप में जाना जाता है, दक्षता और उत्पादकता को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाता है, जिससे उत्पादन में वृद्धि होती है।

औद्योगीकरण और राष्ट्र निर्माण : औद्योगीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि उत्पादन से बड़े पैमाने पर उत्पादित और तकनीकी रूप से उन्नत वस्तुओं और सेवाओं पर निर्भरता की ओर बढ़ती है। यह उत्पादकता में घातीय वृद्धि, ग्रामीण से शहरी श्रम स्थानांतरण और जीवन स्तर में वृद्धि की विशेषता है।

कृषि, उद्योग और सेवा क्षेत्र का योगदान : कृषि गरीबी कम करने, आय बढ़ाने और खाद्य सुरक्षा में सुधार के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है। उद्योग (विनिर्माण) आर्थिक विकास, रोजगार सृजन और तकनीकी उन्नति को गति देता है। चीन का विनिर्माण में प्रभुत्व, जो दुनिया का सबसे बड़ा औद्योगिक अर्थव्यवस्था और वस्तुओं का निर्यातक है, इस क्षेत्र के महत्व को दर्शाता है। सेवा क्षेत्र का महत्व बढ़ रहा है, जो सकल घरेलू उत्पाद और रोजगार में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

सामुदायिक निर्माण और सामाजिक सामंजस्य : सामुदायिक विकास का उद्देश्य सामूहिक कार्रवाई और सामान्य एजेंडे के माध्यम से व्यक्तियों और समूहों को सशक्त बनाना है। श्रम आंदोलनों और यूनियनों ने ऐतिहासिक रूप से श्रमिकों के अधिकारों को आगे बढ़ाने, कार्यस्थल सुरक्षा में सुधार करने और उचित मजदूरी और स्थितियों के लिए लड़ने में केंद्रीय भूमिका निभाई है। सार्थक कार्य सामुदायिक सामंजस्य और राष्ट्रीय आर्थिक समृद्धि में योगदान देता है। सामाजिक सामंजस्य उस "डोर" को संदर्भित करता है, जो समाज को बांधता है।

यह शोध पत्र तर्क देता है कि कर्म और श्रम दोनों ही मौलिक हैं। उनका सहक्रियात्मक अंतःक्रिया ही है, जो वास्तव में समग्र और सतत विकास को गति देता है। नैतिक इरादा (कर्म) उत्पादक प्रयास (श्रम) को सामाजिक रूप से लाभकारी परिणामों की ओर निर्देशित करता है, शोषण को रोकता है और वास्तविक कल्याण को बढ़ावा देता है। कर्म, अपने इरादे और नैतिक आचरण पर जोर देने के साथ, नैतिक दिशा प्रदान करता है। श्रम, उत्पादकता और आर्थिक उत्पादन पर अपने ध्यान के साथ, साधन प्रदान करता है। यह संयुक्त शक्ति सुनिश्चित करती है कि विकास न केवल आर्थिक रूप से मजबूत हो, बल्कि सामाजिक रूप से न्यायसंगत और नैतिक रूप से सुदृढ़ भी हो, जिससे सतत प्रगति हो।

आधुनिक चुनौतियाँ और भविष्य की दिशा

वर्तमान युग में, कर्म और श्रम की अवधारणाएँ कई नई चुनौतियों का सामना कर रही हैं, जिन्हें समग्र विकास के लिए संबोधित करना आवश्यक है।

श्रम के बदलते स्वरूप की चुनौतियाँ

आधुनिक कार्य, विशेषकर अत्यधिक विशेषज्ञता और नौकरशाही संरचनाओं के साथ, वियोग, अलगाव और उद्देश्य की कमी की भावनाओं को जन्म दे सकता है। श्रमिक "विशेषज्ञित पुर्जे" की तरह महसूस कर सकते हैं, जो अपनी पूरी क्षमता विकसित करने में असमर्थ हैं।

श्रम का शोषण और गिग अर्थव्यवस्था : गिग अर्थव्यवस्था, हालांकि लचीलापन प्रदान करती है, श्रमिकों को शोषण के प्रति संवेदनशील बनाती है। इसमें अस्थिर काम, अपर्याप्त मुआवजा, लाभों की कमी और नौकरी की असुरक्षा शामिल है। शोषण के उदाहरणों में मजदूरी कटौती, कागजी कार्रवाई पर नियंत्रण, अलगाव, शारीरिक और मनोवैज्ञानिक दुर्व्यवहार, बिना ब्रेक के लंबे घंटे और असुरक्षित कार्य स्थितियाँ शामिल हैं।

स्मार्ट वर्क बनाम हार्ड वर्क : "स्मार्ट वर्क बनाम हार्ड वर्क" की बहस दक्षता बनाम सरासर प्रयास पर प्रकाश डालती है। स्मार्ट वर्क कम समय में अधिक प्राप्त करने के लिए रणनीतिक सोच, योजना और इष्टतम संसाधन उपयोग पर ज़ोर देता है। यह गुणवत्ता और मात्रा दोनों को समान महत्व देता है और नवाचार को प्रोत्साहित करता है। जबकि हार्ड वर्क अनुशासन और गहरी समझ का निर्माण करता है, स्मार्ट वर्क समय बचाता है, उत्पादकता बढ़ाता है, और नवाचार को प्रोत्साहित करता है। आदर्श दृष्टिकोण दोनों का संयोजन है, जहाँ हार्ड वर्क मूलभूत ज्ञान का निर्माण करता है और स्मार्ट वर्क उसके अनुप्रयोग को अनुकूलित करता है।

प्रौद्योगिकी का प्रभाव और अनुकूलन

स्वचालन और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) : AI और स्वचालन लाखों नौकरियों को बदल सकते हैं, विशेष रूप से एंट्री-लेवल और दोहराव वाले कार्यों को। यह नौकरी विस्थापन, कौशल अतिरेक, मजदूरी ध्रुवीकरण और बढ़ती असमानता को जन्म दे सकता है, क्योंकि उत्पादकता लाभ का एक बड़ा हिस्सा पूंजी के बजाय श्रम को जा सकता है। हालांकि, AI नई नौकरियों, उत्पादकता में उछाल का भी वादा करता है, और मनुष्यों को रचनात्मकता और समस्या-समाधान जैसे उच्च-मूल्य वाले कार्यों पर ध्यान केंद्रित करने की अनुमति देता है।

पुनर्कौशल और कौशल उन्नयन की आवश्यकता : कार्य की बदलती प्रकृति व्यक्तियों के लिए निरंतर सीखने, अनुकूलन क्षमता और "उत्पाद मानसिकता" की मांग करती है। यह केवल नए कार्यों के लिए "पुनर्कौशल" के बारे में नहीं है, बल्कि विशिष्ट मानवीय गुणों को विकसित करने के बारे में है. जो AI के साथ प्रतिस्पर्धा करने के बजाय उसका पूरक हो सकते हैं। इसमें गंभीर सोच, भावनात्मक बुद्धिमत्ता, रचनात्मकता, डोमेन मिश्रण और अनुकूलन क्षमता शामिल है, जिन्हें AI आसानी से दोहरा नहीं सकता।

सार्वभौमिक मूल आय (UBI) पर बहस : UBI को स्वचालन के कारण नौकरी विस्थापन के संभावित समाधान के रूप में बहस की जाती है, जो एक सुरक्षा जाल और आय सुरक्षा प्रदान करता है। न्ठप् के लिए तर्कों में कम वेतन, असुरक्षित रोजगार (गिग वर्क) को संबोधित करना और नौकरशाही को कम करना शामिल है। यह व्यक्तियों को शिक्षा और कौशल उन्नयन के लिए समय निकालने या उद्यमी गतिविधियों को आगे बढ़ाने की अनुमति देकर डिजिटल अर्थव्यवस्था का पूरक हो सकता है।

डिजिटल अर्थव्यवस्था में मूल्य निर्माण : डिजिटल अर्थव्यवस्था ने पारंपरिक संसाधनों से परे अमूर्त संपत्तियों जैसे बौद्धिक संपदा, डेटा और ऑनलाइन प्लेटफार्मों तक मूल्य निर्माण को स्थानांतरित कर दिया है। मूल्य सह-निर्माण, मूल्य नेटवर्क और डेटा-संचालित दृष्टिकोण उभर रहे हैं, जो मूल्य निर्माण में कई हितधारकों की भूमिका पर प्रकाश डालते हैं। डिजिटल परिवर्तन (DT) व्यावसायिक प्रक्रियाओं को पुनर्परिभाषित करता है, नवाचार को बढ़ावा देता है, और कुशल संसाधन प्रबंधन की अनुमति देता है, जो स्थिरता को भी प्रभावित करता है।

जबकि प्रौद्योगिकी और "स्मार्ट वर्क" दक्षता और उत्पादकता को बढ़ाते हैं, वे साथ ही गिग अर्थव्यवस्था में अलगाव, अर्थहीन कार्य और शोषण में योगदान करते हैं। यह एक महत्वपूर्ण तनाव को उजागर करता है, जहाँ आर्थिक प्रगति, यदि

केवल दक्षता पर केंद्रित हो, तो वह मानवीय कल्याण को कमजोर कर सकती है, जिसकी उसे सेवा करनी चाहिए।

AI नियमित और एंट्री-लेवल की नौकरियों पर कब्जा कर रहा है। समाधान केवल AI उपकरणों का उपयोग करना नहीं है, बल्कि "मानवीय कौशल" जैसे गंभीर सोच, भावनात्मक बुद्धिमत्ता, रचनात्मकता और अनुकूलन क्षमता विकसित करना है। यह कार्यबल में मूल्यवान माने जाने वाले में एक गहरा बदलाव है। गहरा निहितार्थ यह है कि जैसे-जैसे मशीनें "श्रम" (शारीरिक और नियमित संज्ञानात्मक कार्य) को संभालती हैं, "कर्म" (इरादा, उद्देश्य, नैतिक निर्णय, रचनात्मक समस्या-समाधान) प्राथमिक विभेदक और मानवीय मूल्य का स्रोत बन जाता है। यह इस विचार को पुष्ट करता है कि कर्म, सचेत क्रिया के मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में, कार्य और विकास के एक सार्थक भविष्य को आकार देने में सर्वोपरि होगा।

निष्कर्ष और अनुशंसाएँ

यह विश्लेषण स्पष्ट रूप से स्थापित करता है कि 'कर्म' (सचेत और नैतिक क्रिया के सिद्धांत के रूप में) और 'श्रम' (उद्देश्यपूर्ण प्रयास और उत्पादकता के रूप में) वास्तव में व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों स्तरों पर समग्र विकास के मूलभूत आधार हैं। कर्म व्यक्तिगत और सामूहिक आचरण को सकारात्मक परिणामों की ओर निर्देशित करता है, जबकि श्रम प्रयास को मूर्त प्रगति में बदलता है। दोनों अवधारणाओं ने ऐतिहासिक रूप से आर्थिक समृद्धि, सामाजिक सामंजस्य और व्यक्तिगत कल्याण को गति देने में अंतर्निहित भूमिका निभाई है। हालांकि, तकनीकी व्यवधान, शोषण और अलगाव जैसी समकालीन चुनौतियाँ इस बात का पुनर्मूल्यांकन आवश्यक बनाती हैं कि कर्म और श्रम को कैसे समझा और अभ्यास किया जाता है।

नीति-निर्माण को विकास के एक बहुआयामी दृष्टिकोण को अपनाना चाहिए जो आर्थिक विकास को सामाजिक इक्विटी, पर्यावरणीय स्थिरता और मानवीय समृद्धि के साथ एकीकृत करता है, केवल सकल घरेलू उत्पाद मेट्रिक्स से परे जाकर। यह सुनिश्चित करता है कि 'मूल' (कर्म और श्रम) विकास की प्रक्रिया को सही मायने में पोषित करे, जिससे एक न्यायसंगत, नैतिक और टिकाऊ भविष्य का निर्माण हो सके।

सन्दर्भ स्रोत

1. विकास की अवधारणा : अर्थ, प्रकार और परिप्रेक्ष्य - यूपीएससी नोट्स – testbook.com
2. भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धांत – परेतेमज - https://ijsrset.com/paper/6766-pdf
3. श्रम विभाजन – विकिपीडिया - https://hi.wikipedia.org/wiki/
4. जॉन लॉक का सामाजिक समझौता सिद्धांत – Multanimal Modi College Modinagar
5. कार्ल मार्क्स का क्रांतिकारी सिद्धांत – Colorado Pressbook Network - https://colorado.pressbooks.pub/revolution/chapter/the-revolutionary-theory-of-karl-marx/
6. श्रम बनाम विकास – Times of India - https://timesofindia.indiatimes.com/readersblog/dr-shanker-suwan-singh/labour-versus-development-16104/

Mohamad Ibadur Rahman Khan	मोहम्मद इबादुर रहमान खान
Rahman Villa, Patelnagar	रहमान विला, पटेलनगर
P.O. Barhaj, Dist- Deoria	पो० आ० – बरहज, ज़िला- देवरिया
U.P. Pin Code 274601	उ० प्र० पिन कोड - 274601

Telephone: India (+91) 9794174522 Bahrain (+973) 39082224
e-mail : ibadur.saima@gmail.com

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

देश की प्रगति में बाधक दलगत राजनीति

डॉ. ज्योतिमा सिंह
अस्सिटेंट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान)
राजा मोहन गर्ल्स पी. जी.
कॉलेज, अयोध्या (उ. प्र.)

दीपिका शुक्ला
शोध छात्रा (राजनीति विज्ञान)
राजा मोहन गर्ल्स पी. जी.
कॉलेज अयोध्या (उ. प्र.)

सारांश

भारत एक संघीय संसदीय, लोकतांत्रिक गणतंत्र है, जहाँ संविधान की सर्वोच्चता है। हमारे देश में बहुदलीय प्रणाली है। राजनीतिक दल हमारे सामाजिक समूहों, विचारधाराओं व मतदाताओं के हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं। वर्तमान समय में राजनीतिक दल अपने पाटी हितों व व्यक्तिगत स्वार्थ को प्राथमिकता देते हैं। ऐसी स्थिति में दलगत राजनीति अनावश्यक रूप से राजनीति में प्रवेश पा लेती है, जिससे राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

दलों में निरंतर तीव्र संघर्ष व अनुचित विवाद से देश में अस्थिरता की स्थिति के साथ ही भ्रष्टाचार व पक्षपात जैसी समस्याएँ अपनी जड़ें जमाने लगती है। देश की विकासशील योजनाओं व सामूहिक प्रगति में भी बाधा आती है। इन समस्याओं के समाधान हेतु लोकतंत्र में पारदर्शिता, जवाबदेही व दलीय सहयोग की भावना को विकसित करना अत्यंत ही आवश्यक है।

मुख्य शब्द : प्रगति, विकास, राजनीतिक अस्थिरता, दलीय भावना व सहयोग, दलीय राजनीति, पाटी हित, व्यक्तिगत स्वार्थ, ध्रुवीकरण, राजनेता, भ्रष्टाचार।

दलदल बनती जा रही है दलीय राजनीति

हमारे देश में जितने राजनीतिक दल हैं; शायद ही किसी अन्य में इतने अधिक राजनीतिक दल होगें। हमारे देश में एक प्रसिद्ध लोक कहावत है- 'कोस-कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी' आज हम गौर करें तो पायेंगें कि कुएँ तो अब अतीत की पहचान रह गये हैं और भाषा भी लगभग एक जैसी ही हो गयी है, जिसमें नैतिकता का स्तर गिर चुका है। जनता को अब कोस-कोस पर एक नया राजनीतिक दल मिलता है, जिनकी भाषा, भाषणों व विचारधारा का फॉर्मेट तो एक ही है। सभी दल एक-दूसरे के विरुद्ध कमर कसकर मैदान में उतरते हैं और अनर्गल प्रलाप, व्यर्थ प्रपंच, झूठे रोजगार के दावों को अधिक श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयास करते हैं।

आम जनता का हित इनकी दलीय विचारधारा से अब गायब हो चुका है। अब तो जनता भी माननीय राजनेताओं के मन की बात को बखूबी समझती है इस कारण राजनीति को दलदल समझती है।

जब दलीय भावना गहरी व स्वार्थ से परे होती है तभी जनता भावनात्मक रूप से इनसे जुड़ती है। स्वतंत्रता के पहले भी हमारे देश में राजनीतिक दल थे परंतु तब दलीय राजनीति इतनी कुत्सित मानसिकता वाली नहीं थी। शायद यही कारण

था कि तब जनता तन, मन व धन से भी स्वतंत्रता व सामाजिक आंदोलनों में अपना सहयोग देती थी और देश के नेताओं को अपना आदर्श मानती थी। उनके नेतृत्व में जनता अपनी सहभागिता आवश्यक समझती थी।

दलगत राजनीति से समाज में बदलाव असंभव

राजनीति व बदलाव एक-दूसरे से परस्पर जुड़े हुए हैं। दलीय राजनीति समाज बदलाव का एक महत्वपूर्ण कारक कारक अवश्य बन सकती है परंतु इसमें सकारात्मकता की कमी रहेगी। दलीय राजनीति में ध्रुवीकरण व सत्ता का दुरुपयोग जैसी जटिल समस्याएँ हैं, जो समाज को विभाजित कर देती है।

2014 का शांति का नोबेल पुरस्कार पाने वाले कैलाश सत्यार्थी का मानना है कि चुनाव या राजनीतिक दल समाज में बदलाव नहीं ला सकते। उनका कहना है कि, ''जो भी जनांदोलन है, वह राजनीतिक है, लेकिन हम दलष की राजनीति नहीं करते हम जन की राजनीति करते हैं।

निम्न स्तर की दलीय राजनीति से सामाजिक व सांस्कृतिक ध्रुवीकरण भी उत्पन्न होता है। जिससे दलों के भीतर असंतोष व अवसरवादिता बढ़ती है।

स्वस्थ दलीय राजनीति ही मतदाताओं को आकर्षित कर सकती है। यदि नए विचार राजनीति में प्रवेश करते हैं, तभी नये नीतिगत समाधान दलगत प्रतिस्पर्धा व संघर्ष के माध्यम से ही उभरते हैं, इसके बिना यह असंभव है।

निःसंदेह यदि दलीय राजनीति की कलुष्ति मानसिकता से आज के राजनीतिक दल थोड़ा ऊपर उठ कर सोचें तो राजनीति के क्षेत्र में सकरात्मक व रचनात्मक परिवर्तन अवश्य हो सकते हैं।

मतभेद व टकराव की राजनीति से बचना होगा

स्वतंत्रता से पूर्व भी हमारे देश में कई राजनीतिक दल थे, जिन्होंने एक-जुट होकर स्वतंत्रता आंदोलन नेतृत्व किया था। उन दलों के बीच भी मतभेद व विभाजन हुए उनकी विचारधारा, उद्देश्य, कार्यशैली समान थे। उनकी विचारधारा में राष्ट्रीयता, अहिंसा व सामाजिक सुधार का महत्वपूर्ण स्थान था। संघर्ष, त्याग, बलिदान के माध्यम से एक संपूर्ण सशक्त व विकसित भारत के निर्माण का इच्छा उनका प्रमुख्या उद्देश्य था। जनता से स्वयं जुडकर उनकी समस्याओं का समाधान वे अपना कत्तर्व्य समझते थे।

परंतु आज के दलों में ठीक विपरीतता है। राजनीतिक दलों के मध्य संघर्ष व दोषारोपण की प्रवृत्ति ने राजनीति के क्षेत्र को दुषित कर दिया है। उनके स्वयं के संघर्ष व स्वार्थ इतने हावी है कि, वे जनता से जुड़ने का समय उनके पास है ही नहीं। राष्ट्र हिट के स्थान पाटी हित को वे अधिक प्राथमिकता देते हैं पक्ष-विपक्ष के नेता एक दूसरे के चरित्र की भी सरेआम धज्जियाँ उड़ाना वे गर्व की बात समझते हैं। यही प्रमुख कारण है कि वे अपने आपसी मतभेद व टकराव की स्थितियों को स्वयं रोकने में भी असमर्थ है।

राष्ट्रीय भावना दलगत राजनीति से ऊपर

हमारे देश के पूर्व उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ ने अपने जयपुर दौरे (30 जून, 2015) में स्नेह मिलन समारोह राष्ट्रीय भावना को दलगत राजनीति से ऊपर बताते हुए कहा, ''जब हम देश के बाहर जाते हैं, तो न पक्ष होता है न प्रतिपक्ष होता है, हमारे सामने भारतवर्ष होता है।ष ऑपरेशन सिंदूर की सफलता के बाद दलगत राजनीति से ऊपर उठकर दुनिया के अनेक कोनों में संसद सदस्यों का जाना एक बहुत बड़ा कदम है, कि राष्ट्र हमारे लिए सर्वोपरि है।

श्री धनखड़ ने राष्ट्रीय भावना हुए कहा कि राजनीति में आप अलग-अलग दलों में हो सकते हैं और इसमें में भी बदलाव होता रहता है। हमारे राजनीतिक मतभेद देश के अंदर है और जब देश की बात आती है, तो राजनीतिक चश्मे से कुछ नहीं देखा जायेगा।

जब हमारे देश की संस्कृति इतनी समृद्ध व बेमिसाल है, हमारी सैन्य व्यवस्था भी सुदृढ़ है। भारत की अर्थव्यवस्था भी चार बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। हमारी विशेष गिनती विश्व के युवा देशों में होती है तो हमारी दलीप राजनीति इतनी विकृत क्यों है? यह एक अत्यंत जटिल प्रश्न है जो हमारी प्रगति में बाधक है। हमारे लोकतंत्र को स्वस्थ दलीय राजनीति की आवश्यकता है, जहाँ वाद-विवाद हो संवाद हो न कि सत्ता संघर्ष की गंदी राजनीति हो।

निष्कर्ष

वर्तमान में राजनीतिक दलीप माहौल हमारे प्रजातंत्र के लिए चिंता व चिंतन दोनों का विषय है। राजनीतिक दलों के गिरते मूल्य व सिद्धांत ने विचारधाराओं का विभाजन कर दिया है। राजनीति का स्तर आज इतना गया है कि हमारे नेता बेलगाम होकर कोई भी वक्तव्य जारी कर देते हैं, बिना यह सोचे कि यह देश हित में है या नहीं? जनता को अब जर्नादन की जगह वोट बैंकर रूप में देखते हैं। जनता का हित दलों के टकराव में कहीं गुम हो गया है।

हमारे देश के पूर्व उपराष्ट्रपति जगदीप धनखड़ ने जयपुर संबोधन में कहा है कि, ''हमारी संविधान-सभा ने करीब तीन साल तक बड़ा परिश्रम करके हमें संविधान दिया, उसमें गहरी समस्याएँ थीं, एकमत होना मुश्किल था, परंतु उन्होंने कभी टकराव नहीं किया। वहाँ कभी अशांति व व्यवधान नहीं हुआ। वाद-विवाद, मेल-मिलाप व सहमति के माध्यम से बातचीत की। इन अथक प्रयासों के बाद हमें विश्व का सबसे विस्तृत व बड़ा संविधान प्राप्त हुआ।

22 जुलाई, 2024 को पूर्व राष्ट्रपति स्त्री रामनाथ कोविंद ने अपने विदाई भाषण में कहा कि ''संसद लोकतंत्र का मंदिर है संसद में भी परिवार की तरह मतभेद होते रहते हैं, आगे का रास्ता तय करने में विभिन्न दलों के विचार अलग हो सकते हैं लेकिन हम सब संसद रूपी परिवार के सदस्य हैं, किंतु हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता राष्ट्र रूपी विशाल परिवार के हित में निरंतर कार्य करते रहना है।''

श्रीः कोविंद ने यह भी कहा कि ''पार्टियो को दलगत राजनीति से ऊपर उठना चाहिए और राष्ट्र सर्वोपरि की भावना से ये विचार करना चाहिए कि देशवासियों के विकास व कल्याण के लिए कौन-कौन कार्य आवश्यक हैं।''

आज हम भारत की आजादी के 'अमृत काल' में है, इसलिए राजनीतिक दलों अपनी मानसिकता भी अमृत घोलने की आवश्यकता है, जिससे वे दलीय राजनीति का विष थोड़ा कम हो जाये।

हम डॉ. राजेंद्र प्रसाद, महात्मा गाँधी, पटेल, नेहरू, एस राधाकृष्णनन, डॉ. कलाम, अटल बिहारी वाजपेयी जैसे महान नेताओं के उत्तराधिकारी हैं। इसलिए हमें निरंतर सचेत रहने की आवश्यकता है कि हम अपनी राजनीति को इतना विषैला न बनाये, जो हमारे देश की प्रगति की राह में रोड़ा बन जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची

(1) भारत में दल व दल की राजनीति (रजनी कोठारी)

(2) भारत में राजनीति कल और आज (रजनी कोठारी)

(3) राष्ट्रपति कोविंद का विदाई भाषण (राज्य सभा चैनल youtube)

(4) दलगत राजनीति से समाज में बदलाव संभव नही (BBC News हिन्दी)

(5) पूर्व उपराष्ट्रपति का जयपुर 'स्नेह सम्मेलन' में भाषा (PIB Delhi 30 June 2025)

(6) स्वतंत्रता-पूर्व भारत में राजनीतिक दल (Civil Daily www. civilsdaily-com)

(7) 'दलगत राजनीति बस दलदल है' महेंद्र पांडेय (Janjwar Deck 3 Dec- 2024)

(8) 'भारतीय लोकतंत्र व बदलता राजनीतिक मंजर-राहुल वर्मा (www.orfonline.org/ hindi/ expert speak)

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

हिंदी साहित्य में यथार्थ का सौंदर्यबोध

डॉ. अशोक कुमार
शोध निदेशक
प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़

संदीप कुमार
पीएच० डी० शोधार्थी
गाँव व डाक- गुढ़ा कैमल, तहसील- कनीना,
जिला- महेंद्रगढ़ (हरियाणा) 123027
मो. 8053167200
sandeepyadav15121992@gmail.com

शोध सारांश : यह सत्य है कि साहित्य समाज का दर्पण है, साहित्य के द्वारा ही किसी भी युग की सांस्कृतिक जीवन का वास्तविक ज्ञान प्राप्त होता है क्योंकि साहित्य समाज से सीधा जुड़ा रहता है। समाज में जो भी घटना घटित होती है, उसे ही साहित्यकार साहित्य में पिरोने का काम करते है, फिर वही साहित्य की चीजें एक पीढ़ी से दूसरी ओर दूसरी से तीसरी पीढ़ी में स्थानांतरण होती रहती है। ये ही चीजें सामाजिक अनुभूतियाँ और संवेदना साहित्य का विषय बन जाती हैं। अतः साहित्य को सही तरीके से पहचानने के लिए यथार्थ को जानना अति आवश्यक है। इसमें साहित्य के प्रख्यात आलोचकों ने चिंतन- मंथन कर अपने विचार प्रस्तुत किए जाते है और उस चिंतन की गहनता को देखते हुए सब कुछ रिकार्ड कर लिया जाता है फिर उसी दस्तावेज को यथार्थ का रूप दे दिया जाता है।

मुख्य शब्द- यथार्थ, रियलिज्म, साहित्य, भाव, कला आदि।

परिचय- हिंदी साहित्य के क्षेत्र में यथार्थवादी चेतना का उद्भव आधुनिक युग में में हुआ है। प्रेमचंद युग से हमें यथार्थवाद का वास्तविक स्वर दिखाई देता है, उसके पश्चात से लेकर स्वातंत्रायोत्तर युद्ध काल तक के कथाकार जीवन में यथार्थवाद हमें लगातार दिखाई देता है। इसी क्रम में महिला कथाकार भी यथार्थ के निरूपण में पीछे नहीं रही है और इन्हीं कथाकारों में उषा प्रियंवदा, अलका सरावगी, रमणिका गुप्ता आदि तमाम नाम शामिल हैं, जिन्होंने मानव जीवन की विडंबनाओं और जटिलताओं को संवेदना के धरातल पर यथार्थ पर अभिव्यक्ति प्रदान की है। यथार्थवादी कथाकारों ने वही लिखा है जो उन्होंने अपने आसपास अनुभव किया देखा है जैसे उषा प्रियंवदा ने लिखा है- "कि मैं वही लिखती हूं जिससे मैं परिचित हूं।"

प्रेमचंद के समय में कहानी में यथार्थवाद का आरंभ हुआ। प्रेमचंद पहले क्रांतिकारी कहानीकार हैं जिन्होंने हिंदी कहानी को कल्पना लोक से निकालकर यथार्थ की ठोस भूमि प्रदान की और उन्होंने सबसे पहले हिंदी कहानी के शिल्प और शैली को नया रूप दिया। हिंदी कहानियों में पहली बार पीड़ित, शोषित, दलित और मजदूरों की समस्याओं का चित्रण किया।

यथार्थ- यथार्थ शब्द अंग्रेजी भाषा के 'रियल' का समानार्थी है, जिसका अर्थ है वास्तविक (वस्तु सम्बन्धी)। यथार्थ शब्द का उद्भव दो अक्षरों के मेल से हुआ है 'यथा' और 'अर्थ'। यथा का हिंदी मतलब होता है 'जैसा' और अर्थ का मतलब होता है 'वस्तु, तत्व, द्रव्य, पदार्थ' आदि। संसार की प्रत्येक वस्तु जिसका अनुभव हमें अपनी इन्द्रियों द्वारा होता है, यथार्थ कहलाता है। सामान्य रूप से यथार्थ का अर्थ होता है "जैसा होना चाहिए ठीक वैसा, उचित, वास्तविक, सच्चा।" रामचंद्र वर्मा द्वारा संपादित मानक हिंदी कोश में यथार्थ का अर्थ बताया है जो अपने अर्थ आदि के ठीक अनुरूप हो, ठीक, उचित, जैसा होना

चाहिए ठीक वैसा ही, वाजिव। इसी प्रकार नागेंद्र द्वारा संपादित साहित्य कोश में यथार्थ का अर्थ बताया है-"जिसका अस्तित्व वास्तव में है।"

यथार्थवाद का अभिप्राय- यथार्थवाद (रियलिज्म) दो शब्दों यथार्थ (वास्तविक) और वाद (सिद्धांत) के योग से मिलकर बना है जिसका अर्थ है 'जीवन की सच्ची अनुभूति और वास्तविकता का सिद्धांत' यथार्थवाद भौतिकवादी जगत को मानता है और आदर्शवाद के द्वारा जगत को मिथ्या कहने वाली भावना का विरोध करता है। साहित्य जगत में यह सोचने का एक विशिष्ट तरीका है, जिसके अनुसार लेखक दुनिया और अपने समाज में हो रहे परिवर्तनों की वास्तविकता को अपनी कलम द्वारा सजीव जीवन का चित्रण करता है। यथार्थवाद के अनुसार मनुष्य को अपने चारों ओर के वातावरण का ज्ञान होना चाहिए और उसे जानकारी होनी चाहिए कि वह उस वतावरण को परिवर्तित कर सकने में सक्षम है या नहीं। इसी ज्ञान के अनुसार ही उसे अपने कार्य करने चाहिए, जैसे डॉ. भीमराव आंबेडकर को अपनी जाति के लोगों की वास्तविकता का पूर्ण ज्ञान था, उनकी परेशानियों से भी वे भलीभांति परिचित थे, वे यह भी जानते थे कि दलित जाति के लोगों की यथार्थ परेशानियों को कैसे बदला जा सकता है। इसी तरह कई क्रांतिकारी लेखक हुए हैं, जिन्होंने अपनी लेखनी के बल पर समाज की तमाम बुराइयों को उजागर करके समाज से उन्हे दूर करने को मजबूर किया है। वास्तव में साहित्य का यथार्थवाद आधुनिक युग की देन है। कला और साहित्य के क्षेत्र में यथार्थवाद का उद्धव लगभग 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में फ्रांस में हुआ था और यथार्थवाद पर सर्वप्रथम विचार प्रकट करने वाले 'मर्क्यू फ्रांसे' का नाम लिया जाता है, उन्होंने 1828 ई० में यथार्थवाद पर एक निबंध लिखकर कला और साहित्य के क्षेत्र में इसे स्थापित किया। यथार्थवाद के मूल में वैज्ञानिक आविष्कार और औद्योगिक क्रांति विद्यमान है। जिसने जीवन और जगत को देखने की एक नवीन दृष्टि प्रदान की और नई सामाजिक व्यवस्था को जन्म दिया। लगभग सभी आधुनिक दौर की महिला कथाकारों ने अपनी कहानियों में यथार्थबोध का उल्लेख किया है।

यथार्थवाद की परिभाषाएँ- यथार्थवाद एक विश्वास का सिद्धांत है जो जगत को जाँच-परख कर वैज्ञानिक तरीके से स्वीकार करता है, वह जगत को वास्तविक मानता है।

स्वामी रामतीर्थ- इनके अनुसार यथार्थवाद स्वीकारता है कि हम जो कुछ भी अपनी इंद्रियों के माध्यम से प्रत्यक्ष अनुभव करते है, वही कारण वस्तुओं का एक यथार्थ जगत है।

जे.एस. रॉस- इनके अनुसार यथार्थवाद संसार को उसके मूलरूप (जिसमें वह दिखायी देता है) में स्वीकार करता है।

बटलर- इनके अनुसार यथार्थवाद का प्रमुख विचार यह है कि बाह्य जगत की सभी वस्तुएँ (पदार्थ) वास्तविक है, उनका अस्तित्व उसे देखने वाले से अलग है अर्थात अगर उन पदार्थों को देखने वाले या महसूस करने वाले न हों तब भी उन पदार्थों का अस्तित्व रहेगा।

कार्टर वी. गुड- इसके अनुसार वास्तविक या भौतिक जगत चेतन मन से स्वतंत्र रूप से अस्तित्व रखता है तथा उसके गुण और प्रकृति उसके ज्ञान से ज्ञात होता है।

डॉ. त्रिभुवन सिंह- किसी वस्तु का ज्यों का त्यों ग्रहण करना ही यथार्थवाद का चित्रण है परन्तु सहित्यकार फोटोग्राफर नहीं होता है, वह निर्माता होता है। साहित्य में जो कुछ भी यथार्थ में चित्रण किया जाता है, यह वस्तुओं का तद्वत चित्रण न होकर संषलेषणात्मक चित्रण होता है। साहित्यकार मात्र उसका चित्रण ही नहीं वल्कि चुनाव भी करता है। वह प्रस्तुत दृश्य को ज्यों का त्यों चित्रित नहीं करता वल्कि अपनी रुचि के अनुसार वस्तु के दृश्यों को नये सिरे से सजाता है और फिर उसका चित्रण करता है। यही कारण है कि एक वस्तु का विभिन्न साहित्यकारों द्वारा अलग-अलग तरीकों से विश्लेषण एवं चित्रण किया जाता है। इस कारण वस्तु जगत और भाव जगत के सत्य में अन्तर दिखता है।

बाबू गुलाबराय- इनके अनुसार हमारे सामने नित्य प्रति घटने वाली घटनाएँ ही यथार्थ है। उसमें धूप-छाँव, पाप-पुण्य और सुख-दुःख आदि मिश्रित रहता है। यह सामान्य भाव भूमि के धरातल पर रहकर वर्तमान की वास्तविकता से सीमाबद्ध रहता है।

प्रेमचन्द- इनके अनुसार आजकल के लेखक अनोखे ओर विशिष्ट चरित्रों की खोज में अपनी शक्ति नष्ट कर देते हैं।

जबकी उनको चाहिए कि वहाँ जाएँ जहाँ देश की वास्तविक आबादी रहती है और उन सीधे-साधे लोगों का वर्णन करें, यही यथार्थवाद है।

लुकाच- इनके अनुसार लेखक अपने आसपास जो भी देखता है, उसका निडरतापूर्वक पूरी ईमानदारी व निष्पक्षता से वर्णन करना ही यथार्थवाद है।

एंगेल्स- इनके अनुसार मेरे विचार से 'यथार्थवाद' का आशय यह है कि लेखक विवरणों और ब्यौरों के सत्य प्रस्तुतीकरण के अलावा प्रतिनिधि पात्रों को प्रतिनिधि परिस्थितियों में सच्चाई के साथ चित्रित करे।

नगेन्द्र- इनके अनुसार यथार्थवाद से तात्पर्य उस दृष्टिकोण से है, जिसमें कलाकार अपने व्यक्तित्व को यथार्थ संभव तटस्थ रखते हुए वस्तु को, जैसी वह है वैसी ही देखता है और चित्रित करता है अर्थात यथार्थवाद के लिए वस्तुगत दृष्टिकोण अनिवार्य है।

अतः वस्तु या परिस्थिति की वास्तविक तस्वीर दिखाना ही यथार्थवाद है।

यथार्थवाद की विशेषताएं- यथार्थवाद की निम्नलिखित विशेषताएं हैं-

- यह साहित्य की एक विशेष चिंतन पद्यति है। इसके अनुसार साहित्यकार या लेखक अपने समाज और बाह्य जगत में होने वाले परिवर्तनों एवं घटनाओं का यथातथ्य चित्राण करता है।
- संसार के लगभग सभी साहित्यों में यथार्थवाद मौजूद है। अर्थात यह सर्वव्यापी है।
- यथार्थवाद संसार में क्रांति, परिवर्तन और सुधार का कारक है।
- यथार्थवाद के मूल में औद्योगिक क्रांति एवं वैज्ञानिक आविष्कार मौजूद हैं। इसके द्वारा ही जीवन को देखने की नवीन दृष्टि प्राप्त हुई, जिससे एक नई सामाजिक व्यवस्था ने जन्म लिया।
- यथार्थवाद में यथार्थ (इन्द्रियों द्वारा महसूस की जा सकने वाली वस्तु) ही सत्य है।
- यथार्थवाद आंगिक सिद्धांत को मानता है, जिसकी वजह से संसार में सभी नियमों, विचारों, परिस्थितियों आदि में परिवर्तन होता रहता है।
- यथार्थवाद यांत्रिक होता है अर्थात संसार में नियमितता का होना परम आवश्यक है।
- यथार्थवादी विचारधारा अवलोकन, निरिक्षण तथा प्रयोग पर बल देती है। यह एक वैज्ञानिक विचारधारा है।
- यथार्थवाद ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण पर जोर देता है।
- यथार्थवाद के अनुसार जगत ही वास्तविक सत्य है और जगत नियमित है।
- यथार्थवाद वर्तमान एवं व्यवहारिक जीवन को ही मान्यता देता है। यह उन नियमों, आदर्शों को महत्व नहीं देता, जिनका व्यवहारिकता और वर्तमान से संबंध नहीं होता है।
- जयशंकर प्रसाद के अनुसार यथार्थवाद में विशेषताओं की प्रधानत है, लघुता की ओर साहित्यिक दृष्टिपात। उसमें स्वभावतः दुःख की प्रधानता और वेदना की अनुभूति आवश्यक है। लघुता से मेरा अभिप्राय है, साहित्य के माने हुए सिद्धांत के अनुसार महत्ता के काल्पनिक चित्रण से अतिरिक्त व्यक्तिगत जीवन के दुःखों और अभावों का वास्तविक उल्लेख।
- नंददुलारे वाजपेयी के अनुसार यथार्थवाद वस्तुओं की पृथक् सत्ता का समर्थक है।
- यथार्थवाद यूरोपीय साहित्य की देन है। इसका उद्भव फ्रांसीसी क्रांति के परिणाम स्वरूप हुआ। डॉ०त्रिभुवन सिंह के अनुसार इसका विकास मुख्यतः पाँच बातों से प्रभावित माना जाता है- 1. डार्विन का विकासवाद, 2. फ्रायड का मनोविश्लेषण, 3. मार्क्स का अर्थविज्ञान, 4. यूरोपीय यथार्थवादी उपन्यास, 5. वैज्ञानिक प्रभाव।

यथार्थवाद का साहित्य से संबंध यथार्थवाद का साहित्य से गहरा संबन्ध होता है। ज्यादातर साहित्य में यही लिखा जाता है कि जिसे साहित्यकार अपने चारों ओर महसूस करता है, देखता है। साहित्यकार अपने समय की घटनाओं का लिपिबद्ध चित्रण करते है जो समय के साथ इतिहास बन जाता हैं, आने वाला समाज उन्हीं घटनाओं की अच्छाई और बुराई को जानकर

उसकी बुराइयों को दूर करने का प्रयत्न करता है, जिससे समाज में परिवर्तन होता हैं। इसी प्रकार पुरानी वैज्ञानिक खोजों के बारे में जानकर उसमें अपने अनुसार परिवर्तन करके किसी भी आविष्कार की गुणवत्ता को वताया जाता है। अतः यथार्थवाद के साथ साहित्यकार का चोली-दामन का साथ है। अगर साहित्यकार अपने समय के यथार्थ को वर्णित न करें तो आने वाला समाज पिछली पीढी की अच्छाई और बुराइयों को नहीं जान पाएगा और न ही समाज में कोई सुधार संभव हो पाएगा। अतः संसार की प्रगति में यथार्थवादी साहित्यकारों का महत्वपूर्ण योगदान है जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता।

यथार्थ साहित्य एवं कला की अभिव्यक्ति का बुनियादी विषय रहा है। देश-विदेश के साहित्य और कला में यथार्थ का चित्रण प्रारम्भ से होता रहा है। साहित्य तथा कला स्वभावतः यथार्थजीवी है। हिन्दी साहित्य में 'यथार्थवाद' यूरोपीय साहित्य की देन है। लेकिन हिन्दी साहित्य के भीतर यह विचारधारा के रूप में नहीं मिलता जैसा कि यूरोपीय साहित्य में मिलता है।

आधुनिक गद्य साहित्य की लगभग सभी विधाओं का आविर्भाव भारतेन्दु युग में हुआ था। लगभग इसी युग से हिन्दी साहित्य में यथार्थवादी चेतना के समावेष और विकास का आभास होता है। हिन्दी कथा-साहित्य और यथार्थ का अटूट सम्बन्ध रहा है। प्रेमचन्द यथार्थ को कथा-साहित्य का प्राण मानते थे। वहीं हजारी प्रसाद द्विवेदी का मानना है कि कविता यथार्थवाद की उपेक्षा कर सकती है, संगीत यथार्थ को छोड़कर भी जी सकता है, पर उपन्यास और कहानी के लिए यथार्थ प्राण है।

अतः इस प्रकार हम देखते है कि आधुनिक काल में कोई भी साहित्य की रचना यथार्थवाद के बिना संभव नहीं है और यथार्थवाद आधुनिक हिन्दी साहित्य का प्रांण है।

संदर्भ सूची

1. वर्मा, रामचन्द्र, मानक हिंदी कोष पृ० ४३५
2. मिश्र, शिवकुमार, यथार्थवाद, वाणी प्रकाशन दिल्ली, संस्करण २००६, पृ०२५
3. द्विवेदी, हजारी प्रसाद, विचार और वितर्क, पृ० १०३
4. सत्यकाम, डॉ०, आलोचनात्मक यथार्थवाद और प्रेमचंद, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण १६६४, पृ० ६
5. नगेन्द्र, साहित्य कोष (मानविकी खंड), पृ ० ४३१

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

रामायण में उल्लेखित मूल्य शिक्षा के पदों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

शकुंतला जोशी
(शोधार्थी)
जैन विश्व भारती (डीम्ड यूनिवर्सिटी, लाडनूं)
प्रो. बनवारी लाल जैन
शिक्षा शास्त्र विभाग
जैन विश्व भारती (डीम्ड यूनिवर्सिटी, लाडनूं)

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध वाल्मीकि रामायण के विभिन्न कांडों के पदों में निहित नैतिक मूल्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन पर केंद्रित है, जिसमें भारतीय साहित्य की महान परंपरा से प्राप्त नैतिक विचारों का गहन विवेचन किया गया है। वाल्मीकि रामायण, केवल एक पौराणिक आख्यान नहीं, बल्कि एक नैतिक-दार्शनिक ग्रंथ भी है, जिसमें धर्म, कर्तव्य, सत्य, करुणा, त्याग, दया, मर्यादा एवं न्याय जैसे मूल्यपूर्ण तत्व विद्यमान हैं। शोध में रामायण के सातों कांडोंः बालकांड, अयोध्याकांड, अरण्यकांड, किष्किन्धाकांड, सुंदरकांड, लंकाकांड एवं उत्तरकांड से चयनित पदों का भाषिक, सांस्कृतिक और नैतिक दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया है। प्रत्येक कांड में विभिन्न पात्रों की भूमिका के माध्यम से प्रस्तुत नैतिक मूल्यों को रेखांकित किया गया है। श्रीराम का मर्यादित आचरण, सीता की पवित्रता और धैर्य, लक्ष्मण की सेवा भावना, भरत की निष्काम भक्ति, हनुमान की निष्ठा—इन सबके माध्यम से मानवीय जीवन के उच्चतम मूल्यों का चित्रण हुआ है। यह अध्ययन पाठकों को न केवल भारतीय साहित्य की नैतिक समृद्धि से अवगत कराता है, बल्कि आज के नैतिक संकट में एक वैचारिक संबल भी प्रदान करता है।

प्रस्तावना

मूल्य मनुष्य के व्यवहार और अनुभव का वह गुण है, जो उसे पशुओं से अलग बनाता है। मूल्यों की कोई निश्चित संख्या या संकल्पना नहीं होती, क्योंकि मनुष्य जीवन पर्यंत सीखता रहता है। जीवन के वे अनुभव, जो उसके व्यवहार को निर्देशित करते हैं, मूल्य कहलाते हैं। मूल्यों के माध्यम से व्यक्ति का जीवन संयमित और नियमित होता है। मूल्य मानव व्यवहार को नियंत्रित कर उसे सही दिशा की तरफ प्रेरित करते है। ये मूल्य व्यक्ति में जीवन के प्रति उचित दृष्टिकोण अपनाने की क्षमता विकसित करते हैं। मानवीय चेतना से जुड़े होने के कारण इन्हें मानवीय मूल्य भी कहा जाता है। ये मूल्य व्यक्ति को समाज के साथ समायोजन करने में मदद कर उसे शांत एवं समरस जीवन जीने में सक्षम बनाते हैं।

भारतीय शिक्षा परंपरा का मूल उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, अपितु व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के माध्यम से उसे समाजोपयोगी, नैतिक, और विवेकशील नागरिक बनाना रहा है। हमारे प्राचीन ग्रंथ जैसे वेद, उपनिषद, महाभारत, रामायण,

मनुस्मृति, नीतिशतक और पंचतंत्र आदि सभी शिक्षा को एक माध्यम मानते हैं जिसके द्वारा मनुष्य अपने जीवन के परम लक्ष्यों दृ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति कर सके। इन ग्रंथों में शिक्षा को केवल बौद्धिक विकास नहीं, बल्कि आत्मिक, नैतिक और सामाजिक विकास से भी जोड़ा गया है।

किन्तु समय के साथ, विशेषतः औपनिवेशिक काल में, भारतीय शिक्षा प्रणाली अपने मूल उद्देश्यों से भटक गई। औपनिवेशिक शासन ने शिक्षा को एक ऐसी प्रणाली में परिवर्तित कर दिया जो केवल नौकरी पाने का माध्यम बनकर रह गई। चरित्र निर्माण, मूल्यबोध, समाजोन्मुखता और आध्यात्मिक चेतना जैसे तत्व शिक्षा से धीरे-धीरे लुप्त होते गए। वर्तमान समय में, जब भारत 21वीं सदी में प्रवेश कर चुका है, तो आवश्यकता थी एक ऐसी शिक्षा नीति की जो पुनः शिक्षा के उस प्राचीन उद्देश्य को जागृत कर सके जो व्यक्ति को केवल लक्ष्य प्राप्ति हेतु नहीं, बल्कि जीवन में सही निर्णय लेने, समाज के प्रति उत्तरदायी बनने तथा वैश्विक मंच पर भारतीय विचारधारा को प्रतिष्ठित करने में सक्षम बना सके। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसी दृष्टिकोण का पुनरुद्धार है। यह नीति केवल पाठ्यचर्या और रोजगार तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें भारतीय चिंतन परंपरा, नैतिक शिक्षा, समावेशिता और शोध संस्कृति को केन्द्रीय स्थान दिया गया है। यह नीति शिक्षा को मूल्य आधारित, भारतीयता से जुड़ा हुआ और 21वीं सदी की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने का प्रयास करती है।

शोध की आवश्यकता

शिक्षा के क्षेत्र में चिंतन करने पर ज्ञात होता है कि प्राचीन भारतीय शिक्षा-प्रणाली नैतिक मूल्यों से भरी-पूरी थी और आदर्श जीवन जीना सिखाती थी, उस समय गुरु-शिष्य परंपरा अपने सर्वोच्च रूप में विद्यमान थी, गुरु को भगवान से भी ऊंचा दर्जा प्राप्त था। दूसरे देशों के लोग यहां शिक्षा लेने आते थे और यह देश आध्यात्म एवं ज्ञान के क्षेत्र में विश्व-गुरु कहलाता था, किंतु बाद में देश गुलामी के दौर से गुजरा और यहां की शिक्षा में आमूल-चूल बदलाव कर दिए गए। यहां की संस्कृति, आध्यात्म एवं नैतिकता की अवहेलना की जाने लगी और विदेशी सोच के अनुरूप शिक्षा दी जाने लगी, जिससे मूल्यहीनता और अपसंस्कृतिकरण का दौर शुरु हुआ तथा हमारा शिक्षा का स्तर गिरता गया। मूल्यहीन शिक्षा, स्वार्थपरता और आपाधापी के इस युग में हमें पुनः हमारे खोए हुए आदर्शों की प्रतिष्ठा करनी है और पर्यावरण-संरक्षण से जुड़ी शिक्षा तथा मूल्य शिक्षा के उज्ज्वल आदर्श को समाज में पुनर्स्थापित करना है। अतः महर्षि वाल्मीकि की ''रामायण'' जो हमारे देश की संस्कृति को पोषित करने वाला महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है, उसमें निहित मूल्य शिक्षा का विश्लेषणात्मक अध्ययन करके बता सकते हैं कि वर्तमान में, नैतिक दृष्टि से मूल्य शिक्षा के सूत्र हमें किस रूप में रामायण में मिलते हैं और आज के युग में कितने महत्त्वपूर्ण हैं।

शोध के उद्देश्य

वाल्मीकि रामायण के पदो में निहित मूल्य शिक्षा का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन में विश्लेषणात्मक अनुसंधान विधि का प्रयोग किया गया है। क्योंकि यह विधि किसी भी विषय या ग्रंथ का गहन अध्ययन कर उसमें निहित संदेशों, मूल्य और निहित अर्थों को समझने में सहायक होती है।

प्रदत्त संकलन के स्रोत

इस शोध के लिए प्राथमिक डेटा वाल्मीकि रामायण से ही लिया गया है। शोधकर्ता ने रामायण के सभी कांडों (खंडों) को एकत्रित कर उनकी विषयवस्तु, मूल भावनाओं और अंतर्निहित शैक्षिक मूल्यों का गहराई से अध्ययन किया। द्वितीय स्रोत के रूप में रामायण पर किए गए अन्य शोध, शोध पत्र, संबंधित पुस्तको आदि का अध्ययन किया गया।

वाल्मीकि रामायण में मूल्य शिक्षा से संबंधित पदों का विश्लेषण

संपूर्ण वाल्मीकि रामायण ही मनुष्य के उच्च नैतिक चारित्रिक गुणों की व्याख्या करता है। वाल्मीकि रामायण के लगभग सभी पदों में नैतिक मूल्य विद्यमान है प्रस्तुत शोध पत्र में वाल्मीकि रामायण में निहित कुछ महत्वपूर्ण नैतिक मूल्य का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

1. आदर्श व्यक्तित्व

स हि रूपोपपन्नश्च वीर्यवाननसूयकः। भूमावनुपमः सूनुर्गुणैर्दशरथोपमः ॥ २-१-९

स च नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं तु भाषते। उच्यमानोऽपि परुषं नोत्तरं प्रतिपद्यते ॥ २-१-१०

कथञ्चिदुपकारेण कृतेनैकेन तुष्यति। न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया ॥ २-१-११

न चानृतकथो विद्वान् वृद्धानां प्रतिपूजकः। अनुरक्तः प्रजाभिश्च प्रजाश्चाप्यनुरज्यते ॥ २-१-१४

सानुक्रोशो जितक्रोधो ब्राह्मणप्रतिपूजकः। दीनानुकम्पी धर्मज्ञो नित्यं प्रग्रहवाञ्शुचिः ॥ २-१-१५

श्री राम रूपवान और पराक्रमी थे, यह उनकी बाहरी सुंदरता के साथ-साथ आंतरिक गुणो की भी व्याख्या करता है। श्री राम किसी व्यक्ति में दोष नहीं देखे थे। वह दूसरो से सदा शांत चित्त और सांत्वना पूर्ण मीठे वचन ही बोलते थे। यदि उनसे कोई कठोर वचन कह भी देता तो वह उसका उत्तर नहीं देते थे। उन पर यदि कोई एक बार उपकार भी कर देता था तो उसके प्रति वे सदैव कृतज्ञ रहते थे। किसी के सैकड़ो अपराध करने के बाद भी वे उसके अपराधों को याद नहीं रखते थे। श्री राम हमेशा सत्य बोलते थे। वृद्ध जनों का आदर करते थे और अपनी प्रजा के प्रति बड़े अनुरागी थे। उनके मन में दीन दुखियों के प्रति सदा दया भाव रहता था। वह अपनी इंद्रियों को वश में रखते थे और सदैव धर्म के गुण रहस्यों को जानने के इच्छुक रहते थे।

उपरोक्त गुण श्री राम के आदर्श मानवीय चरित्र का प्रतिरूप है। उनके व्यक्तित्व में विनम्रता, क्षमाशीलता, कृतज्ञता, सत्यनिष्ठा, दयालुता और ज्ञानार्जन की उत्कृष्ट इच्छा जैसे नैतिक मूल्य सम्मिलित है। यह मूल्य मनुष्य के लिए केवल व्यक्तिगत ही नहीं बल्कि सामाजिक और आध्यात्मिक उन्नति के लिए भी आवश्यक है।

2. सत्य निष्ठा और कर्तव्य

स राजराजो भव स्त्यसंगरः। कुलं च शीलं च हि रक्ष जन्म च।

परत्र वासे हि वदन्त्यनुत्तमं। तपोधनाः सत्यवचो हितं नृणाम् ॥ २-११-२९

कैकई दशरथ से कहती है कि सत्य ही श्रेष्ठ धर्म है, अतः उन्हें अपने वचनों की रक्षा करनी चाहिए। जीवन में सत्य निष्ठा सबसे महत्वपूर्ण है। एक व्यक्ति को अपने वचनों का पालन कठिन परिस्थिति में भी करना चाहिए।

3. धैर्य और कर्तव्य परायण

तत् अप्रियम् अमित्रघ्नः वचनम् मरण उपमम्। श्रुत्वा न विव्यथे रामः कैकेयीम् च इदम् अब्रवीत् ॥ २-१९-१

श्री राम केकेयी के कठोर और अप्रिय वचनों को सुनकर भी व्यथित नहीं होते और सहज भाव से वनवास स्वीकार कर लेते हैं।

4. त्याग और उदारता

अहम् हि सीताम् राज्यम् च प्राणान् इष्टान् धनानि च। हृष्टः भ्रात्रे स्वयम् दद्याम् भरताय अप्रचोदितः ॥ २-१९-७

श्री राम केकेयी से कहते हैं कि वह राज्य, सीता, संपत्ति और प्राण भी भरत को प्रसन्नता पूर्वक दे सकते हैं। उनकी भौतिक वस्तुओं के प्रति कोई आसक्ति नहीं है। श्री राम अपने सुख से अधिक दूसरों के हितों को प्राथमिकता देते थे। पारिवारिक प्रेम और सम्मान बनाए रखने के लिए वह अपना सर्वस्व त्याग सकते थे।

5. निहिस्वार्थ त्याग और कर्तव्य निष्ठा

अधिरोह आर्य पादाभ्याम् पादुके हेम भूषिते। एते हि सर्व लोकस्य योग क्षेमम् विधास्यतः ॥ २-११२-२१

स पादुके सम्प्रणम्य रामं वचनम्ब्रवीत्। चतुर्दश हि वर्षाणि जटाचीरधरो ह्यहम् ॥ २-११२-२३

तवागमनमाकाङ्क्षन् वसन्वै नगराद्बहिः ॥ २-११२-२४। तव पादुकयोर्न्यस्तराज्यतन्त्रः परंतप।

भरत ने श्री राम के चरणों में स्वर्ण भूषण से युक्त चरण पादुकाएं अर्पित की और उनसे अनुरोध किया कि वह उन पर अपने चरण रखें। इसके बाद उन्होंने श्री राम को प्रणाम कर कहा कि वह 14 वर्षो तक राज्य का संचालन श्री राम की पादुकाओ के माध्यम से करेंगे और स्वयं सन्यासी के समान जीवन व्यतीत करेंगे। भरत ने राज्य को व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए स्वीकार नहीं किया।

6. शरणागत की रक्षा

न एवम् अर्हथ माम् वक्तुम् आज्ञाप्यः अहम् तपस्विनाम्। केवलेन स्व कार्येण प्रवेष्टव्यम् वनम् मया ॥ ३-६-२२

श्री राम ऋषियों से कहते हैं कि वे सदा से ही तपस्वियों की सेवा करने के लिए तत्पर है। यह श्लोक शरण में आए हुए व्यक्तियों की रक्षा करना और करुणा जैसे नैतिक मूल्यों को दर्शाता है।

7. सेवा का महत्व

भवताम् अर्थ सिद्ध्यर्थम् आगतोऽहम् यदृच्छया। तस्य मे अयम् वने वासो भविष्यति महाफलः। ३-६-२४

श्री राम के अनुसार ऋषि मुनियों की सेवा से उनका वनवास भी सफल हो जाएगा। यह उनके सेवा धर्म की महानता को दर्शाता है।

8. प्रतिज्ञा पालन और सत्य निष्ठा

मया च एतत् वचः श्रुत्वा कार्त्स्न्येन परिपालनम् ॥ ४-१०-१६

ऋषीणाम् दण्डकारण्ये संश्रुतम् जनकाअत्मजे। संश्रुत्य न च शक्ष्यामि जीवमानः प्रतिश्रवम् ॥ ४-१०-१७

मुनीनाम् अन्यथा कर्तुम् सत्यम् इष्टम् हि मे सदा।

श्री राम सीता से कहते हैं कि उनके द्वारा ऋषियों की रक्षा करने हेतु की गई प्रतिज्ञा अटूट है। वह इसे कभी नहीं तोड़ सकते क्योंकि सत्य का पालन उनके लिए सर्वोच्च है। यह वचनबद्धता, सत्य निष्ठा और धर्म के प्रति निष्ठा को दर्शाता है।

9. धैर्य और सहनशीलता

आश्वसिहि नरश्रेष्ठ प्राणिनः कस्य न आपद द्य। संस्पृशन्ति अग्निवत् राजन् क्षणेन व्यपयान्ति च ॥ ४-६६-६

लोक स्वभाव एव एष ययातिः नहुष आत्मजः द्य। गतः शक्रेण सालोक्यम् अनयः तम् समस्पृशत् ॥ ४-६६-८

लक्ष्मण श्री राम से कहते हैं दुख और विपत्ति क्षणिक है इसीलिए धैर्य बनाए रखें। जीवन में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जिसे कष्ट ना मिला हो। संसार में सुख-दुख आते जाते रहते हैं, यह जीवन का स्वभाव है। समय हमेशा एक सा नहीं रहता इसीलिए धैर्य और संयम बनाए रखना आवश्यक है।

10. त्याग और निहिस्वार्थ सेवा

मम अयम् नूनम् अर्थेषु यतमानो विहंगमः। राक्षसेन हतः संख्ये प्राणान् त्यजति मत् कृते ॥ ३-६८-२

पश्य लक्ष्मण गृध्रो अयम् उपकारी हतः च मे। सीताम् अभ्यवपन्नो हि रावणेन बलीयसा ॥ ३-६८-२२

गृध्र राज्यम् परित्यज्य पितृ पैतामहम् महत्। मम हेतोः अयम् प्राणान् मुमोच पतगेश्वरः ॥ ३-६८-२३

श्री राम जटायु को देखते हुए कहते हैं कि जटायु ने अपने कार्य को सिद्ध करने के प्रयास में प्राण त्याग दिए। उसने अपना विशाल पक्षी राज्य छोड़कर धर्म और कर्तव्य के मार्ग को अपनाया। यह दर्शाता है कि सच्चा कर्तव्य किसी स्वार्थ के लिए नहीं बल्कि धर्म और न्याय की रक्षा के लिए निभाया जाता है।

11.मित्रता और विश्वास

आढ्यो वा अपि दरिद्रो वा दुःखितः सुखितोऽपि वा। निर्दोषः च सदोषः च वयस्यः परमा गतिः ॥ ४-८-८

उपकार फलम् मित्रम् अपकारो अरि लक्षणम्। अद्य एव तम् वधिष्यामि तव भार्या अपहारिणम् ॥ ४-८-२१

सुग्रीव श्री राम से कहते हैं कि मित्र चाहे धनी हो या निर्धन, सुखी हो या दुखी, दोषी हो या निर्दोष, वह मित्र के लिए सबसे बड़ा सहायक होता है। श्री राम कहते हैं कि उपकार ही मित्रता का फल है जबकि अपकार शत्रुता का लक्षण है।

12. नीति पूर्ण शासन और धर्म पालन

नयः च विनयः च उभौ यस्मिन् सत्यम् च सुस्थितम्। विक्रमः च यथा दृष्टः स राजा देश कालवित् ॥ ४-१८-८

ते वयम् मार्ग विभ्रष्टम् स्वधर्मे परमे स्थिताः। भरत आज्ञाम् पुरस्कृत्य निगृह्णीमो यथा विधि ॥ ४-१८-११

श्री राम बाली से कहते हैं जो राजा नीति, विनय, सत्य और पराक्रम से संपन्न हो वही देश काल को समझने वाला आदर्श शासक होता है। धर्म का पालन करने वाले व्यक्ति ही श्रेष्ठ माने गए हैं। दुष्टो को दंडित करना धर्म संगत है।

13. आज्ञा पालन और अनुशासन

कामम् खल्व् अहम् अपि एकः सवाजि रथ कुन्जराम् ॥ ५-५१-३१

लन्काम् नाशयितुम् शक्तः तस्य एष तु विनिश्चयः।

हनुमान अपनी शक्ति के बारे में बताते हुए कहते हैं कि वह अकेले ही लंका का नाश कर सकते हैं। लेकिन श्री राम की आज्ञा न होने के कारण वह ऐसा नहीं कर रहे हैं। यह श्लोक एक सच्चे योद्धा, अनुशासन और आज्ञा के पालन की शिक्षा देता है।

14.समय की महत्ता

त्वरते कार्यकालो मे अहश्चाप्यतिवर्तते। प्रतिज्ञा च मया दत्ता न स्थातव्यमिहान्तरे ॥१५-१-१३१

जब समुद्र और पर्वत हनुमान को विश्राम के लिए कहते हैं तब हनुमान जी कहते हैं कि वह कार्य के बीच में नहीं रूक सकते क्योंकि उन्हें समय का पालन करना है। यह समय प्रबंधन और संकल्पबद्धता का संदेश देता है। व्यक्ति को अपने कार्य के प्रति गंभीर रहते हुए समय की बर्बादी नहीं करनी चाहिए।

15. सच्चे शौर्य की परिभाषा

शूरेण धनदभ्रात्रा बलैः समुदितेन च। अपिह्य रामं कस्माद्धि दारचौर्यं त्वया कृतम् ॥ ५-२२-२२

सीता रावण से प्रश्न करती है कि यदि वह इतना ही शूरवीर है तो उसने छल और चोरी से श्री राम की स्त्री का हरण क्यों किया? यह श्लोक शिक्षा देता है कि वीरता शक्ति में नहीं बल्कि सत्य, न्याय और नीति के पालन में होती है। छल कपट और अधर्म के सहारे प्राप्त सफलता क्षणिक है और अंततः पतन का कारण बनती है।

16. विवेकशीलता

परस्य वीर्यम् स्वबलम् च बुद्ध्वा द्य। स्थानम् क्षयम् चैव तथैव वृद्धिम्।

तथा स्वपक्षे प्यनुमृश्य बुद्ध्या। वदृत् क्षमम् स्वामिहितम् स मन्त्री ॥ ६-१४-२२

विभीषण कहते हैं सच्चा मंत्री वही है जो दोनों पक्षों की शक्ति, स्थिति, हानि और लाभ को तर्क और विवेक के आधार पर परख कर राजा को उचित परामर्श दे। मंत्री को अपने स्वामी की केवल चाटुकारिता न करके सच्चाई और न्याय पूर्ण बात कहनी चाहिए। एक अच्छा सलाहकार वही होता है जो न केवल अपने स्वामी के हित को देखे बल्कि स्थिति का यथार्थ अवलोकन कर उचित निर्णय लेने में सहायता करे।

17. वास्तविक सुख

न हि पश्यामि सदृशं चिन्तयन्ती प्लवङ्गम ॥६-११३-१८

मत्प्रियाख्यानकस्येह तव प्रत्यभिनन्दनम्। हिरण्यं वा सुवर्णं वा रत्नानि विविधानि च ॥६-११३-२०

राज्यं वा त्रिषु लोकेषु नैतदर्हति भाषितुम्।

सीता ने हनुमान को श्री राम के युद्ध विजय का समाचार सुनाने के लिए पुरस्कृत करने की इच्छा जताई। उन्होंने हनुमान से कहा कि सोना, चांदी, रत्न या तीनों लोकों का राज्य भी इस प्रिया समाचार की बराबरी नहीं कर सकता है अर्थात सच्चा सुख भौतिक वस्तुओं में नहीं बल्कि आत्मीय प्रसन्नता और प्रिय जनों के कल्याण से मिलता है।

18. संतोष

तवैतद्वचनं सौम्ये सारवत्स्निग्धमेव च ॥६-११३-२३

रत्नौघाद्विविधाच्चापि देवराज्याद्विशिष्यते। अर्थतश्च मया प्राप्ता देवराज्यादयो गुणाः ॥६-११३-२४

हतशत्रुं विजयिनं रामं पश्यामि यत्स्थितम्।

हनुमान ने सीता के वचनों को ही सर्वोत्तम पुरस्कार कहा। उन्होंने कहा कि श्री राम की विजय और उनका सकुशल रहना ही सबसे बड़ा संतोष है। हनुमान जी का यह कथन कर्तव्य निष्ठा, समर्पण और निहिस्वार्थ भाव से सेवा के आदर्श को दर्शाता है।

19. क्षमा दया और श्रेष्ठ आचरण

न परः पापमादत्ते परेषां पापकर्मणाम् ॥६-११३-४४

समयो रक्षितव्यस्तु सन्तश्चारित्रभूषणाः। पापानां वा शुभानां वा वधार्हाणां प्लवङ्गम ॥६-११३-४५

कार्यं कारुण्यमार्येण न कश्चिन्नापराध्यति।

हनुमान ने सीता से रक्षसियों को दंड देने की अनुमति मांगी, लेकिन सीता ने कहा कि श्रेष्ठ पुरुष दूसरों के पापों को ग्रहण नहीं करते हैं। सदाचार ही श्रेष्ठ पुरुषों का आभूषण है और पापियों से भी पाप पूर्ण व्यवहार नहीं करना चाहिए। सीता कहती है कि कोई भी प्राणी त्रुटिहीन नहीं होता है। इसीलिए सब पर दया करनी चाहिए। इससे शिक्षा मिलती है कि समाज में नैतिकता बनाए रखने के लिए हिंसा से अधिक करुणा और क्षमा की आवश्यकता होती है।

20.चरित्र की महत्ता और सामाजिक मान्यता

अकीर्तिर्यस्य गियेत लोके भूतस्य कस्यचित्।। पतत्येवधमॉलोकन्यावच्छबदः प्रकीर्त्यते।। ७-४ ५-१ २

अकीर्तिरनिन्यते देवैः कीर्तिलोकेषु पूज्यते। कीर्तिरथं तु समारम्भः सर्वेषां सुमहात्मनाम्।। ७-४ ५-१ ३

अप्यहं जीवितं जह्यां युष्मान्वा पुरुषषेभाः। असाधारणभयद्धितः किं पुनजेनात्मजाम्।। ७-४ ५-१ ४

मन्यन्तु भवन्तो माँ यदि मच्छसने स्थितः। इतो ड्य नियतां सीता कुरुष्व वचनं मम।। 45/22७-४ ५-२२

राम लोक निंदा से भयभीत होकर सीता का परित्याग करते हैं, जो एक अत्यंत जटिल और संवेदनशील निर्णय है। यद्यपि यह निर्णय नारी सम्मान की दृष्टि से विवादास्पद हो सकता है, परंतु राम का कथन है कि “अपकीर्ति लोक में सबसे बड़ी सजा है”। यह दर्शाता है कि समाज में प्रतिष्ठा और आचरण का महत्व सर्वोपरि है। आज के संदर्भ में यह मूल्य इस रूप में ग्रहण किया जा सकता है कि सार्वजनिक जीवन में आचरण और छवि का गहरा महत्व है।

वाल्मीकि रामायण एक महाकाव्य के साथ जीवन के समग्र नैतिक दर्शन का जीवंत चित्रण प्रस्तुत करता है इसमें व्याप्त घटनाएं और प्रसंग मानव जीवन के आदर्श आचरण धर्म कर्तव्य और मर्यादा हेतु मार्ग प्रशांत करता है यह महाकाव्य जीवन जीने की प्रेरणा देता है और इसका नैतिक स्वरूप व्यक्ति परिवार और समाज तीनों स्तरों पर आदर्श और संतुलन बनाने की शिक्षा प्रदान करता है।

शोध निष्कर्ष

इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि भारतीय संस्कृति में नैतिकता का स्थायी आधार प्राचीन ग्रंथों में निहित है। वाल्मीकि रामायण आज भी नैतिक शिक्षा के लिए एक प्रामाणिक और प्रभावशाली माध्यम सिद्ध हो सकता है, विशेषतः जब वर्तमान समाज मूल्यों के संकट से गुजर रहा है। यह शोध नई पीढ़ी को अपने सांस्कृतिक आधार से जोड़ने और नैतिक रूप से समृद्ध बनाने की दिशा में एक सकारात्मक प्रयास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अशोक कुमार शर्मा (2018) प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था। अध्याय 3-रामायण कालीन शिक्षा, पुस्तक प्रथम संस्करण, लिटरेरी सर्कल

2. महावीर अग्रवाल, वाल्मीकि रामायण में रस विमर्श,
3. अमृतलाल (2011) वाल्मीकि रामायण का समालोचनात्मक अध्ययन। पृष्ठ संख्या 5 पीएचडी शोध प्रबंध। वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।
4. विनोद बाला अरुण (2015) राम कथा में नैतिक मूल्य, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 42।
5. शर्मा, मृदुला (2023) राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के मूल उद्देश्य को पूर्ण करने में महिला शिक्षिकाओं की सृजनात्मक भूमिकाः बाल विद्यार्थियों में देश अनुराग एवं मूल्यों का बीजारोपण। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसीप्लिनरी एजुकेशनल रिसर्च, वॉल्यूम 12, इश्यू 3(3), पृष्ठ संख्या 25-31. DOI: https://ijmer.in.doi./2023/12.03.45
श्रद्धा सिंह (2015) प्राचीन भारत में मूल्य शिक्षा के महत्व और भूमिका पर अध्ययन। इंटरनल जर्नल ऑफ इंग्लिश लैंग्वेज लिटरेचर एंड ह्यूमैनिटीज, वॉल्यूम 3, इश्यू 5, आईएसएसएन 2321-7065, पृष्ठ संख्या 139-144.
6. वाल्मीकि रामायण, हिन्दी संसकरण गीता प्रेस गोरखपुर।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

नासिरा शर्मा और बदलते समाज में नारी की छवि

रचना चौधरी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, मणिपुर इंटरनेशनल विश्वविद्यालय
डॉ. तिलिग कमलावती देवी
निर्देशक, प्रोफेसर एवम विभागाध्यक्ष भारतीय भाषा विभाग (हिंदी) मणिपुर इंटरनेशनल विश्वविद्यालय
डॉ. मो. मजीद मियॉ
सह निर्देशक, सहायक अध्यापक, हिंदी विभागाध्यक्ष, श्री अग्रसेन महाविद्यालय

शोध-सार - परम्पराएँ, दुष्टिकोण एवं सद्गत समाज में तभी परिवर्तित भावनाएँ आएगी जब नारी स्वंय इन सब के प्रति सचेत हो जाए। आज का युग नारी के सशक्तिकरण का युग है। नारी पर होने वाली विभिन्न विषयों पर समस्या और भी तेजी से उभर कर सामने आने लगी जब से नारी सशक्तिकरण का युग आया है। पहले किसी विषय पर चर्चा करने से पहले वह सोचती थी कि इसका परिणाम क्या ठोगा या इसके लिए उसे किन-किन परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा। बारी- सशक्तिकरण का प्रभाव कुछ ऐसा हुआ कि जब - साहित्यकार, कॉरपोरेट सेवक, कार्यकार्ता, हर कोई वो सदियों से पीछे धकेल दी गई शोषित-दमित नारी को केन्द्र में लाकर उस पर पुनः विचार करने की तैयारी में हैं। नासिरा शर्मा ने अपने जीवन के अनुभवों तथा आस-पास के परिवेश से कथानक गढ़े है जिनका स्वर वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित किया गया है। इनकी रचनाओं की नारी गहन विचारशीलता दर्शाती है और जीवन-मूल्यों के प्रति जागरुकता भी प्रकट करती हैं।

मुख्य शब्द- संघर्षशील, मुक्ति, नारी - सशक्तिकरण, आत्मसम्मान

प्रस्तावना- आधुनिक युग विभिन्न विमशौ का युग है। नए विचारों, बदलते परिवेश एवं शिक्षा ने वर्तमान पीढ़ी को पुरानी रुढ़ियों और परम्पराओं से तोड्घ्कर एक नयी विचारधारा में मोड दिया है।

हिन्दी साहित्य में नासिरा शर्माश का विशिष्ट स्थान है। इनके लेखन की सबसे बड़ी विशेषता है कि यह राष्ट्रीय से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय पृष्ठभू को अपने रचनात्मक परिवेश में शामिल कर लेती है।

नासिरा शर्मा अपनी कविताओं में किसी एक पुरुष या समाज को सीधे संबोधित नही करती. बल्कि प्रत्यक्ष रूप से "औरत" को ही पुकारती हैं।

- जैसे वह जी रहे जीवन के वास्तविक अनुघ्भवो, पीढियों की गवाह, और अपने अस्तित्व की गरिमा को समझने की प्रेरणा दे रही हो।

कविता की कुछ पंक्तिघ्याँ जो दिल को छू लेती है? "मैं शामिल है या ना हूँ। मैं शामिल हूँ था ना हूँ मगर हूँ तो।"

इस काल-प्रखंड की चश्मदीद गवार। बरसों पहले वह गर्भवती जवान औरत गिरी थी, मेरे उपन्यासों के पत्रों पर खून से लचपच.

इस अंश में नारी के पीड़ा और संघर्ष की छवि दिखाई देती है जो अपने पहचान और अस्तित्व के लिए खड़ी रही और उसका दर्द साहित्य के पत्रों तक पहुँचा।

नासिरा शर्मा ने अपनी रचनाओं में नारी पात्रों के माधाम से समाज में जड़ जमाए हुए बंधनों और कुरीतियों पर चोट की है। उन्होंने नारी जीवन को अंधकार मुक्त कर उजाले की राह दिखाने की कोशिश की है। नारी जीवन को लेकर उनकी संवेदनाएँ बहुत ही गहरी है। वे उसे ईमानदारी, निस्वार्थ भाव, धैर्म, बलिदान और साठस का अद्वितीय प्रतीक मानती हैं।

इनके पात्र केवल भारत तक सीमित नहीं हैं, बल्कि विदेशी पृष्ठभूमि से भी आते हैं। यह इसलिए हैं क्योंकि नारी की भावनाएँ, उनका संघर्ष और दुख किसी सीमा में बचा नही होता।

''औरत की स्थिति को बदलने में स्वयं औरत सहयोगी भूमिका अदा कर सकती है।" यह पंक्तियाँ नारी सशक्तिकरण और आत्मनिर्णय की अवधारणा पर आधारित है। यहाँ, नारी के जीवन में मेने वाले कुछ समस्याओं की जिम्मेदार स्वयं नारी की है। कभी-कभी घर में भी आपसी सामंजस्य के कारण बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

"मैं कल रात आयी पर तुम घर पर न थे,
सच कहो, कहाँ गये थे,
याद नहीं, कता था कि मेरे समीप खोगे?
खदा की कसम सक्केखाने गया था,
जे शमा तुम्हें पाने के लिए जलाई थी,
उसे मुराद पा लेने के बाद बढ़ाने गया था।
झूठ न बोलो, झूठ न बोलो, यह शब्द फिर न करना,
तुम मेरी रक़ीब के साथ जाने नदी पर देखे गये थे,
जहाँ नदी के किनारे बैठे उससे बातों में डूबे थे।"

यहाँ नासिरा शर्मा ने नारी जीवन मे प्रेम संबंध में टूटते विश्वास को दर्शाती है।" शमा यहाँ प्रेम, आशा और समर्पण का प्रतीक है। "रक़ीब से मुलाकात प्रेम में विश्वासघात और छल की ओर संकेत करती है। इस रचना में प्रेम में केवल वाहे और कसमों से नती, बल्कि विश्वास और निष्ठा से ही संबंध टिकते हैं।

"भारत सरकार ने औरतों की उन्नति एवं विकास के लिए अनेक कानून और योजनाएं बनाई हैं, जिन्होंने औरत के जीवन को काफी हद तक बदला है"

समाज में नारी के जीवन में बदलाव लाने के लिए भारत सरकार ने बहुत से कानून लाये है जैसे- दहेज कानून, बाल विवाह कानून, सती प्रथा कानून, घरेलू हिंसा कानून, छेड़-छात्र विरोधी कानून, यौन शोषण, बलात्कार विरोधी कानून आदि।

यह दो बनार चौबीस है
बदलते समय के साथ चलो,
और पुराने रिश्तों से नाता तोड़ो

यहाँ नासिरा शर्मा ने बदलते समय के साथ नाहरी को उनके जीवन में बदलाव लाने को कहा है। यह 2024 है घाँ संघर्षशील नारी भी अपने एक एवं अधिकार के लिए लड़ना जानती है। आत्मसम्मान बचाने के लिए वो लोगों को मुँह पर जबाव देना भी जानती है। आधुनिक युग में नए विचार, तकनीक और सोच के साथ तालमेल बैठाकर जीवन में प्रगति करनी चाहिए, और जो बातें या धारणाएँ विकास में बाधक है, उनसे संबंध समाप्त कर देना चाहिए।

बदलते समाज में नारी की छवि नासिरा शर्मा के लेखन में पारंपरिक बंधनों से निकलकर आत्मनिर्भर, जागरुक और अधिकारों के प्रति सजग महिला के रूप में दिखाई पड़ती है। वे ग्रामीण एवं शहरी दोनों परिवेशों की स्त्रियों के जीवन में संघर्ष, बदलाव, परिवार, प्रेम, शिक्षा और समाज में उनकी भूमिका को यथार्थ और संवेदनघ्शीलता के साथ प्रस्तुत करती हैं। बदलते यताय के साथ नारी ने अपनी पाचाव स्वंग गढ़ी है केवल परंपरा की वाहक नहीं, बल्कि परिवर्तन की बातक भी है। वह अब नासिरा शर्मा का साहित्य बदलते समय मे समाज में नारी के आत्मसम्मान, जागरुक छवि, सशक्तिकरण का जीवंत प्रलेख है। उन्होंने यह दिखाया है कि समग के साथ स्त्री ने न केवल अपने वास्तविकता को पहचाना है, बल्कि समाज के बदलाव में

सक्रिय भूमिका निभायी है। उनकी रचनाएँ पाठकों को यह योचने पर मजबूर करती हैं कि वास्तविक समानता तभी संभव है जब नारी को हर क्षेत्र में बराबरी का अवसर और सम्मान मिले।

संदर्भ सूची

1. औरत के लिए औरत, नासिरा शर्मा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2011, पृष्ठ-06
2. शामी कागज : नासिरा शर्मा : पृष्ठ-82
3. स्त्री अधिकारों का उपयोग करना सीखे (पृष्ठ 87)
4. औरत के लिए औरत : बासिरा शर्मा से औरत! बाव्य संग्रह : नासिरा शर्मा
5. औरत के लिए औरत : नासिरा शर्मा : गर्ने की कुंठाओ को झेलती औरत (पृष्ठ 51)

Indian Knowledge System vs. French Knowledge System: A Comparative Reflection

Ravi Shankar Kumar
Assistant Professor in French
Arignar Anna Govt. Arts and Science College, Karaikal, Puducherry
Mob-9582107645
Email- ravishanjnu@gmail.com

The Indian Knowledge System (IKS) is rooted in antiquity—its origins stretch far beyond mere centuries, reaching into the depths of eras and epochs. It is not just a body of knowledge but a living tradition, intricately woven into the cultural and spiritual fabric of the nation. From the sacred verses of the Vedas to the philosophical treatises of the Upanishads, the wisdom of ancient India has been preserved by rishis, maharishis, and sages, and passed down through generations. This vast reservoir of knowledge—spanning disciplines such as astronomy, mathematics, medicine, linguistics, and ethics—is embedded in the everyday lives of Indian communities and continues to influence contemporary thought.

Recognizing its enduring relevance and multifaceted utility, the Government of India has taken a progressive step by integrating the Indian Knowledge System into the New Education Policy (NEP). This initiative aims to reconnect learners with indigenous wisdom while fostering a holistic and inclusive approach to education.

In contrast, the French Knowledge System has evolved through a different historical trajectory. Rooted in Enlightenment ideals, it emphasizes rationalism, scientific inquiry, and secularism. French intellectual traditions have contributed significantly to modern philosophy, political theory, literature, and the arts. Thinkers like Descartes, Voltaire, and Rousseau laid the foundations for critical thinking and civic consciousness, which continue to shape France’s educational and cultural institutions.

It would be fascinating to compare the French Knowledge System with the Indian Knowledge System. What are the similarities and differences between the two? If similarities exist, in what ways do they align? If not, how do they diverge? Can we design school curricula based on each of these knowledge systems individually? What would the structure of a syllabus look like for each system? And if we were to merge both systems, what kind of innovative and interdisciplinary syllabus might emerge? How Indian knowledge system and French knowledge system influence modern education?

First, we try to find out the similarity between Indian Knowledge System and Indian Knowledge System.

Points of Comparison: Similarities and Differences

Similarities:

- Both systems value the pursuit of knowledge and intellectual refinement.
- Each has produced profound contributions to philosophy, ethics, and science.
- Education in both traditions is seen as a means of personal and societal transformation.

Both systems place a high value on intellectual refinement, extending from the individual to the broader society. Each has made profound contributions to the fields of philosophy, ethics, and science. It would also be fascinating to explore the specific points at which these two knowledge systems diverge.

Differences:

- Indian Knowledge System is deeply spiritual and holistic, often integrating metaphysics with empirical observation.
- French Knowledge System is largely secular and analytical, prioritizing reason and empirical evidence.
- IKS is orally transmitted and community-based, while the French system is institutionally formalized and textually driven.

Before offering suggestion to design school curricula based on Indian Knowledge System and French Knowledge system, it would be better to highlight their unique philosophies, educational structures, and cultural influences and key features.

Regarding core philosophy and scope in Indian Knowledge System, we observe IKS is rooted in ancient traditions like the Vedas, Upanishads, Ayurveda, and classical arts. IKS emphasizes holistic learning—blending science, spirituality, ethics, and practical knowledge. The Indian Knowledge System focuses on harmony with nature, self-realization, and societal well-being. The following are recognized as key features of the Indian Knowledge System.

Key Features

- **Gurukul tradition**: Teacher-student relationship based on respect and personal mentorship.
- **Interdisciplinary approach**: Combines arts, agriculture, architecture, astronomy, and medicine.
- **Language & Texts**: Sanskrit as a medium for scholarly discourse; vast manuscript heritage.
- **Modern Integration**: Promoted by the Ministry of Education through initiatives like IKS India.

The core philosophy and scope of the French Knowledge System are deeply rooted in Enlightenment ideals, emphasizing reason, secularism, and individual liberty. FKS has strong emphasis on critical thinking, philosophy, and civic education. FKS sees education as a tool for personal development and national identity.

The following points, we observe, as key features of the French Knowledge System.

Key Features

- **Structured schooling**: École Maternelle ’! Élémentaire ’! Collège ’! Lycée.

- **Curriculum**: Includes philosophy, literature, mathematics, and foreign languages.
- **Pedagogy**: Encourages debate, creativity, and student-teacher equality.
- **Higher Education**: Renowned for rigorous intellectual training and affordable public universities.

A comparison between the Indian Knowledge System and the French Knowledge System reveals insightful differences in their philosophical and pedagogical foundations. This comparison also underscores the influence of culture, the integration of modern elements, and the broader impact these systems have on society.

Comparative Insights

Aspect	Indian Knowledge System	French Knowledge System
Philosophy	Spiritual, holistic, nature-based	Rational, secular, humanist
Pedagogy	Guru-shishya tradition	Student-centered, egalitarian
Curriculum Focus	Interdisciplinary, traditional arts	Critical thinking, philosophy, STEM
Cultural Influence	Deeply rooted in heritage	Shaped by Enlightenment and modernity
Modern Integration	NEP 2020 promotes IKS in education	Strong public education infrastructure

Following our discussion on the comparative insights between the Indian Knowledge System and the French Knowledge System, we now turn our attention to how each of these systems influences modern education.

Influence of Indian Knowledge System on Modern Education

The **National Education Policy (NEP) 2020** in India has made a strong push to integrate IKS into mainstream education. Here's how it's shaping the landscape:

Key Contributions

- **Holistic Learning**: IKS promotes a blend of intellectual, ethical, and spiritual development, moving beyond rote memorization.
- **Sustainability & Wellness**: Subjects like Ayurveda, Yoga, and environmental ethics are being reintroduced to foster sustainable living.
- **Cultural Identity**: Reviving Sanskrit, classical arts, and indigenous sciences helps preserve India's rich heritage.
- **Interdisciplinary Curriculum**: NEP 2020 encourages the fusion of ancient wisdom with modern subjects like STEM, creating well-rounded learners.

The Government of India has placed strong emphasis on the practical integration of the Indian Knowledge System (IKS) across schools, colleges, and universities. Key initiatives include the inclusion of IKS modules in academic curricula, the establishment of research centres and fellowships dedicated to traditional knowledge, and the implementation of teacher training programs designed to

incorporate IKS-based pedagogy.

The Indian Knowledge System is renowned for its emphasis on holistic learning, sustainability and wellness, cultural identity, and an interdisciplinary curriculum. In contrast, the French Knowledge System is distinguished by its commitment to secularism, intellectual rigor, civic responsibility, and centralized educational structure. What are the defining features of the French Knowledge System, and how has it influenced modern education globally? Let us explore this further.

Influence of French Knowledge System on Modern Education

France's education system, rooted in Enlightenment ideals, continues to shape global pedagogical practices:

Key Contributions

- **Secular & Civic Education**: French schools emphasize laïcité (secularism), civic responsibility, and democratic values.
- **Philosophy in Schools**: Philosophy is a mandatory subject in high school, encouraging critical thinking and ethical reasoning.
- **Structured Curriculum**: The French model promotes rigorous academic standards and equal access to education.
- **Global Influence**: French educational principles have inspired reforms in former colonies and international institutions.

Practical Integration

- International schools and universities adopt French-style curricula (e.g., Lycée system, Baccalauréat).
- UNESCO and OECD often reflect French educational philosophies in global policy frameworks.

When the Indian and French Knowledge Systems are brought together, their integration offers a transformative impact on global education. This synthesis fosters a model that balances holistic well-being and cultural rootedness with intellectual rigor and civic engagement. The combined approach encourages interdisciplinary learning, ethical awareness, and sustainable innovation reshaping education to be both globally relevant and locally resonant. The following comparative chart explores the pedagogical synergies between the two systems.

Combined Impact on Global Education

Feature	Indian Influence	French Influence
Philosophy	Holistic, spiritual, nature-centric	Rational, secular, civic
Curriculum Innovation	Integration of traditional sciences & arts	Emphasis on philosophy, humanities, STEM
Pedagogy	Experiential, values-based	Debate-driven, analytical
Global Reach	Growing interest in IKS for sustainability	Strong presence in international education

The integration of the Indian and French Knowledge Systems has the potential to reshape global education in profound ways. By blending holistic learning, cultural rootedness, and sustainability with intellectual rigor, civic consciousness, and structured pedagogy, this combined approach fosters a more inclusive and dynamic educational model. Such a synthesis encourages interdisciplinary thinking, ethical engagement, and global citizenship—nurturing learners who are not only well-informed but also socially and ecologically responsible. Let us now explore the key outcomes of this convergence.

- **Complementary Strengths**: IKS offers deep philosophical, ecological, and wellness insights, while the French system emphasizes rationality, civic responsibility, and critical thinking.
- **Global Relevance**: Together, they address modern challenges like sustainability, mental health, ethical leadership, and cultural literacy.
- **Educational Equity**: A blended model respects indigenous wisdom while upholding universal values of liberty, equality, and reason.

Suppose an education system seeks to propose a framework for a Global Curriculum—what kind of blended outcomes might emerge from such an initiative? The integration of diverse knowledge systems, such as the Indian and French traditions, could yield a curriculum that is both culturally rooted and globally responsive. The following chart serves as a valuable tool to help us understand the proposed framework and the potential outcomes of this synthesis.

It illustrates how combining holistic, sustainable, and interdisciplinary approaches with civic, intellectual, and structural rigor can reshape education for a more inclusive and future-ready world.

Proposed Framework for a Global Curriculum

Component	Indian Knowledge System (IKS)	French Knowledge System	Blended Outcome
Philosophy & Ethics	Dharma, interconnectedness, self-realization	Enlightenment values, secular ethics	Global ethics rooted in both tradition & reason
Health & Wellness	Ayurveda, Yoga, holistic living	Public health, mental wellness education	Integrated wellness programs in schools
Science & Ecology	Ancient astronomy, ecological harmony	Empirical science, environmental policy	Sustainability-focused STEM curriculum
Arts & Humanities	Classical music, dance, Sanskrit literature	Literature, philosophy, visual arts	Cross-cultural arts education
Pedagogy	Experiential, guru-shishya tradition	Debate-driven, student-centered	Hybrid teaching models with mentorship & inquiry
Civic Education	Community duty, moral values	Citizenship, human rights	Global citizenship education

Conclusion:

The Indian and French Knowledge Systems, though rooted in distinct cultural and philosophical traditions, offer complementary visions of education. The Indian Knowledge System emphasizes holistic learning, spiritual and ecological harmony, and the integration of diverse disciplines—nurturing the learner as a whole being connected to community and cosmos. In contrast, the French Knowledge System is grounded in secularism, intellectual rigor, civic responsibility, and a centralized pedagogical structure—cultivating analytical thinking, public discourse, and democratic engagement.

Together, these systems illuminate the possibility of a globally attuned curriculum that balances introspective wisdom with critical inquiry, cultural continuity with progressive reform, and ethical consciousness with civic participation. Their convergence invites educators and policymakers to reimagine learning as a dynamic interplay of tradition and innovation—where knowledge is not merely transmitted, but transformed.

Bibliography

B. Mahadevan, BHAT ,Vinayak Rajat, R.N ,Nagendra Pavana., *Introduction to Indian knowledge system: concepts and applications*, PHI Learning, 2022

CHAUHAN, Prof. Bhag Chand, *IKS: The Knowledge system of Bharata*, Garuda Prakashan, 2023

JHA, Amit, *Traditional Knowledge System in India*, 2024, Atlantic Publishers and Distributors (P) Ltd, 2024

COLE, David R. (Editor), Bradley BRADLEY, Joff P.N. (Editor), *Educational Philosophy and New French Thought (Educational Philosophy and Theory)*, Routledge; 2017

BAUBÉROT, Jean, A brief history of French laïcité, *Religion and Secularism in France Today*, Routledge India, 2022

LEWIS, H. D. , *The French Education System (Routledge Library Editions: Comparative Education)* , Routledge, 2018

Article

ACHARYA Dr. Sunita, Integration of Indian Knowledge System into Higher Education through NEP 2020, International journal of research culture society, Monthly Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal, Volume - 8, Issue - 9, September - 2024

Sitography

https://iksindia.org/ StudyBoosterAI | Comparative Study of School Systems in France and India

https://eprajournals.com/pdf/fm/jpanel/upload/2024/June/202406-01-017557

Indian Knowledge System (IKS): Importance in Indian Educational System in the Context of Modern Era |

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

प्रेमचंद का कहानी संग्रह सोज़े वतन, आत्मकथा, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य व निबंधों में राष्ट्रीयता का बोध

सागर सैन
शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय किशनगढ़, अजमेर

वह साहित्यकार अपने आप में एक बड़ा साहित्यकार हो जाता है जो अपने ही युग की सीमाओं को लांघकर व अपने युग की प्रचलित व्यवस्थाओं का विरोध कर एक नई व्यवस्था स्थापित करने में लगा रहता है। वह साहित्यकार न सिर्फ बड़ा होता है बल्कि अमर भी होता है। प्रेमचंद भी एक ऐसे ही साहित्यकार हैं जो अपने ही युग की व्यवस्थाओं का विरोध कर नई व्यवस्था स्थापित करने में लगे हुए थे। इस संदर्भ में प्रेमचंद की दूर दृष्टि भी प्रबल थी। अतः यह दूर दृष्टि इन्हें एक बड़ा साहित्यकार बनाने में सहायता करती है।

सोज़े-वतन

सोज़े-वतन का प्रकाशन 1908 में हुआ। इस संग्रह के कारण प्रेमचन्द को सरकार का कोपभाजन बनना पडा। सोज़े-वतन यानी देश का दर्द। दर्द की एक चीख की तरह ये कहानियाँ जब एक छोटी सी क़िताब की शक्ल में पहले निकली थीं, वह ज़माना और था। आज़ादी की बात भी हाकिम का मुँह देखकर कहने का उन दिनों रिवाज़ था। कुछ लोग थे जो इस रिवाज़ को नहीं मानते थे। मुंशी प्रेमचंद भी उन्हीं सरफिरों में से एक थे। लिहाज़ा सरकारी नौकरी करते हुए मुंशीजी ने नवाब राय के नाम से ये कहानियाँ लिखीं। और ख़ुफ़िया पुलिस ने सुराग पा लिया कि यह नवाब राय कौन हैं। हमीरपुर के कलक्टर ने फौरन मुंशीजी को तलब किया और मुंशीजी बैलगाड़ी पर सवार होकर रातों रात कुल पहाड़ पहुंचे जो कि हमीरपुर की एक तहसील थी और जहाँ उन दिनों कलक्टर साहब का क़याम था। सरकारी छानबीन पक्की थी और अपना जुर्म इक़बाल करने के अलावा मुंशीजी के लिए दूसरा चारा न था।

'सोज़े-वतन' का महत्व सिर्फ इसलिए नहीं है कि इसने धनपत राय को प्रेमचन्द बनाया बल्कि इसलिए भी है कि 'सोज़े-वतन' ही वह बिंदु है जहाँ से प्रेमचन्द की आरम्भिक तथा बाद की रचनाओं का एक साथ सम्यक दृष्टि से मूल्यांकन किया जा सकता है। 'सोज़े-वतन' प्रेमचन्द की कहानियों का पहला संग्रह है जिसमें कुल पाँच कहानियाँ हैं। मगर ध्यान देने योग्य बात तो ये है कि इसमें 'सोज़े-वतन' शीर्षक की कोई कहानी नहीं है।

प्रेमचन्द का वतन के प्रति दृष्टिकोण उनके शुरूआती उपन्यास 'असरारे-मआविद'से लेकर आख़िरी सम्पूर्ण उपन्यास 'गोदान' तक में मिलता है। कभी वे 'असरारे-मआविद' के माध्यम से मंदिरों में धर्म के नाम पर होने वाले व्याभिचारों और पाखण्डों का चित्रण करते हैं तो कभी 'हमख़ुर्मा-ओ-हमसवाब' के माध्यम से विधवा विवाह पर प्रकाश डालते हैं। कभी 'किशना' और 'ग़बन' के माध्यम से एक मध्यमवगीय समाज की समस्याओं को रेखांकित करते हैं। तो कभी 'जलवाए-ईसार' और

'सोज़े-वतन' के मार्फ़त क्रांति की बात करते हैं। प्रेमचन्द की चिंता देश और समाज की छोटी-छोटी बुनियादी समस्याओं को लेकर प्रकट हुई है। इसलिए प्रेमचन्द के यहाँ समाज के हरेक वर्ग के प्रति सहानुभूति है। वे सिर्फ़ 'होरी' और 'घीसू' जैसे पात्रों से ही सहानुभूति नहीं रखते, उनकी सहानुभूति 'रायसाहब' और 'निर्मला' के प्रति भी है। वे दलितों के अस्पृश्यता की समस्या (कर्मभूमि) और ग़रीबों के दमन (गोदान) की बात भी उठाते हैं तो समाज में होने वाले नारी जागरण की सूचना भी देते हैं। इस प्रकार प्रेमचन्द का दर्द समाज में व्याप्त सभी समस्याओं के प्रति है। प्रेमचन्द की क़सक,प्रेमचन्द की पीड़ा,सिर्फ़ वतन की गुलामी ही नहीं,वरन देश की बुनियादी समस्याएँ भी हैं।इस दृष्टिकोण से अगर देखें तो प्रेमचन्द का सम्पूर्ण साहित्य देश और समाज के प्रति पीड़ा का उदगार है। ऐसे में यदि प्रेमचन्द के संपूर्ण साहित्य का संग्रह कर उसे 'सोज़े-वतन' का नाम दे दिया जाये तो भी कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

"बहुत-बहुत गरजा बमका कलक्टर - खैर मनाओ कि अंग्रेजी अमलदारी में हो, सल्तनत मुगलिया का ज़माना नहीं है, वर्ना तुम्हारे हाथ काट लिये जाते! तुम बगावत फैला रहे हो!" (सोज़े वतन) मुंशीजी अपनी रोज़ी की खैर मनाते खड़े रहे। हुक्म हुआ कि इसकी कापियाँ मँगाओ। कापियाँ आयीं और आग की नज़र कर दी गयीं।"

प्रेमचंद की कहानी संग्रह सोजे वतन में पांच कहानियां संकलित है दुनिया का सबसे अनमोल रतन, शेख मखमूर, यही मेरा वतन, शोक का पुरस्कार, सांसारिक प्रेम और देश प्रेम। यह कहानी देश प्रेम से ओत प्रोत हैं।

इस संग्रह को जप्त करने का प्रमुख कारण इसकी कहानियों में प्रच्छन्न राष्ट्रीयता का भाव था जो कि अंग्रेज सरकार को बिल्कुल पसंद नहीं आया।

"खून का वह आखरी कतरा जो वतन की हिफाजत में गिरे दुनिया की सबसे अनमोल चीज है।" पंक्ति के माध्यम से प्रेमचंद तत्कालीन समय की जनता को अपने देश की रक्षा हेतु प्रोत्साहित कर रहे थे। वह अपनी ही इस कहानी में एक घायल सिपाही के माध्यम से कहलवाते हैं "क्या मैं अपने ही देश में गुलामी करने के लिए जिंदा रहूं? नहीं ऐसी जिंदगी से मर जाना अच्छा। इससे अच्छी मौत मुमकिन नहीं।

प्रेमचन्द ने मुक्ति का अर्थ केवल अंग्रेजी शासन से मुक्ति नहीं, अपितु भारत में सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक परिवर्तन के साथ-साथ किसान, शोषित और स्त्री मुक्ति को अपना प्रेरक बनाया। उन्होंने स्त्रियों की सभी समस्याओं बाल विवाह, अशिक्षा, बेमेल विधवा विवाह और वेश्यावृत्ति आदि समस्याओं पर भी आवाज बुलन्द की और अपने साहित्य और पत्रकारिता में स्थान दिया। समाज में विधवा विवाह को मान्यता मिले, इसके लिए उन्होंने स्वयं एक विधवा के साथ विवाह किया और अपनी पत्नी शिवरानी देवी को लेखन-कार्य से लेकर स्वतन्त्रता संग्राम में सहभागिता कराई।

प्रेमचन्द किसानों की समस्याओं को उठाते थे और साथ-ही-साथ किसानों को जागृत भी करते रहते थे। तत्कालीन अंग्रेजी सरकार की नीतियों की आलोचना भी करते थे। सन् 1919 ई. के फरवरी अंक में 'पुराना जमाना नया जमाना' शीर्षक लेख में स्पष्ट करते हुए लिखते हैं, "क्या यह शर्म की बात नहीं कि जिस देश में नब्बे फ़ीसदी आबादी किसानों की हो, उस देश में कोई भी किसान सभा, कोई किसानों की भलाई का आंदोलन, कोई खेती का विद्यालय, किसानों की भलाई का कोई प्रयत्न न हो।"

प्रेमचंद की आत्मकथा : जीवन सार

प्रेमचंद ने अपनी आत्मकथा में भी सोज़े वतन के प्रकाशित होने व ज़ब्त होने के बारे में उल्लेख किया है "साहब ने मुझसे एक-एक कहानी का आशय पूछा और अन्त में बिगडक़र बोले-तुम्हारी कहानियों में 'सिडीशन' भरा हुआ है। अपने भाग्य को बखानो कि अँग्रेजी अमलदारी में हो। मुगलों का राज्य होता, तो तुम्हारे दोनों हाथ काट लिये जाते। तुम्हारी कहानियाँ एकांगी हैं, तुमने अंग्रेजी सरकार की तौहीन की है, आदि। फैसला यह हुआ कि मैं 'सोजे वतन' की सारी प्रतियाँ सरकार के हवाले कर दूँ और साहब की अनुमति के बिना कभी कुछ न लिखूँ। मैंने समझा, चलो सस्ता छूटे। एक हजार प्रतियाँ छपी थीं। अभी मुश्किल से 300 बिकी थीं। 700 प्रतियाँ मैंने 'जमाना कार्यालय' से मँगवाकर साहब की सेवा में अर्पण कर दीं।

सुपरिण्टेडेण्ट पुलिस, दो डिप्टी कलेक्टर और डिप्टी इन्सपेक्टर प्रेमचन्द की तक़दीर का फैसला करने बैठे। एक डिप्टी कलेक्टर साहब ने गल्पों से उद्धरण निकालकर सिद्ध किया कि इनमें आदि से अन्त तक सिडीशन के सिवा और कुछ नहीं है। और सिडीशन भी साधारण नहीं; बल्कि संक्रामक। पुलिस के देवता ने कहा-ऐसे खतरनाक आदमी को ज़रूर सख्त सज़ा देनी चाहिए। डिप्टी-इन्सपेक्टर साहब प्रेमचन्द से बहुत स्नेह करते थे। इस भय से कि कहीं मामला तूल न पकड़ ले, उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि वह मित्रभाव से प्रेमचन्द के राजनीतिक विचारों की थाह लें और उस कमेटी में रिपोर्ट पेश करें। उनका विचार था, कि प्रेमचन्द को समझा दें और रिपोर्ट में लिख दें, कि लेखक केवल क़लम का उग्र है और राजनैतिक आन्दोलन से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। कमेटी ने उनके प्रस्ताव को स्वीकार किया। हालाँकि पुलिस के देवता उस वक्त भी पैंतरे बदलते रहे।

सहसा कलेक्टर साहब ने डिप्टी इन्सपेक्टर से पूछा-"आपको आशा है कि वह आपसे अपने दिल की बातें कह देगा?" 'आप मित्र बनकर उसका भेद लेना चाहते हैं। यह तो मुखबिरी है। मैं इसे कमीनापन समझता हूँ।' जब यह वृत्तान्त डिप्टी इन्सपेक्टर साहब ने कई दिन पीछे प्रेमचन्द से कहा, तो प्रेमचन्द ने पूछा-क्या आप सचमुच मेरी मुखबिरी करते?

"वह हँसकर बोले-असम्भव! कोई लाख रुपये भी देता, तो न करता। मैं तो केवल अदालती कार्रवाई रोकना चाहता था, और वह रुक गयी। मुकदमा अदालत में आता, तो सजा हो जाना यकीनी था। यहाँ आपकी पैरवी करने वाला भी कोई न मिलता; मगर साहब हैं शरीफ आदमी।"

प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य

आज भी प्रेमचंद हिंदी साहित्य में सबसे ज्यादा पढ़े जाने वाले साहित्यकार हैं किंतु आज भी प्रेमचंद की ऐसी कई रचनाएं हैं जो पाठकों के सामने अभी तक नहीं आई है वह विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित उनकी रचनाओं की खोज अभी भी जारी है। प्रेमचंद का साहित्य 125 वर्ष का हो गया है। प्रेमचंद ने अपने साहित्यिक जीवन का प्रारंभ 1901 से किया था। प्रेमचंद ने अपने जीवन काल में हिंदी साहित्य के लगभग सभी विधाओं में लिखा।

अज्ञात एवं अप्राप्य साहित्य की खोज का व्यवस्थित कार्य प्रेमचन्द के छोटे बेटे अमृतराय ने वर्ष 1957 में आरम्भ किया, उन्होंने अपने ही प्रकाशन संस्थान 'हंस' प्रकाशन, इलाहाबाद से वर्ष 1962 में विभिन्न शीर्षकों- (1) 'चिट्ठी-पत्री' (दो खण्ड), (2) 'गुप्तधन' (दो खण्ड), (3) 'विविध प्रसंग' (तीन खण्ड), (4) 'शबेतार', (5) 'मंगलाचरण' आदि के तहत प्रेमचन्द की लुप्तप्राय सामग्री को खोजकर साहित्य जगत् में प्रकाशित कराया। कमल किशोर गोयनका के अनुसार, "प्रेमचन्द के सम्पूर्ण साहित्य को उपलब्ध कराने की दृष्टि से यह एक ऐतिहासिक घटना थी, एक विस्फोट था, एक अविस्मरणीय उपलब्धि थी।" मदन गोपाल द्वारा प्रेमचन्द का एक नितान्त उर्दू में लिखित अप्राप्य लेख जो उन्होंने 'काशी' शीर्षक से 'आजकल' पत्रिका के जुलाई 2008 अंक (हीरक जयंती वर्ष) में प्रकाशित करवाया था। मदन गोपाल ने हिन्दी की रचनाओं को उर्दू में लिप्यन्तरण व रूपान्तरण किया था जो एक श्रमसाध्य कार्य था। अमृत राय के पश्चात् क़मर रईस, जाफ़र रज़ा, गोमुंशी प्रेमचंद के निबंधों में राष्ट्रभावना और राष्ट्रीयता का बोध एक गहरी ऐतिहासिक, सामाजिक और नैतिक पृष्ठभूमि से जुड़ा हुआ है। वे न केवल एक कथाकार थे, बल्कि एक गंभीर विचारक और सजग निबंधकार भी, जिनके लेखन में भारतीय समाज के राजनीतिक-सांस्कृतिक जागरण की स्पष्ट छाप मिलती है। पाल कृष्णा माणकटाला आदि ऐसे आलोचक हैं जो प्रेमचंद की लुप्त सामग्री को खोजने की ओर प्रवृत्त हैं।

प्रेमचंद के निबंध

मुंशी प्रेमचंद के निबंधों में राष्ट्रभावना और राष्ट्रीयता का बोध एक गहरी ऐतिहासिक, सामाजिक और नैतिक पृष्ठभूमि से जुड़ा हुआ है। वे न केवल एक कथाकार थे, बल्कि एक गंभीर विचारक और सजग निबंधकार भी हैं, जिनके लेखन में भारतीय समाज के राजनीतिक-सांस्कृतिक जागरण की स्पष्ट छाप मिलती है।

प्रेमचंद का साहित्य उस समय में रचा गया, जब भारत स्वतंत्रता आंदोलन के उभार के दौर से गुजर रहा था। 1900 से 1936 के बीच का समय भारत में विदेशी शासन के विरुद्ध जनजागरण, गांधीजी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन, स्वदेशी आंदोलन और सामाजिक सुधारों के प्रयासों का समय था। ऐसे में प्रेमचंद के निबंध राष्ट्र की स्थिति, जनता की मानसिकता और स्वतंत्रता के आदर्श पर केन्द्रित रहे।

प्रेमचंद के लिए राष्ट्रीयता केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं थी। उनके दृष्टिकोण में इसका अर्थ था - सांस्कृतिक एकता, भाषाई गौरव (विशेषकर हिंदी-उर्दू की एकता), आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक समानता और न्याय, नैतिक जागरण।

उनके निबंध स्वदेशी आन्दोलन में यह स्पष्ट है कि वे मानते थे कि स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग केवल आर्थिक लाभ का साधन नहीं, बल्कि आत्मसम्मान और स्वतंत्रता की पहली सीढ़ी है। वे लिखते हैं कि राष्ट्रप्रेम की शुरुआत अपने गांव, अपने शहर और अपने देश के श्रम व उत्पाद के सम्मान से होती है। प्रेमचंद का मानना था कि जातिवाद, अस्पृश्यता, अशिक्षा और महिला-शोषण जैसे सामाजिक दोष राष्ट्र को कमजोर करते हैं। निबंध 'राष्ट्रवाद' में उन्होंने कहा कि स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ तभी होगा जब समाज आंतरिक रूप से स्वस्थ, न्यायपूर्ण और शिक्षित हो। निबंध 'हिंदी और उर्दू की एकता' और 'हिंदी राष्ट्र भाषा होगी" में प्रेमचंद ने हिंदी को भारत की एकता का सेतु माना। उनके लिए मातृभाषा का विकास राष्ट्रीयता का आवश्यक अंग था, क्योंकि भाषा ही विचार और संस्कृति की वाहक है।

वे विदेशी भाषाई प्रभुत्व (विशेषकर अंग्रेजी के अति-प्रयोग) को राष्ट्रीय चेतना में बाधा मानते थे।

उनके कई निबंध गांधीजी के सिद्धांतों से प्रेरित हैं, जैसे- 'महात्मा का महात्म्य', 'गांधी और किसान'।

उन्होंने अहिंसा, सत्याग्रह और जनसहभागिता को राष्ट्रीयता की आत्मा बताया। उनके अनुसार, राजनीतिक स्वतंत्रता केवल एक माध्यम है; असली उद्देश्य जनता में आत्मबल और आत्मसम्मान का जागरण है।

प्रेमचंद के निबंधों में राष्ट्रीयता का बोध केवल स्वतंत्रता आंदोलन का नारा नहीं, बल्कि एक संपूर्ण राष्ट्रनिर्माण की परिकल्पना है। उनकी राष्ट्रीयता में राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मुक्ति का आदर्श समाहित है। इसलिए उनके निबंध आज भी हमें यह याद दिलाते हैं कि सच्चा राष्ट्रप्रेम केवल झंडा फहराने में नहीं, बल्कि अपने समाज को न्याय, शिक्षा और समानता के मार्ग पर ले जाने में है।

सन्दर्भ

1. प्रेमचन्द विविध प्रसंग', भाग दो, पृष्ठ 268
2. कहानी दुनिया का सबसे अनमोल रतन; पृष्ठ संख्या 30, सोज़े वतन, संकलन कर्ता यतीन्द्र नाथ मिश्र, अक्षर प्लांट, वाराणसी उत्तर प्रदेश
3. कहानी दुनिया का सबसे अनमोल रतन; पृष्ठ संख्या 29, सोज़े वतन, संकलन कर्ता यतीन्द्र नाथ मिश्र, अक्षर प्लांट, वाराणसी उत्तर प्रदेश
4. 'प्रेमचन्द विविध प्रसंग', भाग दो, पृष्ठ 268
5. भारत दर्शन ऑनलाइन हिंदी साहित्यिक पत्रिका https://bharatdarshan.co.nz/sanklan/630/premchand-ki-atamkatha
6. भारत दर्शन ऑनलाइन हिंदी साहित्यिक पत्रिका https://bharatdarshan.co.nz/sanklan/630/premchand-ki-atamkatha
7. 'प्रेमचन्द की अप्राप्य कहानियाँ', कमल किशोर गोयनका, भूमिका, अनिल प्रकाशन, नई दिल्ली

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

प्रेमचंद की साहित्यिक छवि : 'प्रेमचंद घर में' और 'कलम का सिपाही' के आलोक में एक साहित्यिक अन्वेषण

रनिका शेखावत
शोधार्थी, हिंदी विभाग
राजस्थान केंद्रीय विश्वविद्यालय, किशनगढ़ अजमेर

ज्यों छायावन में वटवृक्ष खड़ा
त्यो धरती पर तू खड़ा हुआ।
तू युग का था युग तुझ में था,
हर दर्द, हर पीड़ा तुझ में था।

तूने कलम को शस्त्र बनाया,
जन-जन का तू मीत बना।
किसानों की व्यथा तुझमें थी,
दलितों का तू गीत बना।

प्रेमचंद का जन्म 1880 में हुआ और निधन 1936 में। यह कालखंड भारतीय इतिहास में स्वतंत्रता आंदोलन, सामाजिक सुधार आंदोलनों, औपनिवेशिक शोषण और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का युग था। प्रेमचंद जैसा युगांतकारी एवं यशस्वी साहित्यकार पाने के लिए सदियों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती हैं, और जब वह आता है तब ज़माना करवटे बदलने लगता हैं। हिंदी-उर्दू के प्रसिद्ध कथाकार प्रेमचंद के प्रेम के साथ उनकी जीवनीपरक रचनाओं का चित्रण बहुत कम ही हुआ हैं। हिंदी साहित्य के इतिहास में प्रेमचंद का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण, सुदृढ़ और युगांतरकारी है। वे न केवल कथाकारों के अग्रणी स्तंभ माने जाते हैं, बल्कि उन्होंने साहित्य को समाज की सेवा का माध्यम बनाकर उसकी दिशा और उद्देश्य दोनों को परिवर्तित कर दिया।

प्रेमचंद के साहित्य और विचारों को समझने के लिए केवल उनके रचनात्मक लेखन का अध्ययन पर्याप्त नहीं है, बल्कि उनके जीवन, चिंतन और संघर्षों की वास्तविकता को भी जानना आवश्यक है। इस दृष्टि से 'प्रेमचंद घर में' (शिवरानी देवी) और 'कलम का सिपाही' (अमृतराय) दो अमूल्य कृतियाँ हैं। 'प्रेमचंद घर में' उनके अंतरंग जीवन का आत्मीय संस्मरण है, जबकि 'कलम का सिपाही' उनके साहित्यिक, वैचारिक और ऐतिहासिक जीवन का शोधपूर्ण दस्तावेज। ये दोनों कृतियाँ मिलकर प्रेमचंद के व्यक्तित्व के दो अनिवार्य आयाम प्रस्तुत करती हैं—व्यक्तिगत एवं।

प्रेमचंद घर में : एक स्त्री की संवेदना से संवलित जीवन-चित्र

'प्रेमचंद घर में' एक संस्मरणात्मक रचना है जो प्रेमचंद की धर्मपत्नी शिवरानी देवी द्वारा लिखी गई है। यह कृति न तो केवल एक जीवनी है, न आत्मकथा, न ही नारी विमर्श का कोई सीधा उदाहरण, फिर भी यह इन तीनों की आंतरिक उपस्थिति को समेटे हुए है। इसकी भाषा अत्यंत सरल, आत्मीय और प्रवाहमयी है। यह शैली पाठक को लेखक के अत्यंत निकट खड़ा कर देती है। शिवरानी देवी ने यह रचना प्रेमचंद की मृत्यु के बाद उनके जीवन की स्मृतियों को संजोते हुए लिखी थी। इसमें उन्होंने पत्नी, सहयोगिनी, मित्र और साक्षी के रूप में प्रेमचंद के जीवन के उन पहलुओं को उजागर किया है, जो आमतौर पर उनके पाठकों की पहुँच से बाहर रहे हैं।

'प्रेमचंद घर में' प्रेमचंद के गृहस्थ जीवन का जीवंत दस्तावेज है। शिवरानी देवी बताती हैं कि प्रेमचंद का जीवन संघर्षो की पाठशाला रहा। आर्थिक तंगी, बीमारी, बच्चों की शिक्षा, सामाजिक दायित्व इन सबका भार प्रेमचंद ने जिस धैर्य और विवेक से उठाया, वह अद्वितीय है। प्रेमचंद के बच्चों के प्रति गहरा स्नेह था। वे उन्हें कहानियाँ सुनाते थे, उनकी पढ़ाई-लिखाई पर विशेष ध्यान देते थे। लेकिन कई बार आर्थिक मजबूरियों के कारण उनकी इच्छाएँ अधूरी रह जाती थीं, जिसका दर्द शिवरानी देवी ने कई स्थानों पर उकेरा है।

लेखिका के अनुसार, प्रेमचंद पारिवारिक मामलों में बेहद सजग, संवेदनशील और ईमानदार व्यक्ति थे। वे अपने परिवार के लिए जितना समर्पित थे, उतना ही समाज और साहित्य के लिए। कई बार घर में आर्थिक तंगी इतनी बढ़ जाती थी कि छोटी-छोटी जरूरतें पूरी करना भी मुश्किल हो जाता था। शिवरानी देवी ने यह भी लिखा है कि कुछ रिश्तेदारों के साथ संपत्ति के विवादों ने प्रेमचंद को मानसिक रूप से परेशान किया। यह कृति स्त्री विमर्श की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं। प्रेमचंद के स्त्रीविमर्श और वैवाहिक संबंध में शिवरानी देवी ने प्रेमचंद के स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण को सहज रूप से प्रस्तुत किया है। वे पत्नी को समान अधिकार और सम्मान देने में विश्वास रखते थे। लेखिका ने स्वयं स्वीकार किया है कि उन्होंने कभी प्रेम स्त्रियों के प्रति अपमानजनक शब्द कहते नहीं सुना। शिवरानी देवी ने पति-पत्नी के संबंधों में समानता और संवाद का चित्र प्रस्तुत किया है, जो उस समय दुर्लभ था।

प्रेमचंद स्त्रियों के अधिकारों के समर्थक थे - वे बाल विवाह, पर्दा प्रथा और स्त्री शिक्षा विरोध के प्रबल विरोधी थे। शिवरानी देवी लिखती हैंरू "मैंने उन्हें कभी स्त्री को अपमानित करते नहीं देखा।" वे कहते थे—स्त्री का सम्मान करना ही मनुष्य का सम्मान हैं। यह तथ्य उनकी प्रगतिशील दृष्टि को रेखांकित करता है। प्रेमचंद के विवाह में परस्पर सम्मान और संवाद की जो परंपरा दिखती है, वह उस समय दुर्लभ थी। शिवरानी देवी जब-जब असहमत होती थीं, प्रेमचंद उन्हें चुप कराने की बजाय उनका पक्ष सुनते थे।

'प्रेमचंद घर में' से पता चलता है कि प्रेमचंद का लेखन कठोर अनुशासन और त्याग का परिणाम था। वे देर रात तक लिखते, फिर भी पारिवारिक जिम्मेदारियों से विमुख नहीं होते। लेखन उनके लिए जीविका नहीं, जनजागरण का माध्यम था। प्रेमचंद की लेखन प्रक्रिया, उनकी तपस्या और समर्पण का एक साक्षात्कार है। लेखिका कहती हैं कि वे रात्रि के समय तब तक लिखते रहते जब तक थककर कुर्सी पर न सो जाएँ। उन्हें प्रकाशन से मिलने वाले पारिश्रमिक का अधिकांश भाग कर्ज चुकाने या परिवार की आवश्यकताओं पर खर्च करना पड़ता था। लेखिका के अनुसार, प्रेमचंद पारिवारिक मामलों में बेहद सजग, संवेदनशील और ईमानदार व्यक्ति थे। वे अपने परिवार के लिए जितना समर्पित थे, उतना ही समाज और साहित्य के लिए। शिवरानी देवी ने स्पष्ट रूप से बताया है कि प्रेमचंद का स्वास्थ्य हमेशा कमजोर रहा। तपेदिक (टी.बी.), ज्वर, और अन्य बीमारियों ने उनके जीवन को लगातार प्रभावित किया। बावजूद इसके उन्होंने लेखन कभी नहीं छोड़ा। यह उनकी अदम्य मानसिक शक्ति का प्रमाण है।

इस कृति में प्रेमचंद के मानवीय गुणों का अत्यंत प्रभावशाली वर्णन मिलता है। एक बार जब किसी धोखेबाज़ व्यक्ति ने उन्हें आर्थिक हानि पहुँचाई, तब भी प्रेमचंद ने उसे क्षमा कर दिया। वे किसी के दुःख पर प्रसन्न नहीं होते थे और हमेशा

यह सोचते थे कि व्यक्ति की गलतियाँ परिस्थितियों की उपज होती हैं। उनका मूल्यबोध गहराई से धर्मनिरपेक्ष और मानवीय था। उनका जीवन और विचार दोनों लोकमंगल के लिए समर्पित थे, जिसका प्रतिबिंब उनके गृह जीवन में भी झलकता है।

कलम का सिपाही : यथार्थ, विचार और इतिहास का साहित्यिक समन्वय

जीवनी की रचनात्मक प्रकृति 'कलम का सिपाही' प्रेमचंद की अब तक की सबसे प्रामाणिक और विस्तृत जीवनी मानी जाती है। अमृतराय, जो प्रेमचंद के सुपुत्र भी थे, ने इसे न केवल एक पुत्र के दृष्टिकोण से लिखा है, बल्कि एक शोधकर्ता और आलोचक की तटस्थ दृष्टि से भी प्रस्तुत किया है। यह कृति एक साहित्यिक महाकाव्य के समान है, जिसमें प्रेमचंद का जीवन, समय, समाज और साहित्य सभी का समवेत चित्रण किया गया है।

साहित्यिक दृष्टिकोण और विचार इस पुस्तक में प्रेमचंद की साहित्यिक यात्रा का चरणबद्ध विश्लेषण मिलता है—उर्दू लेखन से हिंदी की ओर रुख, प्रारंभिक लेखन की विषयवस्तु, 'सेवासदन', 'गोदान', 'निर्मला', 'कफन' आदि रचनाओं की प्रक्रिया, और उनके पीछे छिपे सामाजिक सरोकार। अमृतराय बताते हैं कि प्रेमचंद का साहित्य केवल यथार्थवाद नहीं था, वह यथार्थ के भीतर छिपे संघर्ष, नैतिक द्वंद्व और परिवर्तन की आकांक्षा का भी साहित्य था।

इस कृति में प्रेमचंद की साहित्यिक यात्रा का विस्तृत विश्लेषण है—उर्दू से हिंदी की ओर संक्रमण, आरंभिक आदर्शवादी लेखन से यथार्थवादी लेखन तक का सफर, प्रमुख उपन्यासों व कहानियों का आलोचनात्मक अध्ययन। अमृतराय लिखते हैंरू "प्रेमचंद का साहित्य यथार्थवाद का ही नहीं, बल्कि यथार्थ में परिवर्तन की चाह का साहित्य है।" प्रेमचंद का सामाजिक और राजनीतिक चिंतन प्रेमचंद का गांधीजी से प्रभाव, उनका साम्यवादी झुकाव, किसान आंदोलनों, शिक्षा, और राष्ट्रवाद के प्रति दृष्टिकोण का गहन विश्लेषण इस कृति में मिलता है। प्रेमचंद न तो पूर्णतः मार्क्सवादी थे और न ही केवल गांधीवादी। वे एक स्वतंत्र विचारक थे, जिनके लिए जनसामान्य की भलाई सर्वोपरि थी। उन्होंने राष्ट्र के भविष्य को शिक्षित, जागरूक और नैतिक नागरिकों में देखा, और यही उनकीसाहित्यिक दृष्टि की आत्मा थी।

प्रेमचंद और प्रकाशन संघर्ष 'कलम का सिपाही' में प्रेमचंद के 'हंस' और 'ज़माना' पत्रिकाओं के संपादन से लेकर सरस्वती प्रेस की स्थापना तक का संघर्षात्मक वृत्तांत है। आर्थिक तंगी, पाठकों की अभिरुचि, सरकार की सेंसरशिप—इन सबके बीच प्रेमचंद ने जिस साहस से साहित्यिक प्रकाशन को जिंदा रखा, वह अनुकरणीय है। वे अपने विचारों के प्रचार के लिए कभी किसी व्यावसायिक समझौते के लिए तैयार नहीं हुए। उन्होंने कई बार नुकसान सहा, परंतु लेखकीय ईमानदारी नहीं छोड़ी।

प्रेमचंद का व्यक्तित्व और अंतर्दृष्टि अमृतराय प्रेमचंद को एक 'साधारण में असाधारण' देखने वाला लेखक मानते हैं। वे लिखते हैं कि प्रेमचंद अपने लेखन में सामान्य जन की पीड़ा को ही नहीं दिखाते, बल्कि उसमें परिवर्तन की चेतना भी जगाते हैं। प्रेमचंद का जीवन एक साधु की तरह था—सादा जीवन, ऊँचे विचार, और सेवा भाव। वे क्रांति को हिंसा नहीं, विचार की शक्ति से लाना चाहते थे।

शिवरानी देवी की लेखनी में जहाँ पत्नी का प्रेम, पीड़ा और आत्मीयता है, वहीं अमृतराय की दृष्टि में शोध, आलोचना और विचारों की गहराई है। इन दोनों कृतियों का साहित्यिक महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि ये प्रेमचंद को केवल व्यक्ति नहीं, युगद्रष्टा के रूप में प्रस्तुत करती हैं। इन दोनों ग्रंथों के माध्यम से पाठक को यह अनुभव होता है कि प्रेमचंद का जीवन ही उनका सबसे बड़ा साहित्य था, जिसे उन्होंने जीया, भोगा और रचा—शब्दों में, व्यवहार में और जीवन की हर साँस में।

प्रेमचंद घर में' और 'कलम का सिपाही' प्रेमचंद की दो छवियाँ प्रस्तुत करती हैं एक मानवीय, निजी और पारिवारिक, दूसरी साहित्यिक, सार्वजनिक और वैचारिक। इन दोनों कृतियों को पढ़कर हमें एक ऐसे लेखक का परिचय मिलता है जो अपने जीवन और साहित्य दोनों में समान रूप से ईमानदार, संघर्षशील और संवेदनशील था। यह दोनों कृतियाँ प्रेमचंद के व्यक्तित्व का पूर्ण चित्र प्रस्तुत करती हैं एक ओर संघर्षशील पति, पिता और मनुष्य का, दूसरी ओर जनजागरण के लिए समर्पित

साहित्यिक योद्धा का। ये कृतियाँ हिंदी साहित्य में न केवल प्रेमचंद को समझने की कुंजी हैं बल्कि साहित्य के उद्देश्य को पुनर्परिभाषित करने का माध्यम भी।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिवरानी देवी – प्रेमचंद घर में, राजकमल प्रकाशन
2. अमृतराय – कलम का सिपाही, राजकमल प्रकाशन
3. रामविलास शर्मा – प्रेमचंद और उनका युग
4. नामवर सिंह – आलोचना की पहली किताब
5. डॉ. नगेन्द्र – हिंदी साहित्य का इतिहास
6. प्रेमचंद – गोदान, कर्मभूमि, सेवासदन

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

सुरेश कुमार मौर्य
सहायक आचार्य
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ,
शाहपुरा बाग, आमेर रोड़, जयपुर (राज.)

मुख्य शब्द- चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या, प्रशिक्षक, अभिवृत्ति।

प्रस्तावना

अध्यापक शिक्षा एक व्यापक प्रक्रिया है, जिसे किसी कौशल या कार्य के निष्पादन तक सीमित नहीं किया जा सकता। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति में निहित आंतरिक क्षमताओं का विकास समग्र रूप से करने के साथ ही वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय दृष्टि या सन्दर्भ में उपयोगी तथा संसाधन सम्पन्न व्यक्तित्व के लिए प्रयत्न किया जाता है।

हमारी शिक्षा की सबसे बड़ी समस्या है, इसके द्वारा बच्चों पर लादा गया बोझ। यह बोझ पाठ्यचर्या की असंबद्ध संरचना का परिणाम तो है ही। हमारी शिक्षा व्यवस्था में जहाँ बच्चे को पर्याप्त जगह देने की बात स्वीकार की जा रही है, वहीं शिक्षकों को अभी भी उचित जगह नहीं दी जा रही है। उन्हें ज्ञान उत्पन्न करने और सोचने वाले पेशेवर के रूप में देखना जरूरी है।

इसलिए पाठ्यचर्या नवीनीकरण का हमारा यह प्रयास शिक्षकों को अलग ढ़ंग से प्रशिक्षित करने की जरूरत को रेखांकित करता है। स्कूली शिक्षा में परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इसी सन्दर्भ में चट्टोपाध्याय आयोग ने कहा, ''यदि स्कूली शिक्षकों से उम्मीद की जाती है कि वे पढ़ाने के उपागम में क्रांति लाएँ, तो वह क्रांति पहले शिक्षा के कॉलेजों में होनी चाहिए।'' यह आधार पत्र शिक्षक शिक्षा हेतु गठित समस्त आयोगों की रिपोर्टों और नीति दस्तावेजों में शिक्षक की तैयारी के सम्बन्ध में दिये गये परिप्रेक्ष्य और कार्यक्रम सम्बन्धी दिशानिर्देशों के संक्षिप्त अवलोकन से शुरू होता है

शिक्षक शिक्षा को हमारे देश में शुरू हुए 100 साल से ऊपर हो गए। इसी तरह शिक्षक-शिक्षा की विषय-वस्तु दिये जाने वाले अनुभव तथा अपनाई गई विधियों में किसी तरह का बदलाव नहीं हुआ। चार वर्षीय एकीकृत कार्यक्रमों की सार्थकता देखने के लिए अनेक अध्ययन किये गये। निष्कर्ष यह है कि इन कार्यक्रमों द्वारा तैयार अध्यापक परम्परागत एक वर्षीय बी. एड. कार्यक्रम द्वारा तैयार अध्यापकों से बहुत बेहतर होते हैं। इन कार्यक्रमों की प्रभावशीलता में अन्तर के कई कारण हो सकते हैं। जैसे मेधावी विद्यार्थियों का चुनाव, अधिक अवधि, एकीकृत पाठ्यचर्या के साथ-साथ विषय वस्तु को पढ़ना और शिक्षण की विधियों को सीखना, आदि। अब राज्य सरकारों द्वारा भी चार वर्षीय एकीकृत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम का आरम्भ किया गया है। अतः चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना आवश्यक है।

समस्या का औचित्य

यह तथ्य सर्वविदित है कि बालक के मानसिक एवं चारित्रिक विकास की जिम्मेदारी प्रभावशील प्रशिक्षण योजना के अभाव में अध्यापक को निभाना असम्भव है। अध्यापक का व्यवसाय अत्यधिक पेचीदा है और उसमें सफलता के लिए एक व्यक्ति को विशेष प्रकार की दक्षता प्राप्त करना आवश्यक है। प्रशिक्षण संस्थाओं में उस व्यावसायिक कुशलता प्रदान करने की अवधि एक या अधिक से अधिक दो वर्ष रखी गई है। यह सोचने का विषय है कि इतनी अल्प अवधि में प्रशिक्षण के आधार पर अध्यापक, एक डॉक्टर, इंजीनियर अथवा अन्य उच्च व्यवसायों से किस प्रकार व्यावसायिक दक्षता के आधार पर अपनी तुलना कर सकता है। प्रशिक्षण की इतनी अल्प अवधि निर्धारित करने के पीछे शायद यह दृष्टिकोण रहा है कि अध्यापक बनने के लिए केवल दो बातों का होना जरूरी है- एक विषय-सामग्री की जानकारी, दूसरे पठन विधि का ज्ञान। विषय-वस्तु की जानकारी प्रशिक्षणार्थी अपने विद्यार्थी काल में कर लेता है तथा पठन विधि के ज्ञान के लिए प्रशिक्षण संस्थाओं में एक वर्ष की अवधि पर्याप्त मान ली गई है।

परन्तु अब सरकार द्वारा बी.एड. पाठ्यक्रम चार वर्षीय कर दिया गया है। अब तक स्नातक उतीर्ण करने के बाद सरकारी-गैर सरकारी स्कूलों में अध्यापन के लिए हम दो वर्षीय बी. एड. का विकल्प चुनते आ रहे थे। लेकिन अब विद्यार्थियों को 12वीं के बाद ही यह विकल्प लेना है कि वह शिक्षा के क्षेत्र में कॅरियर बनाना चाह रहे हैं।

बताया जा रहा है कि नये संशोधन के मुताबिक आने वाले 2 वर्ष के बाद शिक्षण प्रशिक्षण यथा बी. एड. या डी.एल. एड. जैसे पाठ्यक्रम अलग से नहीं कराये जायेंगे। इसके तहत अलग से अब बी.एस.टी.सी. एवं बी. एड. नहीं होकर एक साथ चार वर्षीय पाठ्यक्रम होगा।

अतः प्रस्तुत शोध के माध्यम से चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति जानने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध से प्राप्त परिणाम शिक्षा के क्षेत्र में सुधार लाने में सहायक सिद्ध होंगे। इस विषय पर अध्ययन किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है।

समस्या कथन

"चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन"

शोध के उद्देश्य

1. चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.ए., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.एससी., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ

1. चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.ए., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

2. चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.एससी., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या एवं न्यादर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन के अन्तर्गत जयपुर जिले के शिक्षा महाविद्यालयों में चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या में अध्यापन कराने वाले प्रशिक्षकों का चयन किया गया है। अतः चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या में अध्यापन कराने वाले प्रशिक्षक प्रस्तुत शोध की जनसंख्या है।

न्यादर्श हेतु राजस्थान राज्य के जयपुर जिले के चार वर्षीय बी.एड. पाठ्यचर्या के 40 प्रशिक्षकों को लिया गया है। जिसके अन्तर्गत 20 बी.ए. बी.एड. प्रशिक्षक एवं 20 बीएससी. बी.एड. प्रशिक्षकों को लिया गया है। जिसका विवरण निम्न प्रकार है–

कुल प्रशिक्षक
40

बी.ए. बी.एड. प्रशिक्षक
20

बी.एससी. बी.एड. प्रशिक्षक
20

शोध के उपकरण-

प्रस्तुत शोध को पूर्ण करने हेतु शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित उपकरण "चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड पाठ्यचर्या के प्रति प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति मापनी" का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकी-

प्रस्तुत शोध में मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-परीक्षण सांख्यिकी विधि का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या-

परिकल्पना संख्या 1- चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.ए., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

तालिका संख्या 4.1

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-परीक्षण	स्वीकृत/ अस्वीकृत
बी.ए., बी.एड. के पुरूष प्रशिक्षक	10	17.40	1.17	1.07	स्वीकृत
बी.ए. बी.एड. की महिला प्रशिक्षक	10	16.80	1.32		

0.05 स्तर पर टी-मान = 2.10 स्वतंत्रता के अंश = 18
0.01 स्तर पर टी-मान = 2.88

तालिका संख्या 4.1 में स्वतंत्रता के अंश 18 पर टी का मान 1.07 प्राप्त हुआ। जो 0.05 एवं 0.01 स्तर पर सार्थक टी-मान 2.10 एवं 2.88 से कम है। अतः परिकल्पना "चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.ए., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है" दोनों स्तर पर स्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना संख्या 2- चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.एससी., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

तालिका संख्या 4.2

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी-परीक्षण	स्वीकृत/अस्वीकृत
बी.एससी., बी.एड. के पुरूष प्रशिक्षक	10	16.70	1.49	0.31	स्वीकृत
बी.एससी. बी.एड. की महिला प्रशिक्षक	10	16.50	1.35		

0.05 स्तर पर टी-मान = 2.10 स्वतंत्रता के अंश = 18

0.01 स्तर पर टी-मान = 2.88

तालिका संख्या 4.2 में स्वतंत्रता के अंश 18 पर टी का मान 0.31 प्राप्त हुआ। जो 0.05 एवं 0.01 स्तर पर सार्थक टी-मान 2.10 एवं 2.88 से कम है। अतः परिकल्पना "चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी.एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.एससी., बी.एड. के प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है'' दोनों स्तर पर स्वीकृत की जाती है।

शोध से प्राप्त निष्कर्ष

1. चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.ए., बी.एड. के प्रशिक्षकों (पुरूष एवं महिलाओं) की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

2. चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति बी.एससी., बी.एड. के प्रशिक्षकों (पुरूष एवं महिलाओं) की अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- अरोडा, रीता एवं मारवाह सुदेश (2005) : ''शिक्षा मनोविज्ञान एवं सांख्यिकी'', जयपुर, शिक्षा प्रकाशन।
- भटनागर, ए. बी., भटनागर मीनाक्षी (2004) : ''शिक्षण व अधिगम का मनोविज्ञान'', मेरठ, आर लाल. बुक डिपो।
- भार्गव, महेश (1993) : ''आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन'' आगरा, भार्गव बुक हाऊस।
- भटनागर, सुरेश, वशिष्ठ कमला, सिंह, एम. के. (1996) : ''शैक्षिक प्रबन्ध और शिक्षा की समस्यायें'' सूर्या पब्लिकेशन।
- बेस्ट, डब्ल्यू. जॉन (1973) : "रिसर्च इन एजूकेशन" नई दिल्ली, प्रिन्टिग हॉल, प्रा. लि.।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

INDIGENOUS KNOWLEDGE SYSTEMS AND MODERN PEDAGOGY INTEGRATION

Dr. Robina
Assistant Professor
V N S P G College Parashurampur, Chandauli (U.P.)
Education Department

What Is Indigenous Knowledge Systems(IKS):

"Kautilya" emphasized that education should aim to achieve three outcomes as defining characteristics:

Vidya- which involves the creation of new knowledge;

Viveka- the wisdom to apply the right knowledge at the right time, place, and for the right purpose; and

Vichakshanata - the skillset to effectively translate knowledge into tangible results in real life.

Integrating indigenous knowledge systems (IKS) with modern pedagogy in Indian classrooms involves blending traditional Indian wisdom with contemporary educational practices to create a more holistic, culturally relevant, and engaging learning experience for students.

It is a great heritage of knowledge that has been transmitted through generations and is rooted in foundational texts such as the Vedic literature, the Upanishads and the Vedas (. The core components of the Indian Knowledge System (IKS)—Jnan (knowledge), Vignan (science), and Jeevan Darshan (philosophy of life)—are rooted in experience, observation, experimentation, and rigorous analysis.

The National Education Policy (NEP) 2020 incorporates IKS as an integral part and emphasizes embedding it across various educational levels to instill pride in India's legacy while fostering critical thinking and innovation.

Rationale and Objectives Why integrate IKS into modern pedagogy?

Modern education often prioritizes Western-centric knowledge systems, which can marginalize Indigenous perspectives and practices. Integrating IKS into teacher education not only enriches the curriculum but also supports culturally inclusive and sustainable educational practices. Such integration encourages critical thinking, ecological awareness, and respect for cultural diversity (Dei, 2000).

Objectives of the research:

1. To examine current teacher education practices and their approach to cultural inclusivity.

2. To identify gaps in the incorporation of Indigenous wisdom into pedagogy.

3. To propose strategies for the effective integration of IKS into teacher training programs.

Research Questions

1. How can IKS contribute to holistic education?

IKS offers a holistic approach to education by addressing cognitive, emotional, social, and spiritual dimensions. By grounding education in local cultural contexts, IKS fosters a deep connection to the environment and community (Semali & Kincheloe, 1999).

2. What are the challenges and opportunities in integrating IKS into teacher education?

Challenges may include systemic barriers, lack of institutional support, and misconceptions about the validity of Indigenous knowledge. Opportunities lie in the development of culturally inclusive curricula, collaboration with Indigenous communities, and fostering a new generation of educators who value diversity and sustainability (Battiste, 2013).

Pedagogical Theories and Indigenous Knowledge

- Constructivist and Experiential Learning Approaches

Constructivist theories, as proposed by Vygotsky (1978), align closely with Indigenous pedagogies, emphasizing learning through interaction and context. Experiential learning, championed by Kolb (1984), also resonates with IKS, as both approaches focus on active engagement, reflection, and practical application.

- Compatibility of Modern Pedagogy with IKS

Modern pedagogical frameworks, when adapted, can complement IKS by fostering inquiry-based and culturally relevant teaching. For instance, place-based education integrates local knowledge and experiences into teaching, creating a synergy between traditional wisdom and contemporary learning practices (Gruenewald, 2003). However, without proper training and resources, educators may struggle to align these frameworks effectively with IKS (Smith, 2002).

Pedagogical Approaches in IKS

Traditional Indian pedagogy offers several unique approaches that can enhance modern educational practices:

1. **Guru-Shishya Parampara:** Philosophy, Structure, and Practices The Gurukula system represents one of the oldest and most foundational forms of indigenous education in India. Derived from the Sanskrit word "guru" (teacher) and "kula" (family or household), the Gurukula was not just a place of instruction but a living, learning community where the student reside with the teacher and enggaged life long learning.this system flourished during the Vedic and post-Vedic periods and emphasized moral education, spiritual enquiry and persuit of vidhya going far beyond the transmission of utilitarian information (Radhakrishnan, 1999; Altekar, 2009).
2. **Experiential Learning:** IKS promotes hands-on, practical learning experiences, aligning with modern theories of experiential education.

3. **Interconnected Knowledge:** IKS views different disciplines as interconnected, promoting a holistic understanding of subjects.

4. **Dialogue and Debate:** The tradition of 'Shastrartha' (scholarly debate) encourages critical thinking and articulation skills.

5. **Mindfulness and Concentration:** Techniques like yoga and meditation are integral to IKS, supporting cognitive development and emotional well-being.

6. **Storytelling:** Indigenous cultures often use storytelling to pass down knowledge. This approach can enhance engagement and retention, allowing students to connect personally with the material. Indigenous storytelling traditions can teach important lessons and values.

7. **Land-Based Learning:** Education in natural settings fosters a deep connection to the environment. This method is particularly effective in teaching ecological stewardship and respect for nature.

8. **Collaborative Learning:** Emphasizing collaboration and community involvement aligns with indigenous values and promotes social skills. Group projects and community-based initiatives can strengthen students' sense of belonging and responsibility.

   - **Community-Based Learning:** IKS often emphasizes the importance of community. Community-based learning projects can involve students addressing local issues and working with community members.
   - **Nature-Based Learning:** IKS is often deeply connected to nature. Nature-based learning activities can help students develop a sense of place and environmental stewardship.

PROPOSED FRAMEWORK FOR INTEGRATION

Incorporating Indian Knowledge Systems (IKS) into modern pedagogy offers a rich blend of methods that has the potential to support the holistic development of students and also developed critical thinking, creativity, and problem-solving but also promote cultural pride, ethical values, and environmental awareness. Some effective pedagogical methods are:

1. Experiential Learning: Hands-on activities, including traditional crafts, farming techniques, and indigenous technologies, deepen understanding and equip students with practical skills. **2. Holistic Approach:** IKS bridges knowledge across fields, blending Ayurveda with modern biology or Vedic mathematics with computational sciences, fostering a comprehensive and interconnected perspective.

3. Ethics and Values: By incorporating IKS, modern education can promote ethical reasoning and moral values, building a foundation for integrity and social responsibility.

4. Storytelling and Narrative Approach: Traditional storytelling methods make learning interactive and memorable, simplifying complex concepts and encouraging creative thinking,traditional art forms and hands-on training in skills like pottery, weaving, or traditional cooking.

5. Sustainability Education: IKS offers insights into sustainable practices in fields like agriculture, architecture, and resource management, enriching lessons on environmental conservation.

6. Multilingual Education: Multilingual education integrates multiple languages into teaching and learning, fostering inclusivity, preserving cultural heritage, and enhancing educational outcomes through

linguistic diversity.

7. Collaborative Learning: Drawing inspiration from the Gurukul system, dialogical methods focus on discussions, debates, and teamwork, fostering communication skills and mutual respect among learners.

8. Curriculum Flexibility: include local content and allow contextual adaptation.

9. Teacher Training : Incorporate IKS into Pre-service and In-serviceteacher education.

10. Community Participation: Involves elders and local experts as co-educators.

Methodology

This research article delves into the potential of integrating Indigenous Knowledge Systems (IKS) into educational frameworks and challenges in the way of integration. Employing a systematic literature review approach, the study explores existing researches and policy documents to gain insights into the significance of IKS integration, associated challenges andidentify areas for improvement in teacher training programs. Limitation of this methodology is that the papers published only during 2020 to 2023 in English language are considered for this study.

Research Design

This study employs a qualitative research design to explore the integration of Indigenous Knowledge Systems (IKS) into teacher education. The qualitative approach allows for an in-depth understanding of experiences, perceptions, and practices related to IKS in various educational contexts (Creswell, 2013). Key components of the design include:

• **Case Studies:** In-depth analysis of schools and universities that have successfully implemented IKS in their curricula.

• **Interviews:** Semi-structured interviews with educators, policymakers, and Indigenous leaders to capture diverse perspectives.

• **Focus Groups:** Discussions with teachers-in-training to understand their readiness and challenges in adopting IKS.

The study also involves a comparative analysis of teacher education programs across different regions, focusing on their approaches to incorporating IKS. This comparative framework helps identify best practices and contextual variations.

Importance of IKS Integration in school education:

This theme explored the positive impact of integrating IKS on various aspects of student development. Sources were reviewed to identify evidence of how IKS integration enhances student learning outcomes, fosters a stronger sense of cultural identity and promotes critical thinking skills.

• **Challenges in IKS Integration:** This theme examined the potential difficulties associated with incorporating IKS into formal education systems. Research papers were analysed to understand the complexities arising from variations in IKS practices across different communities, the need for specialized teacher training, and maintaining a balance within the established curriculum.

• **Teacher Training Programs:** This theme investigated current initiatives aimed at equipping

teachers with the knowledge and skills necessary to effectively integrate IKS into their teaching practices. Government reports outlining the emphasis placed on IKS integration within the National Education Policy (NEP) 2020 were reviewed alongside descriptions of existing teacher training programs.

Objectives of the study :

By critically evaluating the existing literature on IKS integration, its challenges and teacher training, this research article aims to achieve two-fold objectives:

1. Firstly, it seeks to gain valuable insights into the potential benefits of incorporating IKS into education fostering a more holistic and culturally-relevant learning experience for students. Also, it explores the possible challenges regarding IKS integration into school education.

2. Secondly, the review identifies areas of teacher training programs that might require further development to ensure that teachers are well-equipped to effectively integrate IKS into classrooms.

Why it's important :

- **Enhanced Learning:**

IKS-based learning can be more engaging and relevant, leading to a deeper understanding of subjects.

- **Cultural Preservation:**

Integrating IKS helps preserve and promote India's rich cultural heritage.

- **Holistic Development:**

IKS-based education fosters intellectual, moral, spiritual, and emotional growth.

- **Preparedness for the Future:**

Students can develop critical thinking skills and a strong foundation for navigating a complex world.

- **Addressing Modern Challenges:**

Integrating IKS can equip students with tools and perspectives to tackle contemporary challenges like climate change and food security.

- **Encouraging Innovation:**

The interdisciplinary approach of IKS, such as merging *Vedic mathematics* with modern computational techniques, inspires creativity and innovative thinking.

- **Promoting Ethical Values:**

  Ancient texts and philosophies emphasize ethics, morality, and social responsibility, contributing to the development of character and integrity.

- **Environmental Sustainability:**

  Lessons on traditional practices like rainwater harvesting and organic farming promote ecological awareness and sustainable living.

- **Experiential Learning Opportunities:**

  Practical activities in traditional crafts, agriculture, and indigenous technologies provide hands-on learning experiences.

- **Enhanced Cognitive Skills:**

Dialogical and inquiry-based methods, inspired by the *Gurukul* system, foster critical thinking, analytical reasoning, and communication skills.

- **Preservation of Linguistic Heritage:**

Promoting Indian languages, including Sanskrit and regional dialects, helps sustain linguistic diversity and preserve classical knowledge.

- **Interdisciplinary Education:**

IKS seamlessly integrates with modern disciplines, offering broader perspectives, such as combining *Ayurveda* with biology or ancient engineering techniques with STEM.

- **Global Competence with Local Roots:**

IKS equips students with culturally rooted solutions and principles to address global challenges effectively.

- **Engaging Learning Environment:**

Techniques like storytelling, traditional art, and games make learning interactive and enjoyable, improving engagement and retention.

- **Fostering Lifelong Learning:**

The philosophical and practical insights of IKS encourage curiosity, adaptability, and a lifelong passion for knowledge.

- **Contextualized Learning:**

IKS provides culturally grounded examples, making education more relatable. Concepts like ancient Indian architecture **in** geometry or traditional water conservation methods in environmental studies connect classroom learning to real-world applications.

Real-Life Examples from india

- **Gond Tribe(Madhya Pradesh)** : Students learn environmental conservation through traditional art and folklore.
- **Santhal Tribe (Jharkhand) :** Music, dance And oral storytelling used in teaching history and moral values.
- **North East India(e.g. Apatani tribe) :** Traditional farming and water conservation practtices used in science education.

Challenges:

- **Curriculum Rigidities and Resistance:** Current curricula may prioritize globalized theories, leaving little room for IKS.
- **Lack of Resources and Training:** The scarcity of curated materials and trained faculty hinders effective IKS teaching.
- **Language Barriers:** IKS is often rooted in Sanskrit and regional languages.
- **Perceived Lack of Scientific Validity:** IKS may be viewed as lacking empirical support,

making integration challenging in evidence-based programs.

Considerations:

- **Suggestions for Implementation**

To successfully integrate IKS and its pedagogical approaches into modern curricula, the following strategies are recommended:

- **Phased Integration:** Implement IKS elements gradually, starting with pilot programs to assess effectiveness and gather feedback. Implement pilot programs to test the efficacy of integrated curricula before large-scale adoption. Implement pilot programs in various educational settings to determine best practices for IKS integration and to serve as models for broader applications.

- **Collaborative Curriculum Development:** Involve IKS and modern education experts to create balanced, relevant curricula. Engage Indigenous communities and knowledge keepers in the curriculum development to ensure accurate representation of Indigenous knowledge. Foster collaboration between traditional knowledge holders, modern academics, and educational policymakers . Collaborate with indigenous communities and educators to develop curriculum materials incorporating IKS. Develop integrated curricula seamlessly blending IKS with modern subjects, ensuring relevance and authenticity .

- **Technology Integration:** Leverage digital platforms to make IKS content more accessible and engaging for modern learners. Utilize modern technology to preserve and disseminate IKS, making it more appealing to younger generations.

- **Research and Documentation:** Encourage academic research to validate and refine IKSinspired educational approaches. Invest in research to document and validate traditional knowledge systems, making them more accessible for integration.

- **Cultural Exchange Programs and Resource Accessibility:** Promote understanding and appreciation of IKS through international collaborations and exchanges. Create and distribute accessible resources and teaching materials that reflect IKS, aiding educators in their instructional practices.

- **Professional Development:** Educators should receive training on IKS and culturally responsive teaching methods. Workshops and collaborative sessions with indigenous elders and knowledge holders can enhance teachers' understanding. Provide ongoing training for educators to build their capacity to teach IKS effectively and respectfully. Implement comprehensive teacher training programs to effectively equip educators with the knowledge and skills to teach IKS . Comprehensive Teacher Training to develop robust training programs to equip educators with the necessary skills and knowledge.

- **Flexible Curriculum Standards:** Educational authorities should allow for flexibility in curriculum standards to accommodate the integration of IKS. This may involve revising assessment methods to recognize diverse forms of knowledge.

- **Support from Policymakers:** Government support is crucial for funding initiatives that promote the integration of IKS. Policies should encourage collaboration between educational institutions and indigenous communities (. Develop policies that mandate the inclusion of IKS in academic standards, ensuring all learners are exposed to diverse knowledge systems promoting

social justice. Foster partnerships between schools and indigenous communities to facilitate cultural exchange and learning opportunities. Raise awareness about the importance of IKS and advocate for its inclusion in education policies and practices.

- **Flexible Assessment Methods:** Develop evaluation techniques that capture the holistic learning outcomes of IKS-inspired education.

Policy Support and recommendations:

- Align NEP 2020 goals with actionable plans for IKS integration.
- Fund pilot programs in tribal and rural schools.
- Promote research and documentation of IKS.
- Recognize indigenous knowledge holders as knowledge contributors.
- Document indigenous practices in regional contexts.
- Support teacher development programs focused on inclusive pedagogy.

Conclusion:

Integrating IKS and its pedagogical approaches into modern curricula presents a unique opportunity to enrich contemporary education with time-tested wisdom and methodologies. While challenges exist, the potential benefits of holistic development, critical thinking, and cultural preservation make this integration worth pursuing. By adopting a balanced, thoughtful approach and leveraging the strengths of both traditional and modern systems, educators can create a more robust, relevant, and enriching educational experience for learners in the 21st century.

Integrating Indigenous Knowledge Systems into modern curricula is vital to creating inclusive and relevant education for all students. By embracing IKS and adopting pedagogical approaches inspired by these systems, educators can enhance students' learning experiences and foster respect for diverse perspectives. Overcoming challenges through targeted strategies will facilitate a more holistic educational framework honoring Indigenous knowledge and promoting sustainability and cultural understanding.

In conclusion, integrating IKS and pedagogical approaches inspired by IKS into modern curricula is vital for creating an education system that respects and values cultural diversity. By confronting the challenges and embracing practical suggestions, educators can foster a more inclusive learning environment that empowers all students.

REFERENCES :

[1] Amani, S. (2024). Integrating Indian Knowledge System: Revitalizing India's educational landscape.

[2] Khan, S., & Sharma, M. (2024). An Overview on Indian Knowledge System. Integrated Journal for Research in Arts and Humanities,

[3] Ministry of Education (India). (2020). National Education Policy 2020. https://www.education.gov.in/sites/upload_ files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf

[4] Rahman, Q. (n.d.). Challenges of Indian Knowledge System and NEP 2020. KD Publications.

[5] Bhat, R. (2019). Holistic education: Lessons from Indian pedagogical traditions. *Journal of Education and Culture*, *15*(2), 45–62.

[6] Goswami, A. (2020). Integrating traditional knowledge systems in modern education: A global perspective. *International Journal of Comparative Education*, *28*(3), 112–130.

[7] Cajete, G. (2000). *Native Science: Natural Laws of Interdependence*. Clear Light Publishers.

[8] Archibald, J. (2008). *Indigenous Storywork: Educating the Heart, Mind, Body, and Spirit*. University of British Columbia Press.

[9] https://www.Google.com

[10] https://www.wikipedia.org.

जगन्नाथपण्डितस्य वैदुष्यम्

Dr. P. SRIVALLI
Lecturer In Sanskrit
Skr Govt. Degree College (W)
Rajamahendravaram, Andhra Pradesh
Cell No. : 9640604153
Email : prabhavasv@gmail.com

उपोद्घातः

महाप्रतिभाशाली श्रीजगन्नाथः आन्ध्रप्रदेशे "कोनसीमा" इति विख्याते प्रान्ते "मुंगंड" नामके अग्रहारे अजायत। अयं महाकविः, सुप्रसिद्धालङ्कारिकः, सकलशास्त्रपारङ्गतश्च। कौण्डिन्यगोत्रोद्भवस्य अस्य माता लक्ष्मीः, पिता पेरुभट्टः। सकलशास्त्रपारङ्गतः पेरुभट्टः। अतः जगन्नाथः पितुस्सकाशात् अधीतसर्वशास्त्रः, व्याकरणं तु शेषवीरेश्वरपण्डितसकाशात् प्राप्तः।

"पाषाणादपि पीयूषं स्यन्दते यत्प्रसादतः।
तं वन्दे पेरुभट्टाख्यं लक्ष्मीकान्तं महागुरुम्॥"

इति पितरं स्तौति जगन्नाथः। क्रिस्तोः परं सप्तदशशताब्दीयः अयं षाजहान् चक्रवर्तिनः आस्थानमलञ्चकार। पण्डितरायः इति बिरुदेन विख्यातस्य अस्य सन्ति कृतयः बहवः।

1. गङ्गालहरी
2. अमृतलहरी
3. करुणालहरी
4. लक्ष्मीलहरी
5. सुधालहरी
6. यमुनावर्णनम्
7. आसफविलासः
8. जगदाभरणम्
9. प्राणाभरणम्
10. भामिनीविलासः
11. चित्रमीमांसाखण्डनम्
12. मनोरमाकुचमर्दनम्
13. रसगङ्गाधरः

एषु रसगङ्गाधराख्यः आलङ्कारिकग्रन्थः। महापण्डित इति आलङ्कारिकशिरोमणिरिति जगन्नाथस्य यशः कारकः रसगङ्गाधरग्रन्थः। जगन्नाथस्य वादप्रतिभा, न्यायशास्त्रप्रावीण्यं, सूक्ष्मेक्षिका, अलङ्कारशास्त्रप्रतिभा, रचनानिर्माणचातुर्यमित्यादयः ग्रन्थेऽस्मिन् स्पष्टतया भाति। परन्तु अयं ग्रन्थः असंपूर्णः।

आनन्दवर्धनेन प्रतिपादितस्य ध्वनिसिद्धान्तस्य समर्थकः जगन्नाथः। अयं न कोऽपि नूतनसिद्धान्तं प्रातिपादयत, परन्तु प्राचीनसिद्धान्तान् सन्देहैः विना, निर्दुष्टतया सुस्पष्टं प्रातिपादयत इति विशेषः। अर्थत् प्राचीनालङ्कारिकसिद्धान्तान् नवीनरूपेण प्रादर्शयत्। नव्यन्यायप्रक्रियां रसगङ्गाधरद्वारा अलङ्कारशास्त्रे प्रावेशयत् जगन्नाथः।

प्रसिद्धाः वृत्तान्ताः केचन

समस्तभारतदेशे प्रसिद्धिं प्राप्तः महापण्डितकवीन्द्र इति कृत्वा जगन्नाथस्य उपरि बह्व्यः कथाः प्रचलिताः। काश्चन कथानामाधारेण अस्य अक्बर षाजहान् इत्यादि चक्रवर्तिभिः आसफखान, जगत्सिंग् इत्यादिभिः बहुसामीप्यसम्बन्धमासीदिति भाति।

जगन्नाथः मोगल् चक्रवर्तिनामास्थानपण्डितरूपेण विराजमाने काले अन्यदेशीयः कश्चन राजा स्वीयमास्थानमागन्तुम् आहूतवानिति तदा जगन्नाथः-

दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा मनोरथान् पूरयितुं समर्थः।
अन्यैर्नृपालैः परिदीयमानं शाकाय वा स्थाल्लवणाय वा स्यात्॥
इति तं तिरस्कृतवानिति प्रसिद्धिः।

जगन्नाथः मोगल् राजसभां प्रविश्य स्वीयदरिद्रावस्थामेवं अवर्णयदिति श्रूयते यथा -

शीतार्ता इव संकुचन्ति दिवसा नैवाम्बरं शर्वरी
शीघ्रं मुञ्चति किं च सोऽपि हुतभुक्कोणं गतो भास्करः।
त्वं चानङ्गहुताशभाजि हृदये सीमन्तिनीनां गतो
नास्माकं वसनं न वा युवतयः कुत्र व्रजामो वयम् ॥ इति।

शैत्येन पीडय्न्ति वा इव दिवसाः संकुचन्ति। रात्रिः अम्बरं न मुञ्चति। सूर्यः आग्नेयदिशमगमत। भवान् मन्मथाग्नियुतस्त्रीणां हृदयेषु प्रविष्टः। अस्माकं तु वस्त्राणि वा युवतयो वा न सन्ति। अतः कुत्र गच्छामः इति स्वीयावस्थां चमत्कारतया अवर्णयदिति, तेन सन्तुष्टः सम्राट् आस्थाने स्थानमददात् इति ज्ञायते।

जगन्नाथः स्वस्य यौवनकालं सर्वं दिल्लीबल्लभसकाशे नीतवानिति स्वयमुदघोषयत् यथा-

शास्त्राण्याकलितानि नित्यविधयः सर्वेऽपि सम्भाविता
दिल्लीवल्लभपाणिपल्लवतले नीतं नवीनं वयः।
सम्प्रत्युज्झितवासनं मधुपुरीमध्ये हरिः सेव्यते
सर्वं पण्डितराजराजितिलकेनाकारि लोकाधिकम् ॥

शास्त्राणि सर्वाणि परिशीलितानि, नित्यकर्माणि कारितानि, यौवनसमयरू दिल्लीप्रभोः कराग्रे सुखेन यापितः। इदानीं मनोमालिन्यं सर्वं दूरीकृत्य बृन्दावने श्रीकृष्णः पूज्यते (इदानीं वाराणस्यां परतत्त्वान्वेषणं क्रियते)-एवं पण्डितराजराजतिलकोऽहं सर्वकार्याणि लोकातीतरीत्या अकारि इति आत्मगौरवं प्राकटयत् जगन्नाथः।

तथैव जगत्सिंहप्रभुं प्रशंसन् लिखिते जगदाभरणाख्ये ग्रन्थे अन्ते विद्यमानश्लोकगद्यभागाधारेण जगन्नाथः जगत्सिंहस्य आस्थानमलञ्चकार इति स्पष्टं भवति।

यथा :

त्रैलिङ्गान्वयमङ्गघ्लालयमहालक्ष्मीदयालालितः
श्रीमत्पेरमभट्टसूनुरनिशं विद्वल्ललाटं तपः।

श्रीराणाकविकर्णनन्दनजगात्सिंहंप्रभोर्वर्णनं

श्रीमत्पण्डितराजसत्कविजगन्नाथो व्यातानीदिदम्॥ इति

इति महामहोपाध्यायपदवाक्यप्रमाणपारीण त्रिलिङ्गकलावतंसश्रीमप्तेरमभट्टसूरेस्तनयेन विनिर्मितं गजदाभरणाण्यं जगत्सिंहयशोवर्णाम्......... इत्यनयोः पद्यगद्यैः जगन्नाथः जगत्सिंहस्यास्थानमप्यलङ्ककारेति सुस्पष्टं भवति।

एतत्परिशीलनेन षदिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा इति श्लोके उदाहृतः जगदीश्वरः जगत्सिंह

एव इति वक्तुं शक्यते।

जगन्नाथस्य व्यक्तित्वम्

सनातनधर्मश्रद्धालुः सकलशास्त्रपण्डितोऽयं शास्त्रार्थविमर्शनेऽपि पटुः। आत्मविश्वासी महाकविः इति रसगङ्गाधरे स्पष्टं भवति। आनन्दवर्धन, अभिनवगुप्तादि प्राचीनालङ्कारिकेषु बह्वादरं, परन्तु शास्त्रीयविषयेषु यद्यभिप्रायभेदः वर्तते, निष्कर्षतघ्या व्यमृशत्। कवित्वनिर्माणदक्षतायां जगन्नाथस्य आत्मविश्वासम् अनेकत्र अभिव्यक्तम्। तेन समं मधुरकवित्वं केनापि वक्तुं शक्यते वा इति स्वयं प्रतिज्ञामकारि यथा -

आमूलाद्रत्नसानोर्मलयपरिगतादा च कूलात्पयोधेः
यावन्तः सन्ति काव्यप्रणयनचतुराः निर्विशङ्कं वदन्तु।
मृद्वीकामध्यनिर्यन्मसृणरसझरीमाधुरी भाग्यभाजां
वाचामाचार्यतायाः पदमनुभवितुं कोऽस्ति धन्यो मदन्यः ॥

मेरुपर्वतादारभ्य मलयपर्वतसमीपस्थ समुद्रपर्यन्तं स्थिते भूभागे काव्यनिर्माणचातुर्यं येषामस्ति ते निर्भयं वदन्तु। पक्वद्राक्षाफलात् स्रावितरसप्रवाहस्य यावन्माधुर्यं तावन्माधुर्ययुक्तकवित्वनिर्माणे आचार्यत्वमधिष्ठितुं युक्तता मां विना कस्याप्यस्ति वा? इति भावः।

रसगङ्गाधरे प्रसादगुणं वर्णयन् जगन्नाथः मद्रचनानि बहूनि प्रसादगुणस्य उदाहरणभाजनानि इति अत्यन्तमात्मविश्वासमदर्शयत्। एतन्नकेवलमहङ्कारभाषणमिति जगनाथकवित्वपरिचिता स्वयं जानन्त्येव।

श्रीमदादिशङ्कराचार्यप्रतिपादिताद्वैतसिद्धान्ते अचञ्चलविश्वासी जगघ्नाथः। शिवकेशवयोरू भेददृष्टिर्नास्तीति विश्वासी चेदवि केशवस्य विषये ईषद्भक्तिभावः अधिकः दृश्यते। तथैव गघङ्गायमुनानद्योः भक्तिरधिका इति विदितमेव संस्कृतज्ञानाम्, यतः स्वीयजीवितं सर्वं गङ्गायमुनापरीवाहप्रान्तेष्वेव यापितम्। अत एव गङ्गालहरी, यमुनालहरीकाव्ये रचितम्।

परितः विद्यमानमानवानां स्वभावपरिशीलनायाम् अनितर साधारणं सामर्थ्यं
जगन्नाथस्य। मोगलराजधान्यां कासां सुन्दरीणां सविलासविहारान् अवर्णयत् यथा-
भवनं करुणावती विशन्ती गमनाज्ञालवलाभलालसेषु।
तरुणेषु, विलोचनाब्जमालामथ बाला पथि पातयाम्बभूव॥ इति
अतिलोकसुन्दर्याः कटाक्षवीक्षणार्थं युवकानामनुसरणमत्र वर्णितम्।

कपोतपोषणं प्राचीनकाले नागरकताचिह्नम्। एतत्सम्बद्धघटनामेकां रसवत्तरमवर्णयत् जगन्नाथः यथा-

"निरुध्य यान्तीं तरसा कपोतीं कूजत्कपोतस्य पुरो दधाने।
मयि स्मितार्द्रं वदनारविन्दं सामन्दमन्दं नमयाम्बभूव ॥ इति

कपोतं निरुद्ध्य गच्छन्तीं कपोतीं बद्ध्वा कपोतस्य पुरतः स्थापनेन कपोती स्मितमुखपद्मा मां वीक्ष्य, मन्दं मन्दं नम्रमुखी अभवदिति चमत्कारतामदर्शयत्।

कृतीनां परिचयः

1. गङ्गालहरी

पीयूषलहरी इति नामान्तरमस्य। गङ्गास्तुतिरूपं 53 श्लोकघ्युक्तं लघुकाव्यमेतदत्यन्तां लोकप्रसिद्धिं प्राप। पञ्चलहरीषु

प्रधानमिदं काव्यम्। रसगङ्गाधरे कथितरीत्या एताः पञ्चलहर्यः देवीदेवयोर्विषये भक्तिभावचित्रिताः प्रबन्धाः। एतद्विषयः "प्रबन्धस्य तु योगवासिष्ठरामायणे, शान्तकरणयोः मन्निर्मिताश्च पञ्चलहर्यः भावस्य" इति कथनेन ज्ञायते। अत्रस्थारू श्लोकाः सर्वाः पूर्वापरश्लोकान्तरानपेक्षिताः परिपूर्णार्थबोधकारू मुक्तका : एव।

गङ्गालहरी नाम गङ्गातरङ्गः। गङ्गा पवित्रतासम्पादकी आनन्दकारकी इति अस्याः कृतेः नाम सार्थकम्। ग्रन्थेऽस्मिन् प्रथमश्लोके जगन्नाथः गङ्गानुग्रहं प्रार्थयामास।

समृद्धं सौभाग्यं सकलवसुधायाः किमपि तत्
महैश्वर्यं लीलाजनितजगतः खण्डपरशोः।
श्रुतीनां सर्वस्वं सुकृतमथ मूर्तं सुमनसां
सुधासौन्दर्यं ते सलिलमशिवं नः शमयतु॥

हेगङ्गे! तवोदकं समस्तभूमण्डलसम्बद्धं समृद्धं सौभाग्यम्। लीलया जगत्सर्वं सृष्टस्य परमशिवस्य महैश्वर्यम्, वेदानां मूतीभूतं पुण्यम्। अमृततुल्यं सौन्दर्यं, तादृध्शं ते उदकं अस्माकममङ्गलं अपसारयतु इति भावः। गङ्गा दर्शनमात्रेणैव पापान् नाशयतीति भारतीयमास्तिकसम्प्रदायः। गङ्गास्नानेन स्वर्गफलं लभते इति अस्माकं विश्वासः। एतन्मनसि निधाय जगन्नाथः गङ्गायाः महत्त्वं बहुधा अवर्णयत् अस्मिन् ग्रन्थे। गङ्गानद्याः सहकारान्तरानपेक्षे भक्तपालनसामर्थ्ये स्वीयं विश्वासं प्राकटयत् कविः यथा—

विधत्रां निश्शङ्कं निरवधि समाधिं विधिरहो
सुखं शेषे शेतां हरिरविरतं नृत्यतु हरः।
कृतं प्रायश्चित्तैरलमथ तपोदानयजनैः
सवित्री कामानां यदि जगति जग्गर्ति भवती॥

हे जननि! ब्रह्मा शाश्वतं समाधिस्थितौ भवतु, विष्णुः सुखमादिशेषस्योपरि शयतु, शिवः विरामं विना नृत्यतु, प्रायश्चित्तैः तपोभिः, दानैः, यज्ञैः अलम्। समस्तघ्वाञ्छापूरणार्थं यदि भवती चेत् किमन्यैः इति गङ्गानद्याः महत्त्वमवर्णयत। एवं 53 श्लोकैः विलक्षणतया गङ्गानद्याः माहत्म्यं प्राकटयत् कविः।

2. अमृतलहरी

एतत् यमुनानदीवर्णनरूपं 11 श्लोकयुक्तं लघुकाव्यम्। यमुनातीरे मधुरापट्टणे, देहल्यां च चिरं न्यवसदिति हेतोः श्रीकृष्णभक्तस्य जगन्नाथस्य यमुनायां घनिष्ठप्रीतिः। तस्य प्रीतिः, भक्तिश्च अमृतलहर्यां सुष्ठु व्यक्तीकृता।

आध्यात्मिक दृष्टिमतः जगन्नाथस्य दृश्यमानजगति भोगास्सर्वारू नश्वरा इति, अर्थशून्या इति भावना। तादृशमानसिकस्थित्यां जगन्नाथः यमुनानदी संबुद्ध्य एवमवर्णयत् यथा-

दानान्धीकृतगन्धसिन्धुरघटागण्डप्रणाली मिलद्
भृङ्गालीमुखरीकृताय नृपतिद्वाराय बद्धोऽञ्जलिः।
त्वत्कूले फलमूलशालिनि मम श्लाघ्यामुरी कुर्वतो
वृत्तिं हन्त मुनेः प्रयान्तु यमुने वीतज्वरा वासराः॥

हे यमुनादेवि! मदोदकेन नेत्रान्धत्वमाप्तमदकरीजालस्य गण्डस्थलस्थितमदघ्रेखासु मुखरीकृत भ्रमरसमुदायेन व्यक्तीकृते राजद्वाराय अञ्जलिं समर्पयामि। फलमूलैः समृद्धे भवत्तीरे प्रशस्तमुनिवृत्तिं स्वीकृतवते मम दिवसाः मनस्तापं विना भवन्तु इति श्लोकभावः।

3. करुणालहरी

विष्णुस्तुतिपरायां करुणालहर्यां 55 श्लोकारू विलसन्ति। जगन्नाथः करुणालहरीं परिपूर्णशरणागतिभावेन आत्मसमर्पणं कुर्वन् प्रारभत यथा-

विषीदता नाथ विषानलोप मे विषादभूमौ भवसागरे विभो।
परं प्रतीकारमपश्यताऽधुना मयाऽयमात्मा भवते निवेदितः॥ इति

हे रक्षक। प्रभो! विषाग्निना समाने दुःखनिलयेऽस्मिन् संसारसमुद्रे कष्टांभसि स्थितोऽहं प्रतीकाराय उपायान्तरमदृष्ट्वा अयमात्मा भवते समर्पयामीति श्लोकभावः।

करुणालहर्यां 40 तः 54 श्लोकैः श्रीकृष्णं, मुखतः पादपर्यन्तं वर्णयन् कविः श्रीकृष्णस्य अत्युद्भ्भुतचित्रं पुरतः निधाय एवं प्रार्थयामास।

यथा—

सरतः सरणौ सतो बहिः स्वपतो वाऽऽलपतो गृहान्तरे।
वपुरीदृशमीश तावकं हृदयालम्बनमस्तु मे सदा॥

अत्यद्भुतेऽस्मिन् स्तोत्रे प्रगाढा भक्तिः, भगवान् जगज्जनकः अवश्यं रक्षयतीति दृढविश्वासः, आत्मसमर्पणमित्यादि भक्तलक्षणानि सम्यक् वर्णितानि। वक्रोक्तिप्रयोगे, भगवतः स्वरूपवर्णनपरे स्तोत्रस्यास्य सदृशमतीवविरलमिति निश्चप्रचं वक्तुं शक्यते। अत एव करुणालहरी प्रबन्धस्थानमावहतीति विमर्शकानामभिप्रायः।

4. लक्ष्मीलहरी

अत्र 41 श्लोकैः सम्पदः, सौन्दर्यस्य अधिदेवतां लक्ष्मीदेवीम् अस्तौत। लक्ष्म्याः अनुग्रहेणैव कोऽपि वा सम्पदं, अधिकारं, लौकिकसुखानि च प्राप्नोति। प्रारम्भे पञ्चश्लोकैः लक्ष्मीकटाक्षान् वर्णयामास। यथा—

समीपे सङ्गीतस्वरमधुरभङ्गीमृगदृशां
विदूरे दानान्धद्विरद कलभोदाम निनदः।
बहिर्द्वारि तेषां भवति हयहेषा कलकलो
दृगेषा ते येषामुपरि कमले देवि सुदया॥

हे लक्ष्मीदेवि! दयापूर्णा भवदृष्टिः कस्योपरि प्रभृता तस्य समीपे स्त्रीणां मधुरसङ्गीतध्वनिः श्रूयते। दूरे मदजलयुक्तबालगजानां घींकारध्वनयः श्रूयन्ते। द्वारस्य बहिरू अश्वानां हेषाध्वनयः श्रूयन्ते इति श्लोकस्य भावः।

प्रति पदं, प्रति अर्थः, प्रति न्यायः, प्रतिः कला च काव्ये भवन्तीति उवाच भामहाचार्यः काव्यालङ्कारग्रन्थे।

यथा—

न सशब्दो, न तद्वाच्यं न स न्यायो न सा कला।
जायते यत्र काव्याङ्गमहो भारो महान् कवेः॥

सर्वेष्वपि महाकाव्येषु विविधशास्त्रसम्बद्धानि कानिचन विषयाणां निर्देशरू दृश्यते एव। लक्ष्मीलहर्यामपि अद्वैतवेदान्तसिद्धान्तनिर्देशमकरोत् जगन्नाथः।

लक्ष्म्याः मध्यप्रदेशं वर्णयन् कविः
जगन्मिथ्याभूतं मम निगदतां वेदवचसा
मभिप्रायो नाद्यावधि हृदयध्याविशदयम्।
इदानीं विश्वेषां जनकमुदरं ते विमृशतो
विसंदेहं चेतोऽजनि गरुडकेतोः प्रियतमे ॥

जगन्मिथ्या इति वेदवाग्भ्यः अभिप्रायः एतावत्पर्यन्तं मम मनसः नावगतम्। हे विष्णुप्रिये! जगतां सर्वेषां कारणभूतं भवदुदरं विमृशतः मम मनसि सन्देहनिवृत्तिः जाता। जगतः कारणभूतमुदरमेव मिथ्या चेत जगन्मिथ्या इत्यत्र सन्देह एव नासीदिति चमत्कारः।

5. सुधालहरी

30 श्लोकैः विलसिता सुधालहरी सूर्यस्तोत्र रूपा। सप्तमशताब्दीयरू मयूरनामककविः सूर्यस्तुतिपरं मयूरशतकं व्यरचयत। तस्य प्रभावः अस्यां कृत्यामुपरि वर्तते। मयूरशतकं तथा सुधालहरी चापि स्रग्धरावृत्तौ स्तः कविः सूर्योदयवर्णनेन ग्रन्थस्यास्य प्रारम्भमकरोत। यथा—

उल्लासः फुल्लपङ्केरुहपटलपतन्मत्तपुष्पंधयानां
निस्ताररू शोकदावानलविकलहृदां कोकसीमन्तिनीनाम्।
उत्पातस्तामसानामुपहतमहसां चक्षुषां पक्षपातः
संघातः कोऽपि धाम्नामयमुदगिरिप्रान्ततः प्रादुरासीत्॥

विकसितपद्मसमूहेषु पतन्तः मदभ्रमराणां आनन्दः, शोकदावाग्निका विकलहृदां चक्रवाकीनां दुःखनिवृत्तिः अन्धकारे सञ्चारितामुपद्रवः, कान्तिविगलितनेत्राणां पक्षपातभूतः कोऽपि तेजरू समुदायः उदयाचलप्रान्तात् आविर्भूतः इति श्लोकस्य भावः।

रसगङ्गाधरे श्लोकोऽयं मध्यमकाव्यस्योदाहरणरूपेण दर्शितम्। श्लोकेऽस्मिन् वृत्त्यनुप्रास इति शब्दालङ्कारः वर्तते। पदानि ओजोगुणानि प्रकटयन्ति। प्रसादगुणः वर्तते इति कृत्वा श्लोकपठनसमनन्तरमेव पाठकः अर्थावगमनेन रूपकं, हेत्वलङ्कार च शीघ्रं जानाति। एवं रीत्या श्लोकेऽस्मिन् शब्दः अर्थश्च सममेव चमत्कारमाप्नुवतः इति मध्यमकाव्यभेदस्य उदाहरणमर्हति।

यमुनावर्णनम्

एतत्काव्यमलभ्यम्। इदं यमुनावर्णनरूपं गद्यकाव्यं वा चम्पूकाव्यं वा भवति। अत्रस्थात् पंक्तिद्वयवाक्यद्वयमात्रं रसगङ्घधरे उदाह्रतम्।

6. आसफविलासः

एतदासफखानं प्रशंसन् लिखितं प्रशस्तिकाव्यम्। आसफखानः नूर्जहान्घ्राण्याः सोदरः, षाजहान्चक्रवर्तिनः श्वशुरः। साम्राज्यपरिपाने अधिकारमदर्शयत् बहुधा। अस्मिन् ग्रन्थे माकिं पञ्च पंक्तयः सन्ति। आख्यायिकाभेदे अन्तर्गतं लघुकाव्यमिदम्। लघुगद्येन प्रारभ्य मध्ये श्लोकचतुष्टयम् , अन्ते दीर्घगद्येन समापितम्।

7. जगदाभरणम् - प्राणाभरणम्

एकमेव लघुकाव्यं, तत्र लघु लघु परिणामैः नामद्वयं स्थापितम्। प्रथमं जगत्सिंहप्रशस्तिपरं, द्वितीयं प्राणनारायणप्रशस्तिपरम् उपायोजयत जगन्नाथः। अत्र 53 श्लोकाः विलसन्ति। अस्य ग्रन्थस्य जगन्नाथ एव व्याख्यानमप्यलिखत। एतन्न केवलं जगत्सिंह - प्राणनारायणयोरू प्रशस्तिकाव्यम्। दाराषिकोहस्य प्रशस्तिपरमपि।

जगन्नाथः काव्यमिदं स्वकीयकाव्यमभिनन्दितुं समर्थः कोऽपि नास्तीति निराशया प्रारभत।
विद्वांसो वसुधातले परवचः श्लाघासु वाचंयमाः
भूपालाः कमलाविलासमदिरोन्मीलन्मदाघूर्णिताः।
आस्ये धास्यति कस्य लास्यमधुना धन्यस्य कामालस
स्वर्वामाधरमाधुरीमधरयन् वाचां विलासो मम॥ इति

लोकेऽस्मिन् विद्वांसः सर्वे परगुणान् श्लाघयितुं मौनमाश्रयन्ति। राज्ञां शिरांसि लक्ष्मीविलासमद्येन विजृम्भितमदेन आघूर्णितानि। कामालसानाम् अप्सरस्त्रीणाम् अधरमाधुर्यमपि तिरस्कृतयोग्यं मम वाग्विलासं कस्य धन्यस्य मुखे लास्यति? इति श्लोकस्यास्य भावः।

8. भामिनी विलासः

ग्रन्थेऽस्मिन् प्रास्ताविकविलासः, शृङ्गरविलासः, करुणविलासः, शान्तिविलासः इति शीर्षिकाभिः तदा तदा रचिताः मुक्तकश्लोकाः निबद्धाः। प्रास्ताविकविलासे 122 श्लोकारू, शृङ्गारविलासे 180 श्लोकारू, करुणविलासे 19 श्लोकारू, शान्तिविलासे 44 श्लोकारू आहत्य भामिनीविलासे 365 श्लोकाः विलसन्ति।

अत्र बहवः श्लोकाः अन्योक्तयः, केचन श्लोकाः नीतिबोधकाः। अप्रस्तुतं कमपि विषयं वर्णयन् कविः बुद्धिस्थं प्रस्तुतं विषयं सूचयति, तादृशी उक्तिरेव अन्योक्तिः। एते शाश्वतघ्सत्यानि, एतादृशानां बोधनेन अन्योक्तीनां शाखतलोकप्रियत्वं लभते। कुत्रचित् सन्दर्भे एतारू अन्योक्तयः मानवस्वभावे सुपरिणामायापि उपकुर्वन्ति।

मूर्खाणां मध्ये मूर्खत्वमेव अनुकरेत् चेत् क्षेमाय भवति इत्यवदत् जगन्नाथः। थथा—

एकस्त्वं गहनेऽस्मिन् कोकिल न कलं कदाचिदपि कुर्याः।

साजात्यशङ्कयामी न त्वां निघ्नन्ति निर्दयाः काकाः ॥

हे कोकिल! एतस्मिन् गहनाण्ये एक एव अस्ति, मधुरं मा कूजतु, निर्दयाः काकाः त्वं स्वजातीयशङ्कया एतावत्पर्यन्तं न हिनस्ति त्वाम् इति श्लोकभावः।

शृङ्गारविलासे दाम्पत्यस्नेहम् अवर्णयत् कविः यथा–

अवधौ दिवसावसानकाले भवनद्वारि विलोचने दधाना।

अवलोक्य समागतं तदा मामथ रामा विकसन्मुखी बभूव॥ इति

सायंकाले गृहागमनसमये गृहद्वारे दृष्टिं पातयन्त्याः तस्याः मुखं यावदन्तरं समागतं मां दृष्ट्ष्वा विससितमिति श्लोकभावः।

कुरुणविलासे जगन्नाथः स्वर्गस्थां भार्यां स्मृत्वा दुःखमनुभूय करुणरघ्सार्द्रशब्दैः प्राकटयत् यथा–

काव्यात्मना मनसि पर्यणमन् पुरा मे

पीयूषसारसरसास्तव ये विलासाः।

तानन्तरेण रमणी रमणीयशीले

चेतो हरा सुकविता भविता कथं नः ॥

पूर्वम् अमृतसारवतः भवद्विलासः मम मनसि काव्यात्मतया परिणताः। हे रमणीयशीले! प्रिये! इदानीं तद्विलासानामभावेन मनोहरकविता न समागता इति दुःखं प्राकटयट् जगन्नाथः।

शान्तिविलासस्थः प्रथमः श्लोकः रसगङ्गाधरग्रन्थे मङ्गलश्लोकः। यथा–

स्मृतापि तरुणातपं करुणया हरन्ती नृणा -

मभङ्गुर तनुत्विषां वलयिता शर्तैर्विद्युताम्।

कलिन्दगिरिनन्दिनीतटसुरद्रुमालम्बिनी

मदीयमतिचुम्बिनी भवतु कापि कादम्बिनी ॥ इति

स्मरणमात्रेणैव मानवानां तीव्रतरमातपं करुणया हरन्ती, स्थिरतरशरीरकान्तिमतां शतानां विद्युतैः वलयन्ती यमुनातीरस्थकल्पवृक्षमधिष्ठिता कापि मेघमाला मम मनश्चुम्बिनी भवतु इति श्लोकभावः। भगवन्तं श्रीकृष्णं स्तौति अत्र।

9. चित्रमीमांसारखण्डनम्

ग्रन्थोऽयं अप्पयदीक्षितविरचितचित्रमीमांसानामकालङ्कारिकशास्त्रग्रन्थखण्डनार्थं रचितः। चित्रमीमांसाग्रन्थस्य दोषान् रसगङ्गाधरे चर्चितः, तान् एव पठितृजनसौकर्यार्थं पृथक् ग्रन्थरूपेण अरचयदिति स्पष्टं भवति।

10. मनोरमाकुचमर्दनम्

इदं भट्टोदीक्षितकृतवैयाकरणसिद्धान्तकौमुद्याः विरचित प्रौढमनोरमा-नामकव्याख्यानस्य खण्डनाय विरचितः।

11. रसगङ्गधध्धरः

जगन्नायस्थ अत्युत्तमग्रन्थः। अलङ्कारशास्त्रे सुप्रसिद्धः ग्रन्थः। अत्रस्थारू उदाहरणश्लोकारू सर्वे स्वीयविरचिताः। स्वीयश्लोकानेव उदाहरणारूपेण दर्शयितुं जगन्नाथः संतृप्तिं प्राकटयत् यथा–

निर्मायनूतनमुदाहरणानुरूपं

काव्यं मयात्र निहितं न परस्य किञ्चित्।

किं सेव्यते सुमनसां मनसापि गन्धः

कस्तूरिकजननशक्तिभृता मृगेण ॥ इति

मम अलङ्कारशास्त्रग्रन्थै उदाहरणरूपेण दर्शयितुं योग्यान् नूतनश्लोकान् विरच्य तानेव उदाहृतवान्, परन्तु अन्येषां श्लोकान् नोदाहृतवान्। कस्तूरिमृगः कुसुमानां सुगन्धं मनसा वा न सेव्यते इति रसगङ्गाधरे प्रारम्भे एव अवोचत्।

जगन्नाथः स्वीयमद्ध्भुतकविताशक्तिं रसगङ्गाधररचनायं उपयुक्तवान्। रसगङ्गाधर इति नाम्ना स्फुरितस्य “शिवः” इति

अर्थस्थानुगुणं जगन्नाथः ग्रन्थस्यास्य अध्यायानां 'आननम्' इति नाम अस्थापयत्। अनेन बहवः विमर्शकाः परमेश्वरः पञ्चाननः, अतः रसगङ्गाधरकाव्यस्याऽपि पञ्चाननानि सन्तीति, त्रीणि आननानि इदानीं न लभ्यन्ते इति भावयन्ति।

परन्तु अर्थनारीश्वरं मनसि निधाय स्वीयग्रन्थस्य अध्यायस्य आननसंज्ञा अददात् इति, तत्र रससिद्धान्तं प्रधानतया प्रतिपादितस्य प्रथमाननस्य 'रसो वै सः' इत्युक्तस्य परमेश्वरस्याननमिति, प्रधानतया अलङ्काराणामुल्लेखेन द्वितीयाननं ताटङ्कमन्दहासाद्यलङ्कृता परमेश्वर्याः आननमिति केचिद्विमर्शकाः अभिप्रयन्ति।

उपसंहारः

एवं पण्डितरायः जगन्नाथः विद्वद्वरेण्यः, पण्डितद्युमणिः, सरसकवितानिर्माणदक्षः, महाकविः, असाधारणकाव्यपरीक्षाचतुरः, सहृदयधुरीणः भूत्वा, ऐहिकपारलौकिकसुखानां समप्राधान्यं दत्वा परिपूर्णजीवनं यापितः विशालदृक्पथः धीराग्रेसररू, अत्युन्नतकोटौ गणितः कविपण्डितश्रेण्यां सर्वजनादरणीयस्थाने विराजते।

उपयुक्तग्रन्थसूची

1. रसगङ्गाधरः जगन्नाथः- चौखम्बा विद्या भवन्- बनारस-१६५५
2. गङ्गालहरी जगन्नाथः-मौजीराम स्मृति न्यास-नई दिल्ली-१६६६
3. अमृतलहरी जगन्नाथः-वैखरी रीसर्चफौण्डेशन्-२०२०
4. करुणालहरी - जगन्नाथः-मौजीराम स्मृति न्यास-नई दिल्ली-२००५
5. लक्ष्मीलहरी-जगन्नाथः-कर्षक् आर्ट्प्रिन्टस्-हैदराबाद्-२०२१
6. सुधालहरी- जगन्नाथः-कर्षक् आर्ट्प्रिन्टस्-हैदराबाद्-२०२१
7. आसफविलासः- जगन्नाथः
8. जगदाभरणम्- जगन्नाथः-कृष्णदास् अकादमी, वाराणसी-१६८४
9. भामिनीविलासः गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास् प्रकाशन्-मुम्बई-१६६१
10. चित्रमीमांसा खण्डनम् -चौखम्बा कृष्णदास् अकादमी-२०१६
11. मनोरमाकुचमर्दनम्-जगन्नाथः-भारतीय विद्या संस्थान्-२०२१
12. चित्रमीमांसा - अप्पयदीक्षितः वैद्यनाथसूरिः- निर्णयसाग प्रेस, मुम्बयी-1955
13. काव्यमीमांसा राजशेखरः-चौखम्बा संस्कृत सीरीज् आफीस, वाराणसी-२०२२
14. पण्डितरायः-आचर्य फुलेलश्रीरामचन्द्रः संस्कृतभाषाप्रचारसमिति, हैदराबाद्-2004

पदटिप्पणी

1. रसगङ्गाधरे-१-३
2. जगदाभरणे-
3. रसगङ्गाधरे-पृ-१२१
4. अत्रैव-पृ.-६३
5. गङ्गालहर्याम्-श्लो-१
6. अत्रैव श्लो-२३
7. अमृतलहर्याम्-श्लो-३
8. करुणालहर्याम्-श्लो-१
9. अत्रैव-श्लो-५३

10. लक्ष्मीलहर्याम्-श्लो-४
11. काव्यालङ्कारे-५-४
12. लक्ष्मीलहर्याम्-श्लो-१७
13. सुधालहर्याम्-श्लो-१
14. प्राणाभरणे-श्लो-१
15. प्रासाविकविलासे-श्लो२३
16. करुणाविलासे-श्लो-१०
17. शान्तिविलासे- श्लो-३

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

TRANSFORMING BUSINESS EDUCATION IN INDIA: A 21st CENTURY PERSPECTIVE

Dr. Atul Kumar
Assistant Professor
Shri Ram College, Muzaffarnagar (Uttar Pradesh)
E- Mail: vermajiatul@gmail.com
M- 8126861795

Abstract:

Education serves as a powerful catalyst for human and societal advancement, enabling individuals to transition from a state of ignorance to informed understanding. It plays a vital role in shaping character, nurturing intellectual growth, and unlocking the full potential of individuals. More than just a mechanism for acquiring knowledge, education is a continuous, evolving process that adapts to the ever-changing demands of society. In the context of national development, education fosters social cohesion, economic progress, and cultural evolution.

In India, the 21st century has brought significant changes to the landscape of higher education, particularly in the fields of commerce and management. As the country experiences rapid globalization, digital transformation, and economic restructuring, the demand for education systems that go beyond theoretical learning has intensified. Commerce and management education, once primarily focused on conceptual understanding, is now undergoing a paradigm shift towards practical, industry-aligned, and skill-based learning models. This transition reflects the urgent need to enhance employability, entrepreneurship, and job-market readiness among graduates.

This paper provides a descriptive analysis of this transformation, highlighting the increasing significance of commerce and management disciplines in addressing contemporary economic and professional challenges. It also explores the emerging opportunities, curriculum innovations, and the role of value-added programs that are bridging the gap between academia and industry. Through this examination, the paper aims to underscore the critical role of commerce and management education in shaping India's workforce and driving national growth in the 21st century.

Keywords: Commerce, Management, Education, India, Skill Development, Employability

1. Introduction

Education is the cornerstone of a thriving and progressive society. It not only disseminates knowledge but also imparts skills, moral values, and civic sense that are crucial for societal well-being. Historically,

India's education system catered primarily to the elite, especially under the traditional *Guru-Shishya* model. During colonial rule, educational outreach remained limited, often excluding marginalized communities.

Post-independence, significant progress has been made to expand educational access across various strata of society. Government initiatives have helped establish educational infrastructure nationwide and introduced policies like reservations and subsidies to aid underprivileged groups. Despite ongoing disparities, concerted policy efforts continue to work toward inclusivity at all educational levels.

The effectiveness of this educational system relies not just on infrastructure or curriculum but on the motivation and competence of academic staff. While public expenditure on education has risen, there is still a need to better support and inspire educators to deliver meaningful learning experiences. Ultimately, an education system succeeds only when it equips students with relevant knowledge, skills, and values.

2. Commerce Education

Commerce education provides the foundation for effective business operations by equipping individuals with the necessary skills and knowledge to understand, analyze, and manage various aspects of the business world. It encompasses both theoretical concepts—such as economics, accounting, business law, and management—and practical training that prepares students for real-world business challenges. This balanced approach ensures that learners are not only informed about business principles but also capable of applying them in diverse organizational settings.

The journey of commerce education in India began in 1886 in Chennai, where the first course in bookkeeping was introduced. This humble beginning marked the start of a transformative academic stream that has grown tremendously over the years. Today, commerce is a widely pursued discipline in schools, colleges, and universities across the country, offering a broad range of specializations that cater to various professional interests and industry demands.

With the rapid pace of technological advancement and the expansion of industrial sectors, commerce education has evolved to stay relevant and responsive to current market trends. Modern commerce curricula now include contemporary fields such as e-commerce, e-banking, e-finance, digital marketing, and online trading. These areas reflect the growing influence of digitalization on the business landscape and highlight the need for professionals who are proficient in using technology to drive business growth.

Moreover, commerce education plays a crucial role in fostering entrepreneurial skills, financial literacy, and strategic thinking among students. It prepares them to navigate the complexities of global markets, adapt to economic fluctuations, and contribute to innovative business practices. By producing skilled professionals and future entrepreneurs, commerce education not only enhances individual career prospects but also contributes significantly to national economic development and competitiveness on the global stage.

In essence, commerce education is more than just a field of study—it is a vital instrument for building a knowledgeable and capable workforce that can lead and sustain economic progress in a rapidly changing world.

3. Management Education

Management education plays a vital role in equipping individuals with the knowledge, skills, and competencies needed to effectively lead, manage, and transform organizations in a dynamic and competitive environment. It encompasses a broad spectrum of subjects, including finance, marketing, operations, human resources, and strategic management, all aimed at fostering critical thinking, decision-making, and leadership capabilities.

In India, the formal study of management began gaining momentum in the 20th century, particularly after independence, as the country sought to build a robust industrial and economic base. Over the decades, it has evolved into a significant academic discipline and is now a core offering in numerous universities, business schools, and professional institutions across the nation. The establishment of premier institutions like the Indian Institutes of Management (IIMs) has further cemented its importance and contributed to the global recognition of Indian management education.

This field is particularly crucial in nurturing entrepreneurship and managerial talent, both of which are essential for economic growth and societal development. As industries continue to undergo rapid transformation driven by globalization, digitalization, and technological innovation, the role of management education has become even more pronounced. It serves as a foundational pillar for preparing future leaders who can navigate complex business challenges, drive innovation, and contribute to sustainable development.

In this evolving landscape, management education is not just about acquiring technical expertise but also about fostering ethical leadership, strategic vision, and a global perspective. As such, it remains indispensable for organizational growth, strategic planning, leadership development, and the creation of resilient, future-ready enterprises.

4. Significance of Commerce and Management Education

The importance of these fields has expanded significantly due to the following factors:

- In today's complex and competitive business environment, commerce and management education is essential for survival and success.
- These programs must be aligned with industry demands to remain relevant.
- Economic liberalization, globalization, and rapid technological advancement have increased the need for updated and flexible curricula.
- Beyond professional value, such education improves personal financial literacy and contributes to societal development.

5. Career Opportunities in Commerce and Management

Graduates in these fields have access to diverse and promising career paths, including:

- Roles in **banking, finance, taxation, stock broking, portfolio management**, and capital budgeting.
- Pursuit of professional qualifications such as **CA, CMA, CS**, and other specializations.
- Entry into **government and private banking**, insurance, consultancy, and public sector

enterprises.

- Employment in management domains such as **marketing, HR, production, export-import, and tourism management**.
- Opportunities in the **derivatives market**, **GST consultancy**, and **financial analytics**.
- Eligibility for **teaching positions** in higher education after clearing NET/SET or completing a Ph.D.

6. Value-Added Programs and Employability Skills

To bridge the gap between academic learning and industry expectations, students must acquire additional skills. Value-added certifications enhance employability and practical readiness. Recommended programs include:

- Advanced Microsoft Excel
- SAP (FICO)
- GST and Tally certification
- Banking and Aptitude Training
- Financial Modeling
- Communication and Soft Skills
- Business Analyst and CRT (Campus Recruitment Training)
- NET/SET Exam Preparation

These courses help students become industry-ready and stand out in competitive job markets.

7. Conclusion

In the 21st century, commerce and management education in India has emerged as a powerful vehicle for economic empowerment, career advancement, and social mobility. These academic streams provide students with a wide array of professional opportunities, equipping them with the skills and qualifications necessary to succeed in a highly competitive global marketplace. One of the most compelling advantages of commerce and management education is its cost-effectiveness in comparison to many other disciplines, while still offering high returns in terms of earning potential and job prospects.

With a robust ecosystem of postgraduate and professional education programs—such as Master of Commerce (M.Com), Master of Business Administration (MBA), Master of Finance and Accounting (MFA), Chartered Accountancy (CA), Cost and Management Accountancy (CMA), Chartered Financial Analyst (CFA), and others—students have the flexibility to tailor their academic journeys to match their career aspirations. These programs open doors to diverse sectors, including banking, finance, marketing, consulting, education, and entrepreneurship, thereby fostering a dynamic and resilient workforce.

However, to fully harness the potential of commerce and management education, it is essential to continuously align academic programs with evolving market trends and industry needs. This includes integrating digital skills, data analytics, sustainability practices, and global business strategies into the

curriculum. Additionally, encouraging experiential learning, internships, and the development of soft skills will further enhance the employability and readiness of graduates.

By strengthening institutional frameworks, fostering industry-academia collaboration, and promoting a culture of innovation and entrepreneurship, India can create an education system that not only responds to the current demands of the global economy but also anticipates future challenges. In doing so, commerce and management education will not only serve individual career goals but also contribute significantly to the nation's broader economic growth and development.

Ultimately, a forward-looking, inclusive, and skill-oriented approach to commerce education will empower India's youth to become leaders, innovators, and changemakers in the decades to come.

References:

1. www.highereducationinindia.com
2. www.ugc.ac.in
3. www.studyguideindia.com
4. Guntur Anjana Raju & Suraj Velip (2018). *Commerce and Management Education in India: Importance, Challenges, and Opportunities.* International Journal of Academic Research and Development.
5. Sinha, A. (2017). *From Management Institutes to Business Schools: An Indian Journey*. In/ Thakur, M., & Babu,/ R. (Eds.), *Management Education in India* (pp./ 43–53). Springer/ i-scholar.in+5link.springer.com+5rjhssonline.com+5

   — Explores the evolution of Indian management education since the 1960s, highlighting shifts post-1991 economic liberalization.
6. Malhotra Bhatia, S., & Panneer, S. (2019). *Globalization and Its Impact on Business Education in Emerging Economies: A Case of India*. *Journal of Education & Social Policy*, **6**(3), – journals.sagepub.com

   — Covers globalization's effects, skill gaps, and institutional reforms (e.g., new IIMs, regulatory bills).
7. Saxena, A. (2019). *Teaching in 21st Century Evolving Trends in Business Education*. *Research Journal of Humanities and Social Sciences*, **10**(3), 913–917. journals.sagepub.comi-scholar.in+1rjhssonline.com+1

   — Discusses digital pedagogy, demand for more pragmatic and innovative teaching in B schools.
8. Gupta, J., & Garg, K. (2021). *Reflections on Blended Learning in Management Education: A Qualitative Study with a Push–Pull Migration Perspective*. *Journal of Educational Development*, – researchgate.net+11journals.sagepub.com+11rjhssonline.com+11

   — Examines how blended (online/offline) learning affects business education reform in India.
9. Singh, A., Ranjan, J., & Dubey, G. (2020). *Knowledge Economy of Faculty Competencies of Indian Business Schools*. In *Encyclopedia of Education and Information Technologies* (pp./ –). Springer/ rcssindia.org+1i-scholar.in+1link.springer.com

   — Analyses faculty skills needed for knowledge-driven and tech-enabled education.
10. Panicker, P. (2020). *Exploring Cultural Challenges to Implementing Educational Technology in the Higher Education Sector in India*. *arXiv preprint*. arxiv.org

    — Addresses cultural resistance, power-distance and technology adoption in Indian academic settings.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

नारी विमर्श : विचार, चुनौती और प्रगति

Dr. Anupama
Assistant Professor, Department of Hindi
Mount Carmel College, Autonomous,
#58, Palace Road, Abshot Layout,
Vasanth Nagar, Bangalore-560032.
Phone Number-8105566341
Email.Id- pa.anupama09@gmail.com

सारांश

नारी विमर्श साहित्य, समाज शास्त्र, राजनीति, दर्शन और इतिहास जैसे विविध क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति, उनके अधिकारों, अनुभवों, संघर्षों और उनकी सामाजिक भूमिका को केंद्र में रखकर किया गया वह चिंतन है, जो समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक ढांचे को चुनौती देता है। यह विमर्श न केवल महिलाओं की समस्याओं की पहचान करता है, बल्कि उनके समाधान की दिशा में ठोस पहल करने का भी प्रयास करता है। नारी विमर्श केवल महिलाओं की समस्याओं की चर्चा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा वैचारिक और सामाजिक आंदोलन है जो समाज में लैंगिक समानता, नारी सशक्तिकरण और सामाजिक न्याय की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करता है। इसके माध्यम से यह स्पष्ट किया जाता हैं कि, जब तक समाज में नारी को बराबरी का स्थान नहीं मिलेगा, तब तक संपूर्ण सामाजिक विकास अधूरा रहेगा। नारी जीवन में सुधार केवल नारेबाज़ी या योजनाओं से नहीं बल्कि सक्रिय कानूनी जागरूकता और मज़बूत सुरक्षा व्यवस्था से संभव है। जब हर स्त्री अपने अधिकार जानती होगी, उन्हें पाने में सक्षम होगी और समाज उसे समर्थन देगा तभी नारी जीवन में वास्तविक प्रगति और सशक्तिकरण आएगा।

प्रस्तावना

नारी विमर्श वह सोच और आंदोलन है जो यह मानता हैं कि, नारी को पुरुष के समान अधिकार, अवसर और सम्मान मिलना चाहिए और वह सभी पारंपरिक व्यवस्थाएँ जो स्त्री को दबाती है उनका विरोध करना है। "नारी जीवन के प्रत्येक पहलू का चिंतन-मनन करके, उसकी समस्याओं का निराकरण करना है। नारी को अपने सकारात्मक कार्य के लिए प्रेरित करना है, समस्याओं के प्रति सचेत करके उसका सही दिशा-संकेत भी करना है। नारी को सबल पथ-प्रदर्शन और जीवन के प्रति जिजीविषा प्रदान करना है। नारी-विमर्श नारी के सामर्थ्य की खोज करके, उसे उससे ही परिचित कराना है। नारी की परंपरागत मानसिकता में परिवर्तन लाकर 'स्व' से साक्षात्कार करना ही नारी-विमर्श का मुख्य उद्देश्य रहा है।"(1) नारी विमर्श की उत्पत्ति उस सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया का परिणाम है, जिसमें महिलाओं को ऐतिहासिक रूप से दोयम दर्जे का स्थान दिया गया। नारी विमर्श की जड़े पाश्चात्य समाज में हुई नारीवादी आंदोलनों में देखी जा सकती हैं, जहाँ 18वीं शताब्दी में महिलाओं ने अपनी अधिकारों के लिए आवाज़ उठानी शुरू की। 'मेरी वोल्स्टोनक्राफ्ट' की पुस्तक "ए विंडिकेशन ऑफ़ द राइट्स ऑफ़

वीमेन"(1792) को इस विमर्श की प्रारंभिक दस्तावेज़ी अभिव्यक्ति माना जाता है। भारत में यह विमर्श सामाजिक सुधार आंदोलनों जैसे राजा राममोहन राय और ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयासों के माध्यम से प्रारंभ हुआ, जिन्होंने सती प्रथा, बाल विवाह और विधवा पुनर्विवाह जैसे मुद्दों पर कार्य किया। इसकी उत्पत्ति को दो व्यापक सन्दर्भो में समझा जा सकता है—पाश्चात्य संदर्भ और भारतीय संदर्भ। पश्चिमी देशों में नारी विमर्श की शुरुआत 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुई। इसे नारीवादी आंदोलन या फेमिनिज़्म के रूप में जाना गया, जिसमें स्त्रियों ने अपनी अधिकारों के लिए आवाज़ उठाई। इस विमर्श के प्रथम चरण में समान अधिकारों की माँग पर केंद्रित था-जैसे शिक्षा, संपत्ति और मताधिकार। 19वीं सदी में अमेरिका और यूरोप में स्त्री मताधिकार आंदोलन ने ज़ोर पकड़ा। द्वीतीय चरण में महिलाओं ने केवल कानूनी समानता नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक समानता की भी माँग की। 'सिमोन द बोउवा' की पुस्तक "द सेकेंड सेक्स"(1949) स्त्री विमर्श की ऐतिहासिक पुस्तक है, जिसमें उन्होंने लिखा : "one is not born, but rather becomes a woman". यह चरण यौन शोषण, घरेलू हिंसा, गर्भपात के अधिकार आदि मुद्दों पर केंद्रित था। तृतीय चरण में स्त्री विमर्श बहुलता और विविधता की ओर मुड़ा- जाति, नस्ल, वर्ग, लैंगिक पहचान आदि के आधार पर महिलाओं के अनुभवों में भिन्नता को समझा गया। इस दौर में ब्लैक फेमिनिज़्म, दलित फेमिनिज़्म और एल जी बी टी + फेमिनिज़्म जैसे नए विमर्श उभरे।

भारत में नारी विमर्श की शुरुआत सामाजिक सुधार आंदोलनों के साथ हुई। यद्यपि भारत में प्राचीन काल में भी कुछ स्त्रियाँ (जैसे-गागी, मैत्रेयी, मीराबाई) विचारशील और स्वतंत्र थीं, परंतु अधिकांश स्त्रियों को समाज में नियंत्रित और सीमित भूमिका दी गई। 19वीं सदी के सामाजिक सुधार आंदोलन में राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के खिलाफ़ आवाज़ उठाई। ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने विधवा पुनर्विवाह और बाल विवाह उन्मूलन के लिए प्रयास किए। ज्योतिबा फुले और सावित्री बाई फुले ने महिला शिक्षा को बढ़ावा दिया। महिलाओं ने स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेकर सार्वजनिक जीवन में सक्रिय उपस्थिति दर्ज कराई। एनी बेसेंट, सरोजिनी नायडू, कस्तूरबा गांधी, अरुणा आसफ़ अली जैसी महिलाएँ इस दौर की प्रतिनिधि बनीं। आज़ादी के बाद संविधान में महिलाओं को समान अधिकार दिए गए, परंतु व्यवहार में पितृसत्ता बनी रही। 1970 और 80 के दशकों में महिला संगठनों और आंदोलनों (जैसे-चिपको आंदोलन, सती विरोधी आंदोलन) के माध्यम से नारी विमर्श अधिक सशक्त हुआ। हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श की जड़े 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मज़बूत हुई जो समाज में स्त्रियों की स्थिति, उनकी अस्मिता, अधिकार, स्वतंत्रता और संघर्ष को केंद्र में रखकर साहित्यिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श का विकास धीरे-धीरे हुआ है और इसके विभिन्न चरणों में स्त्री की छवि, भूमिका और स्वरूप बदलते रहे हैं। हिन्दी साहित्य में महिला लेखिकाओं ने नारी विमर्श को एक जीवंत रूप दिया। उनके लेखन में नारी के निजी अनुभवों, संघर्षों, मनोवैज्ञानिक द्वंदों और सामाजिक असमानताओं का गहन चित्रण मिलता है। "महिला लेखन पुरुष की बंधी-बंधाई पूर्वाग्रह से संचित दृष्टि को त्याग कर नारी को व्यक्ति के रूप में देखने का पक्षधर है। नारी समस्याओं को नहीं अपितु स्वयं नारी को कैनवास पे उतारकर पूर्णतरू अंतरंग होकर उस पुरुष के समकक्ष लाने की यह कोशिश वस्तुतः सत्य है। नारी की वर्तमान स्थिति को लेकर आज की लेखिका के मन में असंतोष एवं आक्रोश है। सामाजिक वैषम्य से जन्मी पीड़ा को लेकर छटपटाहट है और मुक्ति की उत्कंठ उसके रोम रोम में परिव्याप्त है।"[2] महादेवी वर्मा, मन्नू भंडारी, कृष्ण सोबती, मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान जैसी लेखिकाओं ने अपने साहित्य में स्त्री जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत कर इस विमर्श को नया आयाम दिया। ये लेखिकाएँ नारी को केवल पात्र नहीं बल्कि वक्ता बनाकर प्रस्तुत करती है।

नारी विमर्श के विचार

नारी विमर्श समाज में स्त्रियों की समस्याओं और अनुभवों को केंद्र में रखकर समाज की परंपरागत संरचनाओं और मान्यताओं की समीक्षा, आलोचना और पुनर्व्याखा करता है। नारी विमर्श का यह विचार हैं कि, स्त्रियों के अनुभव भी उतने ही मूल्यवान हैं जितने पुरुषों के, चाहे वे घर के हो, कार्य क्षेत्र के हो या सामाजिक-राजनीतिक क्षेत्र के। यह विचार महिला लेखन, आत्मकथाओं और साहित्य में उनकी आवाज़ को शामिल करने की प्रेरणा देता है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था वह सामाजिक

ढांचा है जिसमें पुरुष सत्ता, नियंत्रण और निर्णय लेने की भूमिका में होता है, और स्त्री को केवल पालन, सेवा और त्याग की भूमिका में सीमित कर दिया जाता है। नारी विमर्श इस व्यवस्था को असमान और शोषणकारी मानता है और इसे बदलने की वकालत करता है। उदाहरणरू घर में महिला का मत महत्वहीन होना, स्त्री की यौन स्वतंत्रता पर नियंत्रण या विवाह में पुरुष का वर्चस्व। स्त्री को अपने शरीर और उसकी स्वतंत्रता पर अधिकार होना चाहिए। "वास्तव में मातृसत्तात्मक से पितृसत्तात्मक का अवतरण स्त्री की सबसे बड़ी हार थी। स्त्री को धरती, माता, देवी कहा गया किंतु वह पुरुष की संगी, मित्र कभी नहीं रही। पुरुषों ने अपनी सुविधा के मुताबिक स्त्री को विभिन्न रूपों में प्रस्तुत किया, लेकिन अपने समान नहीं बनने दिया।"[3]

नारी विमर्श के अनुसार स्त्री की सामाजिक और सांस्कृतिक भूमिका केवल पारंपरिक और रूढ़िबद्ध सीमाओं तक सीमित नहीं है। यह विमर्श स्त्री को केवल माँ, पत्नी, बहन या बेटी जैसी पारंपरिक भूमिकाओं तक बाँधने के बजाय उसे एक स्वतंत्र सोचने-समझनेवाली, रचनात्मक और सामाजिक रूप से सक्रिय इकाई के रूप में देखने पर बल देता है। "पिता, परिवार, पति, पुत्र, समाज, जाति और तथाकथित सम्मान, संस्कृति परंपरा के नाम पर स्त्री अन्याय, असमानता और अत्याचार सहती रही है।"[4] समाज में स्त्री की स्थिति को समझने के लिए हमें दो प्रमुख दृष्टिकोणों- पारंपरिक दृष्टिकोण और आधुनिक दृष्टिकोण-का विश्लेषण करना आवश्यक है। यह दोनों दृष्टिकोण समाज में स्त्री को किस तरह देखा गया है और आज वह कैसे अपने अस्तित्व की पुनर्परिभाषा कर रही है, इसका स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते हैं। भारतीय समाज सहित अनेक पारंपरिक समाजों में स्त्रियों की भूमिका गृहस्थ जीवन तक सीमित रही है। उन्हें 'अबला' या 'असहाय' के रूप में चित्रित किया गया। शिक्षा, संपत्ति, उत्तराधिकार और निर्णय लेने के अधिकारों से वंचित स्त्री सदियों तक पुरुष प्रधान समाज की सीमा में बंधी रही। पितृसत्ता ने उन्हें 'दूसरे दर्जे' का नागरिक बना दिया। धार्मिक और सांस्कृतिक ग्रंथों में स्त्री को त्याग, सहनशीलता, शील और पतिव्रता की मूर्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया। आत्मनिर्णय और आत्मा-अभिव्यक्ति के अवसर सीमित थे। "भारतीय समाज में फैली स्त्री असुरक्षा ने पहले प्राचीन नारी को शिक्षा से वंचित कर छोटी उम्र में ब्याह कर घरों में कैद कर दिया था। तब भी नारी जीवन कैद में था। आज तो उससे भी बदतर जीवन है उसका। क्योंकि नारी प्रगति पद पर होते हुए भी संसार, समाज के बंधनों की बेड़ियों में जकड़े हुए हैं। भारतीय परंपरागत दबे ढके समाज में शिक्षा व आधुनिकता के तमाम दावों के बावजूद सच सामने आता नहीं।"[5] स्त्री का सम्मान उसकी चुप्पी, समर्पण और सहनशीलता से जोड़ा गया। उदाहरणरू सीता, सावित्री और अनसूया जैसी स्त्रियाँ पारंपरिक आदर्श के रूप में स्थापित की गई। "नारी का स्थान रसोई तक" जैसी कहावतें इस सोच का हिस्सा है।

नारी विमर्श का महत्वपूर्ण पक्ष यह हैं कि, यह समाज द्वारा निर्धारित 'आदर्श स्त्री' की रूढ़ छवि को तोड़ता है। स्त्री को केवल त्याग और सहनशीलता की मूर्ति बनाना, उसकी स्वतंत्रता और व्यक्तित्व का दमन करना है। स्त्री को यह तय करने का अधिकार है कि वह किस प्रकार का जीवन जीना चाहती है- पारंपरिक या आधुनिक, घरेलू या व्यावसायिक। समाज को चाहिए कि, वह स्त्री के निर्णयों का सम्मान करें, न कि उसे दोष, लज्जा या डर के आधार पर नियंत्रित करें। ऐसे में आधुनिक दृष्टिकोण स्त्री को स्वतंत्र, समान और सक्षम मानता है। यह दृष्टिकोण स्त्री को एक व्यक्ति के रूप में देखता है, जो अपने निर्णय खुद ले सकती है, अपने जीवन को अपनी शर्तों पर जी सकती हैं और समाज में सक्रिय भूमिका निभा सकती है।

आधुनिक दृष्टिकोण के अनुसार स्त्री उन सभी परंपरागत अपेक्षाओं को चुनौती देती है जो उसे कमज़ोर बनाती है। इसमें उसकी सार्वजनिक भागीदारी को स्वीकारा गया है। अब वह केवल घरेलू नहीं, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग ले सकती है। स्त्री की पारंपरिक और आधुनिक दृष्टिकोण के बीच का अंतर एक सामाजिक परिवर्तन की कहानी है। पारंपरिक दृष्टिकोण जहाँ स्त्री को सीमित करता था वहीं आधुनिक दृष्टिकोण उसे अवसर, अधिकार और आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करता है। हालांकि आज भी समाज के कई हिस्सों में पारंपरिक सोच कायम है लेकिन नारी विमर्श और शिक्षा के माध्यम से धीरे-धीरे समानता और स्वतंत्रता की दिशा में ठोस प्रगति हो रही है। स्त्री की शिक्षा और आत्मनिर्भरता न केवल उसके व्यक्तिगत विकास के लिए, बल्कि परिवार, समाज और राष्ट्र की प्रगति के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। एक शिक्षित और आत्मनिर्भर स्त्री समाज को सशक्त बनाती है, रूढ़ियों को तोड़ती है और आनेवाली पीढ़ियों

को नई दिशा प्रदान करती है। शिक्षा स्त्री को उन पारंपरिक मान्यताओं और कुरीतियों के विरुद्ध सोचने की शक्ति देती है जो उसे पिछडेपन में बनाए रखती है, जैसे-दहेज प्रथा, बाल विवाह, पर्दा प्रथा आदि। स्वामी विवेकानंद कहते हैं- "सर्वप्रथम स्त्री जाति को सुशिक्षित बनाओ फिर वे स्वयं कहेंगी कि उन्हें किन सुधारों की आवश्यकता है३३शिक्षित हो जाने पर वे स्वयं अपने हानि-लाभ का विचार कर इस प्रकार की कुरीतियों को निकाल बाहर करेंगे।"[6] आत्मनिर्भर स्त्री अपनी जीविका स्वयं अर्जित कर सकती हैं, जिससे वह किसी पर निर्भर नहीं रहती। ऐसे में वह समाज, राजनीति, व्यवसाय और अन्य क्षेत्रों में पुरुषों के समान भागीदारी निभाने में सक्षम होती हैं। जब स्त्री शिक्षित और आत्मनिर्भर होती है, तो पूरा समाज विकसित होता है।

नारी विमर्श की चुनौतियाँ

नारी विमर्श का उद्देश्य स्त्री की आवाज़ को समाज और साहित्य में स्थान दिलाना है। साथ ही साथ उनके अनुभवों, संघर्षों और भावनाओं को अभिव्यक्ति देना है। परंतु यह यात्रा आसान नहीं रही है। नारी विमर्श को आज भी कई स्तरों पर चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जो इसके विकास और प्रभावशीलता को बाधित करते हैं। ये चुनौतियाँ केवल बाहरी सामाजिक विरोध नहीं है, बल्कि कई बार यह भीतर के अंतर्विरोधों और भिन्न वर्गीय स्थितियों से भी उपजती है। पितृसत्ता भारतीय समाज की सबसे मज़बूत और पुरानी संरचना है जो पुरुष को केंद्र में रखकर समाज की व्यवस्था तय करती हैं। नारी विमर्श को सबसे बड़ी चुनौती इसी व्यवस्था से मिलती है। इसमें स्त्री की स्वतंत्रता को अस्वीकार किया जाता है। निर्णय लेने का अधिकार पुरुषों के पास केंद्रित रहता है और स्त्री के कार्यक्षेत्र और इच्छाओं को नियंत्रित किया जाता है। लैंगिक असमानता केवल एक सामाजिक समस्या नहीं, बल्कि यह मानवाधिकारों का उल्लंघन है। स्त्री को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोज़गार और सामाजिक सम्मान में जो भेदभाव सहना पड़ता है, वह समानता और स्वतंत्रता के सिद्धांतों के विपरीत है। भारत जैसे विकासशील समाज में यह असमानता अनेक रूपों में स्त्रियों के जीवन को प्रभावित करती है। स्त्रियों के विरुद्ध होनेवाली हिंसा, चाहे वह घर के भीतर हो या समाज में, एक गंभीर और व्यापक समस्या है। यह हिंसा उनके मानवाधिकारों, आत्मसम्मान और स्वतंत्रता का हनन करती है। भारत जैसे परंपरागत समाज में स्त्रियाँ प्रायरू घरेलू और सामाजिक हिंसा का शिकार होती रही है। यह हिंसा केवल शारीरिक ही नहीं बल्कि मानसिक, भावनात्मक, यौनिक और आर्थिक भी हो सकती है।

नारी विमर्श की चुनौतियों में स्त्री पर हो रही कानूनी और सामाजिक बाधाएँ भी महत्व रखता है। स्त्रियाँ अपने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कानूनी और सामाजिक दोनों स्तरों पर अनेक प्रकार की बाधाओं का सामना करती है। यद्यपि भारतीय संविधान ने स्त्रियों को समानता, स्वतंत्रता और गरिमा से जीने का अधिकार दिया है, लेकिन वास्तविकता इससे काफ़ी अलग है। भारत में स्त्रियों के लिए कई कानून बनाए हैं, परंतु इनका कार्यान्वयन, जागरूकता और न्याय प्रक्रिया की जटिलता स्वयं बाधा बन जाती है। अधिकांश स्त्रियाँ अपने कानूनी अधिकारों से अनजान होती है। विशेषकर ग्रामीण और अशिक्षित महिलाओं को यह नहीं पता कि, वह अन्याय या हिंसा के खिलाफ कानूनी मदद कैसे लें। "भारतीय 'परंपरा' में इतना सब कुछ खोकर भी स्त्रियाँ सम्मान के पात्र नहीं रही है। उनके 'त्याग' का महिमामंडन तो सिर्फ दासता की भावना को सांस्कृतिक आयाम देने के लिए किया जाता रहा है। हकीकत में उपेक्षा, उत्पीड़न, शक और अपमान की पात्र रही है।"[7] स्त्रियों की सामाजिक स्थिति आज भी अनेक रूढ़ियों, परंपराओं और मान्यताओं और पितृसत्तात्मक सोच से प्रभावित है। हिंसा या शोषण झेलनेवाली स्त्रियाँ अक्सर चुप रह जाती हैं क्योंकि उन्हें लगता हैं कि, बोलने से "इज्जत" चली जाएगी। इस तरह सामाजिक प्रतिष्ठा खोने का डर हमेशा उन्हें चुप कराती है। शादी, माँ बनना और बलिदान को स्त्री की "मूल पहचान" माना जाता है। जो महिलाएँ आवाज़ उठाती हैं, उन्हें "चरित्रहीन", "विद्रोही" या "संस्कृति विरोधी" कहा जाता है। स्त्री के विकास और स्वतंत्रता की राह में कानूनी और सामाजिक दोनों प्रकार की बाधाएँ बड़ी चुनौती है। जहाँ कानून उन्हें अधिकार देते हैं, वहीं सामाजिक ढाँचा और मानसिकता उन्हें वास्तविक उपयोग से रोकते हैं।

नारी विमर्श में प्रगति

स्त्री जीवन की प्रगति मानव सभ्यता की एक महत्वपूर्ण यात्रा है। यह यात्रा संघर्ष, संकल्प और सशक्तिकरण से भरी हुई है। जहाँ एक समय स्त्री को केवल परिवार, गृहकार्य और मातृत्व तक सीमित माना जाता था, वहीं आज वह शिक्षा, विज्ञान, राजनीति, साहित्य, व्यवसाय, सेना और नेतृत्व जैसे सभी क्षेत्रों में अपनी प्रभावशाली उपस्थिति दर्ज करा रही है। स्त्री जीवन की प्रगति न केवल नारी की विजय है, बल्कि पूरे समाज की प्रगति का प्रतीक है। नारी विमर्श के प्रभाव से आधुनिक नारी ने अपनी नई पहचान बनाई है- ऐसी पहचान जो पुरानी रूढ़ियों से मुक्त है और ज्ञान, आत्मबल और स्वाभिमान पर आधारित है। नारी विमर्श ने स्त्री को आत्मनिर्भरता की पहचान से मिलाया। आधुनिक स्त्री अब केवल दूसरों पर निर्भर नहीं है, वह आर्थिक रूप से स्वतंत्र है। वह स्वयं निर्णय लेती है, अपना कैरियर चुनती है और जीवन के हर क्षेत्र में सक्रिय है। एक स्वतंत्र विचारधारा की पहचान बनाया है, जिसमें स्त्री अब चुप रहनेवाली नहीं बल्कि संवाद और संघर्ष के माध्यम से समाधान तलाशनेवाली है। "वह अपने अस्तित्व में बाधक नकारात्मक उन मूल्यों को नकारने का साहस भी रखती है जो जन्म से ही उस पर थोपे गए थे। अब उसे मात्र 'सीता' बनकर रहना गँवारा नहीं, जो पुरुष प्रधान व्यवस्था को मूक साध्वी के रूप में स्वीकार करती रही और न ही वह 'अग्निपरीक्षा' के लिए बाध्य है। वह तो 'द्रौपदी' की- सी मानसिकता से आबंध दिखाई देती है, जो अपने अस्तित्व एवं अस्मिता की रक्षा में विश्वास रखती है। वह स्त्री पर अन्याय करने वाले पुरुष की नपुंसक प्रवृत्ति को धिक्कारती है।"[(8)]

आधुनिक नारी अब सामाजिक आंदोलनों, राजनीति, प्रशासन और पर्यावरण संरक्षण जैसी गतिविधियों में भी अग्रणी भूमिका निभा रही है। वह अब केवल 'पालनकर्ता' नहीं बल्कि 'परिवर्तन की वाहक' बन चुकी है। वे दहेज, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न, लैंगिक भेदभाव जैसे मुद्दों पर खुलकर आवाज़ उठा रही है। वह न्याय और अधिकारों के प्रति सजग हो गयी है। नारी विमर्श ने नारी के समाज में ही नहीं बल्कि उनके भीतर भी क्रांति लाई है। पारंपरिक मूल्यों और आधुनिकता के बीच संतुलन बनाए रखते हुए वह अपनी भूमिका निभा रही है। नारी विमर्श ने आधुनिक नारी को एक नई दृष्टि, नयी सोच और नया आत्मविश्वास दिया है। अब नारी केवल 'दया की पात्र' नहीं बल्कि सशक्त नेतृत्व, संवेदनशीलता और परिवर्तन की पहचान बन चुकी है।

निष्कर्ष

नारी विमर्श एक सामाजिक, साहित्यिक और वैचारिक आंदोलन है, जिसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं को पारंपरिक, पितृसत्तात्मक और भेदभावपूर्ण ढांचे से मुक्त कराना है। यह विमर्श स्त्री के अस्तित्व, आत्मसम्मान, स्वतंत्रता और समानता की बात करता है। यह स्त्री को केवल एक भूमिका (पत्नी, माँ, बहु) तक सीमित रखने के विरोध में खड़ा होता है। इसका उद्देश्य है-स्त्री को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप में सशक्त और स्वतंत्र बनाना। इसमें लैंगिक भेदभाव, घरेलू हिंसा, शिक्षा की कमी, कार्यस्थल पर असमानता आदि मुद्दों पर प्रकाश डाला जाता है। नारी विमर्श ने स्त्रियों को सोचने, सवाल उठाने और बदलाव लाने की प्रेरणा दी है। ये विमर्श केवल महिलाओं की लड़ाई नहीं, बल्कि संपूर्ण मानवता के संतुलित विकास का आधार है। यह स्त्री को एक व्यक्ति, एक निर्णयकर्ता और एक परिवर्तन की वाहक के रूप में देखता है। जब समाज स्त्री की गरिमा और क्षमता को सम्मान देगा, तभी सच्चे अर्थों में समानता और समता आधारित समाज की स्थापना हो सकेगी। नारी विमर्श के कारण समाज में लैंगिक समानता की बढ़ती स्वीकार्यता को देखने को मिलता है। ये पुरुषों और महिलाओं के बीच समान अधिकारों और अवसरों की आवश्यकता को मज़बूती से स्थापित किया। महिला अधिकारों का सशक्तिकरण बढ़ गया, महिलाओं ने अपने अधिकारों के लिए आवाज़ उठानी शुरू की, जिससे बलात्कार, उत्पीड़न और अन्याय के खिलाफ़ सामाजिक चेतना बढ़ी। नारी विमर्श ने महिलाओं की शिक्षा पर भी ज़ोर दिया, जिसके कारण आर्थिक क्षेत्र में उनकी भागीदारी बढ़ी, जिससे वे आत्मनिर्भर बन गयी। स्त्री जीवन में सांस्कृतिक एवं सामाजिक बदलाव आया। परंपरागत रूढ़ियों

और कुरीतियों को चुनौती मिली जैसे बाल विवाह, दहेज प्रथा आदि। समाज का विकास तभी वास्तविक और स्थायी होता है जब उसमें पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं के भी सक्रिय भागीदारी हो। केवल पुरुषों के बलबूते पर कोई भी समाज पूर्ण और संतुलित विकास नहीं कर सकता। इसलिए स्त्री की भूमिका और सहभागिता को समझना और उसे प्रोत्साहित करना अत्यंत आवश्यक है। स्त्री के बिना समाज अधूरा है और उसका विकास सीमित। क्योंकि वह इस समाज की प्रगति, समृद्धि और स्थिरता की नींव भी है। नारी विमर्श के प्रभाव से एक ऐसा समाज विकसित हो रहा है, जहाँ लैंगिक समानता और मानवाधिकारों का सम्मान होता है। नारी विमर्श अब सिर्फ उच्च या शहरी वर्ग की महिलाओं की बात नहीं करता, बल्कि दलित, आदिवासी, ग्रामीण, मज़दूर वर्ग की स्त्रियों की स्थिति और भूमिका को भी सामने लाता है। यह विमर्श हर वर्ग की स्त्री के अनुभवों को सामाजिक परिवर्तन की नींव मानता है।

संदर्भ सूची

1. नारी विमर्श एवं क्षमा शर्मा का कथा साहित्य, डॉ. लता गुजराथी, विद्या प्रकाशन-2018, पृ.सं-23
2. समकालीन महिला लेखन एवं नारी, डॉ.साकोले दत्ता शिवराम (समकालीन महिला लेखन एवं नारी चेतना-सं. डॉ.गज़ाला वसीम अब्दुल बशीर, डॉ.वसंत गणपत माली), विकास प्रकाशन-2015, पृ.सं-94
3. इक्कीसवीं सदी का महिला सशक्तिकरण : मिथक एवं यथार्थ, डॉ.वीरेंद्र सिंह यादव, ओमेगा प्रकाशन-2009, पृ.सं-2
4. 21वीं सदी में स्त्री अस्मिता से अस्मिता तक..प्रवास जारी है.., डॉ.किरण सक्सेना, (21वीं सदी की स्त्री-अस्तित्व से अस्मिता तक-सं. डॉ.किरणबाला जाजू मुदंडा), इंटरनेशनल पब्लिकेशन-2014, पृ.सं-25
5. भारतीय नारी मुक्ति आंदोलन दशा और दिशा, रीना रमेश सुरडकर (समकालीन महिला लेखन एवं नारी चेतना-सं. डॉ. गज़ाला वसीम अब्दुल बशीर, डॉ.वसंत गणपत माली), विकास प्रकाशन-2015, पृ.सं-311
6. नारी चेतना के आयाम, अलका प्रकाश, पृ.सं-29
7. हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श के विविध सरोकार, वीरेंद्र सिंह यादव, आशा प्रकाशन-2017, पृ.सं-45
8. 21वीं सदी की स्त्री : अस्मिता एवं अस्मिता, डॉ.रेखा गाजरे, (21वीं सदी की स्त्री-अस्तित्व से अस्मिता तक-सं. डॉ. किरणबाला जाजू मुदंडा), इंटरनेशनल पब्लिकेशन-2014, पृ.सं-95

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

किसान जीवन पर केंद्रित प्रतिबंधित भोजपुरी लोकगीत एवं कविताओं का स्वतंत्रता संग्राम पर प्रभाव

कौसर साबिदा सुलताना
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ़
इमेल : kousorsabida123@gmail.com
फोन : 7578858129

शोध सार : आज़ादी की लड़ाई में भारतीय समाज के हर वर्ग ने बलिदान ने दिया और संघर्ष किया। लेखकों और कवियों ने भी अपनी कलम से इस लड़ाई में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। कवियों और लेखकों ने अपनी रचनाओं से क्रांतिकारियों और आम जनता में जोश भरा। उनकी जोशीली कविताओं ने क्रांतिकारियों के उत्साह को कभी कम नहीं होने दिया। पूर्ण स्वतंत्रता की मांग ने देशभक्ति से भरी कविताओं को जन्म दिया।

अंग्रेजों के लिए सबसे बड़ी चुनौती इन जोश भरी रचनाओं का देश भर में फैलने से रोकना था। इन कविताओं और लेखों को छापने के लिए दर्जनों प्रकाशन गृह खुल गए, जिससे अंग्रेज घबरा गए। इस चुनौती का सामना करने के लिए अंग्रेजों ने सेंसरशिप का सहारा लिया, यानी वे लेखों और कविताओं को छापने से पहले प्रतिबंध कर देते थे। आज़ादी की लहर की प्रबलता ने भारत के ग्रामीण जनता को प्रयाप्त मात्रा में प्रभावित किया था। राष्ट्रीय स्तर की घटनाओं से दूर-दराज के गाँवों पर कितना गहरा असर होता है, इसका स्पष्ट प्रमाण देशप्रेम की भाव से युक्त ग्रामीण लोकगीतों और कविताओं से परिलक्षित होती हैं।

ये लोकगीत दर्शाते हैं कि भले ही भाषाएँ और जगहें अलग हों, लेकिन विचारों और भावनाओं की एकता सम्पूर्ण भारत एक साथ खड़ा कर देती है। इन लोक कवियों को राष्ट्र की समस्याओं या स्वतंत्रता आंदोलन के बारे में कोई खास शिक्षा नहीं मिली थी। जिस समय ये गीत लिखे गए, तब गाँवों में संचार के साधन भी नहीं थे। फिर भी, कुछ लोगों से सुनकर या उनके संपर्क में आकर जागरूकता की यह लहर इन कवियों तक पहुँची। इनके गीतों ने आम जनता को जगाने में एक बड़ी भूमिका निभाई।

बीज शब्द : बलिदान, क्रांतिकारी, राष्ट्रीय आंदोलन, स्वतंत्रता, देशभक्ति, सेंसरशिप, देशप्रेम, प्रतिबंध, लोकगीत।

मुल आलेख : लोकसाहित्य (Folklore) उस साहियिक विधा को कहते हैं जो किसी समाज या संस्कृति में लोगों द्वारा मौखिक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता है। यह साहित्य लिखित नहीं होता, बल्कि कहानियों, गीतों, कहावतों, और पहेलियों के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक चलता रहता है। यह किसी एक व्यक्ति की रचना नहीं होती, बल्कि पूरे लोक-समुदाय की भावनाओं, परंपराओं, और अनुभवों का प्रतिनिधित्व करती है। इसमें उस समाज के रीति-रिवाज, विश्वास, मूल्य, और जीवनशैली की झलक मिलती है।

लोक साहित्य मूल रूप से मौखिक परम्परा हैं। विख्यात आलोचक देवेन्द्र सत्यार्थी ने लोक गीतों के संबंध में अपनी

पुस्तक “धीरे बहों गंगा” की भूमिका में लिखा है कि “लोकगीत किसी संस्कृति के मुंह बोलते चित्र है।”[1]

इन गीतों में लोकमानस के सुख-दुःख व्यक्त होते हैं। इस प्रकार लोकगीतों से जनसमूह के मानसिक भाव का बोध होता रहता हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि लोकगीत बहुत प्राचीन समय से प्रचलित हैं और इनमें समाज के प्रत्येक वर्ग ने अपना योगदान दिया है। लोकगीत एक प्रकार से जीवन के गीत है। इनमें मानव जीवन के सभी प्रमुख अवसरों को मुखरित करने बाली भावनाओं एवं विविधताओं का समावेश रहता है। समस्त समाज का सुख-दुःख इनमें बोलता है, जो व्यक्ति के निज भावों का एक रूप होता है, जो समस्त छन्दों से मुक्त होता है।

लोकगीत ऐसे गीत हैं जो लोगों के कंठ और मन से एक साथ निकलते हैं। इन्हें बार-बार और पीढ़ी दर पीढ़ी गायी जाने पर भी ये कभी समय के स्रोत के साथ पुराने नहीं होते। हर गाने वाला और सुनने वाला एक दूसरे एक खास तरह का जुड़ाव महसूस करता है। खुले आसमान के नीचे प्रकृति के बदलते रंग, युद्ध शांति से भरी जीवन की तस्वीरें, स्त्री के जीवन के रहस्य, और ज़िंदगी पर उनका सुख और दुख भरा जीवन दर्शन, कर्म संघर्ष आदि विषयों के बारे में गीतों में मुख्य रूप से बात की जाती है।

हिन्दीभाषी राज्यों के लोकसाहित्य का ज्यादातर लोकगीत, कविताएँ, गीत और ग़ज़लें प्रमुख लोक बोलियों में अर्थात ब्रज, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी में लिखी गई हैं। भोजपुरी लोकगीत का इतिहास बहुत पुराना और समृद्ध है। भोजपुरी लोकगीतों की उत्पत्ति प्राचीन काल में हुई थी, जब यह क्षेत्र मगध और मौर्य साम्राज्यों का हिस्सा था। उस समय के लोकगीतों में प्राकृतिक सौंदर्य, प्रेम, और जीवन की समस्याओं का वर्णन किया गया था। उसके बाद मध्यकाल में भोजपुरी लोकगीतों में भक्ति और सूफी प्रभाव देखा गया। धीरे-धीरे लोक गीतों का स्वभाव बदलता गया और आधुनिक काल में आते-आते भोजपुरी लोक गीत ने एक नया रूप ले लिया। आधुनिक काल में भोजपुरी लोकगीतों में सामाजिक और राजनैतिक मुद्दों का वर्णन किया गया है। उस समय के लोकगीतों में गरीबी, असमानता, और साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष का वर्णन किया गया है।

जब भारत में साम्राज्यवादी शक्ति का राज फैला, तो उनसे आज़ादी पाने के लिए देश में बड़े-बड़े जन-आंदोलन शुरू हुए। इन आंदोलनों का असर सिर्फ़ राजनीति पर नहीं, बल्कि साहित्य पर भी पड़ा। समाज और साहित्य दोनों ने मिलकर एक नई क्रांति की शुरुआत की। इस क्रांति ने समाज और राजनीति में बदलाव की एक आहट पैदा कर दी। यह बदलाव कितना गहरा था, इसे उस समय के लोकगीतों और कविताओं में महसूस किया जा सकता है। ये गीत और कविताएँ लोगों के बीच जोश भरती थीं और उन्हें अंग्रेजों के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए प्रेरित करती थीं। ये लोकगीत ही उन बड़े बदलावों का प्रमाण हैं।

“1857 का युद्ध एक जन- युद्ध था, उसमें साधारण जनता ने बढ़-चढ़कर भाग लिया था और बाद में वही सबसे भयावह दमन के दौर से गुजरी। उस जन-युद्ध में भारत के हिंदुओं और मुसलमानों, पुरुषों और स्त्रियों ने अंग्रेजी राज के विरुद्ध युद्ध किया था। उस में सभी जातियों, पेशों और हैसियत के लोग शामिल थे। यह बात उस युद्ध से संबंधित लोकगीतों, गीतों और साहित्य के विभिन्न रूपों के माध्यम से हमारे सामने आती है। इस जन युद्ध से यह भी साबित होता है कि हर वर्ग और हैसियत के लोगों को देशभक्त होने का अधिकार है। इतिहास तथ्यों की चर्चा करता है, लेकिन दारुण और दर्दनाक स्मृतियों की नहीं, जबकि पराजित और पराधीन मनुष्यों की स्मृति बहुत लंबी होती है। ऐसी स्मृतियों को सजीव, प्रभावशाली और दीर्घजीवी बनाने का काम साहित्य करता है, विशेष रूप से लोकसाहित्य; क्योंकि लोकसाहित्य की रचना लोक करता है और इस तरह वह अपनी स्मृतियों को दीर्घजीवी बनाता है। 1857 से संबंधित लोकगीतों और लोकभाषाओं में लिखे गीतों में अनेक प्रकार की स्मृतियाँ व्यक्त हुई हैं।”[2]

जन प्रचलित सहज भाषा में रचित होने के कारण ये गीत साधारण जनता के दिल दिमाग पर बहुत गहरा असर डालती थीं। इनकी ताक़त बहुत ज्यादा थी, क्योंकि लोग इन्हें आसानी से समझ लेते थे और इसके द्वारा प्रचारित विचार व संदेश अति कम समय में पूरे इलाके में आग की तरह फैल जाती थीं। यही वजह थी कि ब्रिटिश सरकार इन कविताओं और गीतों से डरती थी। इसलिए, उन्होंने ऐसी कविताओं और गीतों को सख्ती से प्रतिबंधित कर दिया और इन्हें लिखने या गाने वालों

पर जुल्म ढाए। यह एक तरह से अभिव्यक्ति की आज़ादी को दबाने की क्रूर कोशिश थी। इस विशाल परिदृश्य में भोजपुरी भाषी क्षेत्रों जैसे आरा, छपरा, सारण और कुछ-कुछ चंपारण में घटित होने वाले ब्रिटिश शासन के अत्याचार के प्रतिरोध को व्यक्त करने वाले लोक साहित्य की महत्त्वपूर्ण और व्यापक भूमिका है। एक और बात इससे पता चलती है कि इसमें से अधिकांश आंदोलन, प्रतिरोध, घटनाएँ, बलिदान, समर्पण, इतिहास में दर्ज नहीं किये गये।

इन गीतों और कविताओं की प्राप्ति उन इलाकों के बड़े बुजुर्गों को स्मृतियों से और उन्हीं से प्राप्त सामग्रियों द्वारा एकत्र किये जा चुके प्रकाशित अप्रकाशित कार्यों से, उसके बारे में व्यक्तिगत स्तर पर लिखा गया दस्तावेज और शोध कार्य से कर सकते हैं स इन लोकगीतों से तत्कालीन स्वाधीनता विद्रोह से संबंधित सक्रिय जनता के और ब्रिटिश सरकार की क्रियाकलापों का प्रामाणिक सूचना मिलती हैं ए प्रतिबंधित साहित्य में उपलब्ध लोकगीतों में लोरी, लावणी, गारी अर्थात गाली और बिरहा श्रेणी के लोक गीत मिलते हैं।

"अंग्रेज सरकार के अन्याय, अत्याचार के विविध रूप जनसाधारण के जीवन पर उनका प्रभाव सब कुछ सचित्र सविस्तार उन तक पहुँचता था। उस समय गाँव के लोगों तक न अखबार की पहुँच थी, न रेडियो उपलब्ध था, फिर भी स्वाधीनता का यह आंदोलन एक विराट जन आंदोलन कैसे बन गया; इस लोक साहित्य को देखकर समझ में आता है।"[3]

"राष्ट्रीय स्तर पर घटित होने वाली घटनाएं किस प्रकार हजारों मील दूरस्थ गांवों को प्रभावित करती हैं इसका ज्वलंत उदाहरण ये लोकगीत हैं। स्थानगत दूरी और इतनी अलग- अलग भाषाओं के होते हुए भी भाव ओर विचार की एकता इन्हें एक आधार पर ला खड़ा करती है। इन लोक कवियों को राष्ट्रीय समस्याओं,आंदोलनों और स्वाधीनता के संबंध में कोई शिक्षा नही दी गई। जिस समय ये गीत लिखे गए उस समय इन गांवों तक संचार के कोई साधन उपलब्ध नही थे किन्तु किसी व्यक्ति या किन्ही व्याक्तियों से सुनकर उनके सम्पर्क में आकर जागृति की इस लहर ने इन कवियों को प्रभावित किया, आंदोलित किया इनकी रचनाओ ने जनसाधारण को जागृत करने की सशक्त भूमिका निभायी। भाषाई क्षेत्रीयता राष्ट्रीय एकता की विरोधी नही है। भाषा की सम्प्रेषणीयता और जनसम्पर्क की अपार क्षमताए धारण करने वाली क्षेत्रीय भाषा की शक्ति का उपयोग हिंदी भाषा की समृद्धि का उपयोग राष्ट्रीय एकता के संदर्भों के लिए किया गया।"[4]

1857 से 1947 तक की अवधि को 'औपनिवेशिक आधुनिकता' के रूप में देखा जाता है। यह वह समय था जब भारत में ब्रिटिश शासन अपने चरम पर था, और इस दौरान भारत में आधुनिक विचारों, संस्थाओं और तकनीकों का आगमन हुआ। हालाँकि, यह आधुनिकता पश्चिमी औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा थोपी गई थी, इसलिए इसे 'औपनिवेशिक' कहा गया।

"सत्तावनी संग्राम वह नवजागरण था, जिसकी चिनगारी को लोकगीतों और गीतों के माध्यम से कस्बों-गावों तक पहुंचाया गय आमजनता की भावनाओं में जोश को बरकरार रखने के लिए ये लोकगीत गाये गए। अंग्रेजों की दमनपूर्ण नीति के कारण उस विपरीत समय में साहित्य-रचना करना कितना दुर्लभ था। ऐसे समय में आमजनता ने लोकगीतों को आधार बनाकर जन-जन तक अपनी आवाज पहुंचाई। ये लोकगीत ही वे दस्तावेज है जिसने नवजागरण का शंखनाद किया।"[5]

इसी समय, भारत में विशेष रूप से हिंदी- भाषी क्षेत्रों में, दो प्रमुख धाराएँ समानांतर चल रही थीं ए स्वाधीनता आंदोलन और किसान आंदोलन। जब देश और गाँव, दोनों एक साथ लड़ रहे थे। स्वाधीनता आंदोलन राष्ट्रीय स्तर पर चल रहा था, जिसका उद्देश्य ब्रिटिश राज से मुक्ति पाना था। इसमें विभिन्न वर्ग और विचारधाराएँ शामिल थीं।

बिहार में शुरू से ही अंग्रेजों के खिलाफ एक मजबूत माहौल था और यहां के हर वर्ग ने स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। इस भावना का असर यहां के लेखकों और कवियों पर भी देखने को मिलता है। उन्होंने अपनी कलम को ही शस्त्र बनाकर अंग्रेजों के खिलाफ साहित्य की रचना की। इस काम में हिंदी और उर्दू, भोजपुरी तीनों भाषाओं के लेखकों और कवियों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

किसान आंदोलन स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर चल रहा था, जिसमें किसान ब्रिटिश नीतियों, ज़मींदारी प्रथा और शोषण के खिलाफ़ लड़ रहे थे। ये आंदोलन अक्सर स्वाधीनता आंदोलन के समानांतर और कभी-कभी उसके साथ मिलकर भी चल रहा था।

इस काल में किसान आंदोलनों ने अपनी आवाज़ को कविता के माध्यम से व्यक्त किया। इसे 'किसान कविता' कहा गया। यह कविता पश्चिमी आधुनिकता के बजाय भारतीय समाज और संस्कृति से निकली थी, इसलिए इसे देशज आधुनिकता' का प्रतीक माना जाता है। इस कविता में किसानों के संघर्ष, उनके दुखों, उनकी आशाओं और 'मुक्ति की खोज' का वर्णन था।

1917 से 1947 तक का समय किसान आंदोलनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण था। इस दौरान कई बड़े आंदोलन हुए, जैसे–

अवध किसान आंदोलन (1920), बिजोलिया आंदोलन (1897-1941),चंपारण सत्याग्रह (1917) इत्यादि।

इन आंदोलनों के दौरान जो 'देशज साहित्यिक सांस्कृतिक सामग्री' (जैसे लोकगीत, कविताएँ, कहानियाँ, नारे) पैदा हुई, वह हमारे इतिहास का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह समझने में मदद करती है कि किसान अपने संघर्ष को किस तरह देखते थे और वे किस तरह से अपनी आवाज उठा रहे थे। कैसे औपनिवेशिक शासन के खिलाफ़ भारतीय समाज ने अपनी 'देशज' पहचान और प्रतिरोध को बनाए रखा और उसे साहित्यिक रूप में व्यक्त किया।

समन्वयवादी गतिविधियों को रोकने तथा फुट डालो और राज करो की प्रवृत्ति को समृद्ध की जाती है। लिखित या मौखिक रूप में व्यक्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को खत्म करने की सामान्य इच्छा 'प्रतिबंध' शब्द में निहित है। सद्भाव, शांतिपूर्ण भाषण, राष्ट्रीय भावना से प्रेरित गतिविधियों एवं पत्र-पत्रिकाओं आदि से संबंधित प्रकाशकीय संस्थाओं की स्वतंत्रता को बाधित करना प्रतिबंध से संबंधित वैधानिक कानूनों का मुख्य ध्येय रहा है। ब्रिटिश सरकार के इस राजनैतिक क्रियाओं को सभा, संगोष्ठी तथा प्रकाशीय गतिविधियों को गैर कानूनी घोषित कर दमनात्मक रूख अपनाती थी। जब कभी कोई रचनाकार या सामाजिक कार्यकर्ता शासक वर्ग के विरुद्ध 'बोल की लब आज़ाद है तेरे' जैसे कार्यो को गति लिखित रूप में देने की प्रयास करते थे तो उन रचनाओं को जब्त कर लिया जाता है। इस तरह की कार्यवाही शासक वर्ग उन लोगों के विरुद्ध करते थे जो उनके द्वारा किये गये अन्याय और अत्याचार का खुलासा करता थे।

शोध के अनुसार, बिहार में जब्त की गई सबसे पहली ग़ज़ल 1921 में मिली थी, जो उस समय की सबसे लोकप्रिय कविताओं में से एक थी। इसका पहला शेर है–

"सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना हैजोर कितना बाजु-ए क़ातिल में है।।
रहवरे-राहे-मुहब्बत रह न जाना राह में,
लज्जते-सहरा-नवर्दी दूरि-ए-मंज़िल में है।
वक़्त आने दे बता देंगे तुझे ऐ आस्माँ!
हम अभी से क्या बतायें क्या हमारे दिल में है।"[6]

इन काव्य पंक्तियों का भावार्थ है कि हमारे दिलो को अब ये देखना है कि आज़ादी के लिए सर कटाने हेतु इच्छा कितनी प्रबल हैं और यह भी आजमाना है कि मारनेवाले की हाथों में ताकत कितनी है।

यह ग़ज़ल सिर्फ एक रचना नहीं थी, बल्कि इसने लोगों के बीच देशभक्ति और बलिदान की भावना को और भी मजबूत किया। इस कविता की रचयिता 'सैयद शाह मुहम्मद अज़ीमाबादी' या 'राम प्रसाद बिस्मल' हैं यह एक विवादास्पद विषय हैं।

जब भारत पर अंग्रेज़ों का राज था, उस समय किसानों के आंदोलन और उनकी समस्याओं से जुड़ी कविताओं को सरकार ने हमेशा दबाने की कोशिश की। ये कविताएँ केवल शब्द नहीं थीं, बल्कि किसानों के दिल की आवाज थीं। इनमें किसानों के दुख-दर्द, उन पर हो रहे जुल्मों और शोषण का साफ-साफ ज़िक्र होता था। ये कविताएँ खुलकर अंग्रेज़ी सरकार और ज़मींदारों का विरोध करती थीं, और यहाँ तक कि ज़मींदारी प्रथा को ख़त्म करने की भी माँग करती थीं। कुछ कविताओं में तो एक ऐसे नए राज की कल्पना की गई थी, जहां सिर्फ किसान और मज़दूरों का शासन हो।

भोजपुरी के प्रसिद्ध कवि 'मनोरंजन प्रसाद सिन्हा' अत्यंत लोकप्रिय रचना 'फिरंगिया' का उल्लेख किए बिना, भोजपुरी लोकगीतों का सदर्भ अधूरा रहेगा—

"सुन्दर सुघर भूमि भारत के रहे रामा
आज उहे भइले मसान रे फिरंगिया
जहवां थोडे ही दिन पहिले ही होत रहे
लाखो मन गल्ला और धान रे फिरंगिया
उहवें पर आज रामा मथवा पर हाथ धके
बिलखी के रोयेला किसान रे फिरंगिया
आजू पंजबवा के करि के सुरतिया से
फाटेला करेजवा हमार रे फिरंगिया
भारत के छाती पर भारत के बच्चन के
बहता रकतवा के धार रे फिरंगिया।"[7]

उल्लेखनीय है कि ब्रिटिश सरकार ने यह गीत जब्त कर लिया था। यह गीत कांग्रेस की जनसभाओं में गाया जाता था। इसे सुनकर हजारों व्यक्ति राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल हुए।

किसान गीत लिखने वाले ज्यादातर कवि और रचनाकार सीधे तौर पर किसान आंदोलन से जुड़े थे। इसके अलावा, कुछ ऐसे रचनाकार भी थे जो राष्ट्रीय आंदोलन और किसान आंदोलन की संगठित गतिविधियों से प्रेरित होकर इन गीतों को लिखते थे।

इन गीतों का इस्तेमाल विभिन्न मौकों पर किया जाता था, जैसे- किसान सम्मेलन, सभा, गोष्ठी, धरना, प्रदर्शन, जुलूस, मार्च, और सत्याग्रह के दौरान , खेती-बारी, पर्व-त्योहार, शादी-विवाह, और कटनी-दवनी (फसल की कटाई और सफाई) के समय , किसान दिवस और मजदूर दिवस जैसे अवसरों पर भी इन्हें गाया जाता था। किसान प्रशिक्षण शिविरों और अधिवेशनों में भी इनका गायन होता था। ये गीत सिर्फ गाए नहीं जाते थे, बल्कि कुछ गीत पत्र-पत्रिकाओं, छोटी पुस्तिकाओं में भी छपते थे। ये गीत लोक भाषाओं और खड़ी बोली दोंनो में लिखे जाते थे, ताकि वे ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुँच सकें। नाटकों के प्रदर्शन के दौरान भी किसान गीतों का प्रयोग किया जाता था।

सन 1930, जब अंग्रेजों के खिलाफ आज़ादी की लड़ाई अपने चरम पर थी। इसी दौरान बलभद्र प्रसाद गुप्त 'विशारद रसिक' ने एक छोटी-सी कविता पुस्तिका प्रकाशित की, जिसका नाम था 'खून के छींटे'। यह किताब नाम से ही अपनी कहानी कह रही थी। इसमें बादली के किसानों के दर्द और उनके संघर्षों को तीन कविताओं के माध्यम से दर्शाया गया था। ये कविताएँ सिर्फ़ शब्द नहीं थीं, बल्कि उन किसानों की आवाज थीं, जो अपनी ज़मीन और इज्ज़त बचाने के लिए लड़ रहे थे। अंग्रेजों को ये आवाज़ रास नहीं आई और उन्होंने बिना देर किए इस किताब को जब्त कर लिया, ताकि इसकी आग लोगों तक न पहुँच पाए। यह सिर्फ एक किताब की ज़ब्ती नहीं थी, बल्कि विचारों की आज़ादी पर एक और वार था।

अगर हम किसान आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े कवियों की बात करें, तो 'रामकुमार वैद्य' का नाम दिल से याद आता है। वे जौनपुर जिले के इजरी गाँव के रहने वाले थे, लेकिन उनकी कविताएँ सिर्फ़ उनके गाँव की नहीं, बल्कि पूरे देश के किसानों की थीं। वैद्य जी ने अपनी कलम को तलवार बना लिया था और गीतों के माध्यम से लोगों में क्रांति की भावना जगाते रहे।

'रामकुमार वैद्य' के 'लाचारी' नामक कविता, जिसमें किसान जीवन का दिल हिला देने वाला चित्रण है, जब्त कर ली गई—

"सबसे किसान हो अभागा हमरे देसवा में
दिन भर बेगारी रहे लाखन ठे गारी सहै

तबहूं न लागे इन्हें खाए के ठेकान हो
अभागा हमरे देसवा में।"[8]

उन्होंने किसान जीवन की सच्चाई को इतनी गहराई से समझा और लिखा कि उनकी कविताएँ सुनते ही लोगों की आखें नम हो जाती थीं। उनकी एक ऐसी ही मार्मिक कविता थी, 'लाचारी', जिसमे उन्होंने किसान की गरीबी, बेबसी और दुख को हूबहू उतार दिया था। इस कविता में इतना दर्द था कि अंग्रेज हुकूमत भी डर गई। उन्हें लगा कि यह कविता किसानों को एकजुट कर सकती है और एक बड़ा विद्रोह खड़ा कर सकती है। इसलिए, उन्होंने तुरंत इस कविता को भी जब्त कर लिया। लेकिन वे शायद यह भूल गए थे कि आप कागज़ तो जला सकते हैं, पर दिल में उतरी हुई आवाज़ को नहीं मिटा सकते।'रामकुमार वैद्य' जैसे जनकवियों ने अपने गीतों के ज़रिए सिर्फ़ कविताएँ नहीं लिखीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए आज़ादी की लौ भी जलाए रखी।

1917 में चंपारण का किसान सत्याग्रह शुरू हुआ। ग्राम पकड़ी, चंपारण के कवि "शिवशरण पाठक' ने नीलहों के अत्याचार पर मार्मिक भोजपुरी गीत लिखा–

"राम नाम भइल भोर गाँव लिलहा के भाइले
चंवर दहै सब धान गोएड़े लील बोअइले
भइ भैल आमील के राज प्रजा सब भइले दुखी
मिल-जुल लूटे गाँव गुमस्ता हो पटवारी सुखी"[9]

बिहार किसान आंदोलन के दौरान किसान नेता 'यदुनंदन शर्मा' के संपादन में गया जिला किसान सभा के द्वारा 'चिनगारी' पुस्तिका (1938) प्रकाशित हुई। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान आधा दर्जन किसान कविताओं, गीतों और गजलों वाली चिनगारी को जब्त कर लिया गया। प्रतिबंधित किसान कविताओं की बानगी से किसान आंदोलन के स्वरूप की पहचान होती है–

"जाग उठो, जगाता जमाना तुझे
ओ किसानो है करतब दिखाना तुझे
ये जमींदार हरदम सताते हैं जो
जालिमाना हुकूमत चलाते हैंजो
उनको करनी का फल है चखाना तुझे।"[10]

रामकुमार वैद्य सहित उस दौर के कवियों के भोजपुरी भाषा में लिखित कविताएं बड़ी संख्या में प्रतिबंधित हुई। उदाहरण स्वरुप- 'राष्ट्रीय गीत, बेनीमाधव गुप्त (1930), स्वराज्य का डंका, रामसिंह वर्मा (1930), वीर कुँअर सिंह, मनोरंजन प्रसाद, एम.ए. (1930)

'पंडित घासीराम शर्मा' की प्रतिबंधित कविता भारतीय नवाबों और जमींदारों के असली चरित्र को उजागर करती है–

"इन कागजी खिताबों से उड़ता हूं फलक पर
अधिकार कहीं मिल गया तो जारे रूस हूँ
भारत की गवर्नमेण्ट का मैं चापलूस हूँ
दरिया-ए-गुलामी का जबरदस्त सूसं हूँ।"[11]

18वीं सदी से पहले भारत की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी और हमारा व्यापार विदेशों तक फैला हुआ था। लेकिन 18वीं सदी के बाद अंग्रेजों ने भारत को आर्थिक रूप से कमजोर करना शुरू कर दिया। उन्होंने किसानों, मजदूरों और आम लोगों पर बहुत अत्याचार किए। किसानों को बंजर ज़मीन पर भी जबरदस्ती टैक्स देना पड़ता था। अंग्रेजों ने पहले भारत की राजनीति पर कब्जा किया और फिर देश की पूरी आर्थिक व्यवस्था को तहस-नहस कर दिया।

इसका नतीजा यह हुआ कि भारत की जनता आजादी के कई सालों बाद तक इस नुकसान से उबर नहीं पाई। लोगों

की आर्थिक हालत बहुत खराब हो गई थी और वे अकाल और भुखमरी का शिकार हो रहे थे। किसानों की आर्थिक स्थिति और अकाल के कारण उनकी दशा और बदहाल होती गई जिसे एक भोजपुरी लोकगीत द्वारा देखा जा सकता है—

"हो गइली कंगाल हो विदेसी तोरे रजवा में।
सोने की थारी जहाँ जेवना जेंवत रहनी,
कठवा के डोकिया के भइलीं मुहाल।
भारत के लोग आजु दाना बिनु तरसे भड्या,
लन्दन के कुतवा उड़ावे मजा माल।"[12]

निष्कर्ष : भगवानदास माहौर कहते है कि 'अट्ठारह सौ सत्तावन के स्वाधीनता संघर्ष के लिए जनता को तैयार करने में लोकगीतों ने बहुत बड़ा काम किया।' इन आंदोलनों के दौरान जो भी गीत, कविताएँ और कहानियाँ लिखी गईं, उन्हें आज हम 'देशज साहित्यिक सांस्कृतिक सामग्री' के रूप में देखते हैं। यह सामग्री इतिहास की धूल में छिपी हुई थी, जिसे अब खोजकर इकट्ठा किया गया है। हमें यह समझने में मदद करती हैं कि उस दौर में आम लोग कैसा महसूस करते थे और कैसे वे अपने हक़ के लिए लड़ रहे थे। यह सिर्फ इतिहास नहीं है, बल्कि हमारे पूर्वजों की हिम्मत और संघर्ष की वीरता की जीती जागती मिसाल हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. धरती गाती है, एक लोकगीत अध्ययन, देवेन्द्र सत्यार्थी, 1948, प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, भूमिका)
2. भोजपुरी लोकगीत, संकलन और संपादन मैनेजर पाण्डेय, लोकगीतों और गीतों में 1857, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2012, नई दिल्ली, भूमिका)
3. लमही पत्रिका, सम्पादक : विजय राय, अप्रैल से जून-2024, अंक 4, पृष्ट स. 97
4. भारतीय लोक साहित्य परंपरा और परिदृश्य विद्या सिन्हा, प्रकाशन प्रभाग. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, 2011, पृष्ट. सं. 93
5. अपनी माटी पत्रिका, संपादकः गजेंद्र पाठक, चेतन प्रकाशन, अंक 44, 2022, पृष्ट स.-145
6. क्रांति गीतांजलि, पंडित रामप्रसाद बिस्मिल, संकलनः मदनलाल वर्मा 'क्रांत', विशाल प्रिंटर्स, दिल्ली, 2009, पृष्ट स. 15
7. भारतीय लोक साहित्य परंपरा और परिदृश्य विद्या सिन्हा, प्रकाशन प्रभाग. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, 2011, पृष्ट. स.-84
8. किसान आन्दोलन की साहित्यिक जमीन, रामाज्ञा शशिधर, अंतिका प्रकाशन, 2020, पृष्ट स.-95
9. वही, पृष्ट स.-95
10. वही, पृष्ट स.-95
11. वही, पृष्ट स.-95
12. भोजपुरी लोकगीत, संकलन और संपादन मैनेजर पाण्डेय, लोकगीतों और गीतों में 1857, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2012, नई दिल्ली, पृष्ट स.- 38

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

डॉ. आरती लोकेश की कहानियों में सामाजिक चेतना

डॉ. यशवीर दहिया
शोध निर्देशक :- श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़ (राज.)
श्रीमती प्रेमलता व्यास
शोधार्थी पी.एच.डी. :- श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़ (राज.)

प्रस्तावना

वर्तमान समय की नवलेखिकाओं में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाने वाली डॉ. आरती 'लोकेश' अपने विशिष्ट साहित्य सृजन के लिए जानी जाती हैं। इन्होंने अपने लेखन द्वारा समाज को, नयी दिशा प्रदान करने का कार्य निरन्तर जारी रखा है। इनकी कहानियों में सामाजिक चुनौतियां व उनकी पीड़ा उभरकर वाली सामने आई है। आम जीवन में आने वाली कठिनाईयों का एक आम व्यक्ति किस प्रकार सामना करता है। उस व्यक्ति की व्याकुलता उसकी स्थिति व परिस्थिति में सामन्जस्य न बिठा पाने की अकुलाहट उभर कर सामने आई है।

लेखिका ने अपनी कहानियों में विभिन्न सामाजिक, पारवारिक, परिवर्तनों को एक सरल ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। जो व्यक्ति को एक नवीन सोच प्रदान करता है तथा उसे बदलाव के लिए प्रेरित भी करता है। लेखिका द्वारा चुने गए विषय तथा उनको जीवित करने वाले पात्र किसी न किसी रूप में अपनी कुंठा, पीड़ा, मानसिक त्रासदी से त्रस्त नजर आते हैं। ये कहानियां जीवन की वास्तविकताओं व नित्य भोगे जाने वाली आम पीड़ा को पाठक के सामने खोल कर रख देती है। कहानियों के माध्यम से लेखिका ने आत्मनिर्भरता व आत्मसम्मान व नैतिकता को जीवन में संतुलित करते हुए समझ को जीवित रखने का सन्देश प्रदान किया है। इनकी कहानियां सामाजिक मुद्दों, परम्पराओं व आधुनिकता के टकराव, प्रवासी जीवन की पीड़ा तथा समानता व विकास के अवसर की ओर अपना ध्यान खींच ले जाती है।

डॉ. आरती 'लोकेश' द्वारा रचित कहानियाँ पिछले दशक से जीवन के अनुभवों को पाठको के सामने रखकर वास्तविक स्थितियों का ढाँचा खींचकर रख दिया। जीवन से जुड़े संघर्ष मनुष्य को संवेदनशील दृष्टिकोण प्रदान करते है। इनकी कहानियां जहां जीवन की वास्तविक सच्चाई को उजागर करके मनुष्य को उसके प्रति सचेत बनाने का प्रयास करती है। पाठक उनकी कहानियां पढ़कर अपने जीवन के खट्टे-मीठे अनुभवों को गहराई से जान सकता है।

डॉ. आरती की 'साँच की आँच' एक नारी के चरित्र पर उठे सवालों के सटीक जवाब है। जो पाठकों को निराधार आरोपों व उलझनों व इससे घटित होने वाली समस्याओं के प्रति जागृत करने की प्रयास करेगी।

डोर के छोर एक पारिवारिक आम समस्या भाई से भाई का अलगाव दिखाती है। कहानी पढ़कर पाठक को अहसास होगा कि छोटी-छोटी गलतफहमियों एक संयुक्त परिवार को बिखेर कर रख देते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि ये कहानियां भारतीय संस्कृति जैसे परिवार, समाज, विवाह, मित्रता, सहानुभूति आदि के प्रतिमानों को सहेज कर रखने के लिए किए गए प्रयास है जो भारतीय सामाजिक पाठक के लिए समस्याओं को समझने तथा उनके निवारण के लिए नवीन रास्तों को चुनने में सक्षम बन सकेगा।

मुख्य शब्द - आम व्यक्ति, सामाजिक व्यक्तिगत, समस्या, परिवर्तन समाज, नानी, चेतना।

परिचय :

सामाजिक चेतना समाज के लिए समाज में रहने वालों की समझ को दर्शाती है। यह व्यक्ति को अपने आस-पास होने वाले भेदभाव व अन्याय को रोकने के लिए सजग बनाती है। सामाजिक दायित्वों को निभाने तथा उनमें अपनी भागीदारी के लिए प्रेरित करने का अहसास सामाजिक चेतना है।

यदि ऊपरी तौर पर देखा जाए तो वर्तमान समय में समाज में अनेक समस्याओं से ग्रसित पाएंगे परंतु ये समस्याएं प्राचीन रूप को छोड़कर नवीन वेश धारण करके सामने आई है। अनेक समुदाय इस पर कार्य भी कर रहे हैं। सरकार व सामाजिक संस्थाओं द्वारा भी प्रयास जारी है और सभी इस जिम्मेदारी को एक कर्तव्य के स्वरूप में निभाने का प्रयास भी कर रहे हैं। समाज व साहित्य का संबंध गहरा रहा है। समाज में बदलाव लाने का कर्तव्य एक साहित्यकार ही कर सकता है। वह अपनी रचता के माध्यम से उसमें नवीन संभावनाओं को भर कर नवीन मार्गो को खोल देता है और समाज में फैले अंधकार को दूर करने का भरसक प्रयास करता है।

साहित्य और भाव, साहित्य और लगाव आपस में जुड़े हुए पहलू है। एक व्यक्ति संवेदनशील तो होता ही है। परन्तु साहित्य उसकी संवेदनशीलता को हवा देती है और कवि की भावुकता एक आम व्यक्ति की भाावना को जागृत करने में सफल भी हो जाती है और यही से परिवर्तन, प्रयास व बदलाव का युग आरंभ होता है।

समाज मनुष्य के निवास का स्थान है जहां वह अपने व अपने परिवार के साथ सामाजिक नियमों में रहते हुए जीवन यापन करता है। ये सामाजिक प्रतिमान उसके लिए आवश्यक है इसके बिना समाज उसकी महता को स्वीकार भी नही करता है। क्योंकि समाज अपने नियमों के विरुद्ध चलने वालों को सामाजिक बहिष्कार का प्रतिभागी बनाता है। किसी भी साहित्यिक विद्या के लेखन में ये प्रतिमान आये बिना नही रह सकते है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने स्थान पर लिखा है कि ''मानव के भीतर जो सृजनशील चितत्व काम करता रहता है। वह तक इंदियगाह्य रूप की रचना में समर्थ नही होता जब तक बाह्य जड़ तत्वों की सहायता नही लेता।''

कहानी चाहे किसी भी युग मे लिखी जाए उसमें सामाजिक मूल्य आये बिना नही रह पाते है। क्योंकि एक कहानी कविता उसी समाज के द्वारा उसी समाज के लिए लिखी जाती है। जो उसके आस-पास के वातावरण को अपने भीतर महसूस करके शब्दों के रूप में पाठक के सामने किसी न किसी रूप में प्रस्तुत होती है।

नारी जीवन और सामाजिक चेतना :

आरती 'लोकेश' की कहानियां में नारी पात्रो की संख्या अधिक रही है वे अपनी कहानियों में महिला की स्थिति को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करती है। 'साँच की आँच' कहानी में उनकी ग्यारह कहानियां है। उनकी प्रथम कहानी प्रशस्ति एक महिला की स्थिति को बेबाक ढंग से प्रस्तुत करती है। महिला की सफलता उसके चरित्र की विफलता की कसौटी मान ली जाती है।

शकुंतला को बेलगाम घोड़ी कहकर पुकारा जाता है। एक सफल अध्यापिका बन कर भी वह निस्सहाय सी प्रतीत होती है और पति द्वारा तलाक की धमकी के पत्र से वह त्यागपत्र के लिए तैयार होती है। अवलम्ब कहानी एक विधवा के जीवन पर आधारित है। जहाँ ससुराल वाले मुग्धा के भविष्य को संवारने के लिए सुझाव देते है वही सहने पुनर्विवाह के लिए जोर देकर उसका विवाह करवा देती है। परन्तु दुसरी शादी उसकी स्थिति को और दयनीय बना देती है।

साँच की आँच कहानी एक माँ और गोद ली गई बेटी की पीडा को ब्यान करती है।

छठी इन्द्री में विद्या की शादी के लिए अपनाई गई सावधानी व पत्नी की तरक्की में पति का सहयोग मिला या नही और उसका क्रेडिट किसे दे यह उलझन प्रस्तुत करती है।

नयी भोर कहानी की पात्र रजनी के बदले व्यवहार को दिखाया गया है तथा व्यवहार परिवर्तन किस प्रकार किया जा सकता है। यह भी वर्णित किया गया है।

चीर-फाड़ वाली डॉक्टरनी - यह कहानी कन्यास भ्रूण हत्या लडकियों को मनमर्जी की शिक्षा प्राप्त न करने देने की समस्या को उजागर किया गया है।

इसी प्रकार उफनता लावा एक भाई की बहन के प्रति जिमेदारी को जताती है। गुड की मेली कहानी एक माँ की पीडा व्यक्त करती है जिसके पुत्रों ने पिता की मृत्यु के बाद माँ को अकेला छोड़ दिया था।

घर से चलना मुझे एक बीमार स्त्री की पारिवारिक चिन्ता व जीवन भर काम करने की आदत उसे बीमार होने व अस्पताल में भर्ती होने पर भी वह अपने परिवार घर कार्यो के लिए चिन्तित दिखाई देती है। उसे अपनी शारीरिक शिथिलता का अहसास भी नही होती केवल अपने घर की चिन्ता तथा अधूरे कामों की सूची उसे याद रहती है। लोकेश की कहानियां संवेदनाओं, चारित्रिक, संघर्ष, सम्बधों के उतार चढ़ाव की सहज प्रस्तुति है।

दूर्वादल एक लघु कथा संग्रह है, जिसमें 35 लघु कथाएँ हैं। ये कहानियां समाज से जुडी समस्याओं को पाठक के सामने खोल रखती है।

'छतरी' कहानी बारिश के समय में आने वाले अनुभवो पर आधारित है। दस रूपये का सिक्का एक बालक को लेकर उसके आनंद को व्यक्त करता है।

पारिवारिक सम्बन्ध और सामाजिक चेतना :

आरती लोकेश की कहानियां परिवार न उनके मुद्दों को लेकर एक स्पष्ट वातावरण पाठक के सामने प्रस्तुत करती है। उसमें पति-पत्नी, माँ-बेटी, पिता-पुत्र, मां-पुत्र, सास-बहू इन सभी रिश्तों की आपसी समझ को प्रस्तुत करती है। कभी ये सहज व सरल रूप में दिखाई पड़ते है तो कभी इन रिश्तों की गरमाहट पढ़ने को मिलती है।

मानवीय संवेदना, कर्तव्य और अन्तर्द्धन्द्र की कहानियों में 'कुहासे के तुहिन' कहानी संग्रह मे रोजमर्रा की घटनाओं को किरदारों को सम्पूर्णता देते हुए उन कहानियाँ प्रस्तुत की है।

साँच की आँच में शंकुलता की पारिवारिक कलह उसकी नौकरी को भी खा बैठती है। शंकुतला के कार्य करने के कारण उसे 'बेलगाम घोडी' जैसे शब्दों से पुकारा जाता है। जहाँ एक ओर पति स्वयं नौकरी के लिए दुबई भेजता है लेकिन स्वयं ही आरोपों के जरिये उसे घायल कर देता है और नौकरी छोड़ने पर मजबूर करता है।

डोर के छोर कहानी परिवार व सम्पति के बंटवारे तथा भाई से भाई का मनमुटाब परन्तु आन्तरिक प्रेम को प्रकट करती है।

आधी माँ, अधूरा कर्ज परिवार और उनके आपसी समझ को व्यक्त करती शशि छोटी माँ का प्रेम। रुद्रा व भवानी का जीजी से आस लगाना। रूद्रा के बेटे की शादी उसकी दलीलें इन सब के चलते संपूर्ण परिवार का विवरण देती कहानी अन्त में शशि व छोटी मां का प्रेम व ममता का कर्ज पूरा करने की चाह कहानी को पूरा करती है।

आरती लोकेश की कहानियों में पारिवारिक संबंधों के अनेक चित्रण मिलते हैं। जिसमें कटुता व प्रेमभाव दोनों मिलते हैं।

प्रशस्ति पत्र कहानी मां और बेटी के मधुर संबंधों को दिखाती है। शकुंतला और मधुलिका मां-बेटी कम दो सखियां अधिक प्रतीत होती है। जो अपनी बेटी को जीवन की सुशिक्षा प्रदान की है। लेकिन मधुलिका के पति का व्यवहार पत्नी की तरक्की में बाधक सिद्ध होता है। यह कहानी समाज की बुराई को उजागर करती है।

मानववादी दृष्टिकोण और सामाजिक चेतना :

आरती लोकेश की कहानी मानव और उसके मूल्य को दिखाती है। एक मनुष्य, मनुष्य तब तक रहता है जब उसका

अस्तित्व सुरक्षित रहे। स्वार्थ की भावना से ऊपर दूसरों की भलाई के लिए कार्य करना ही मानवतावाद है। प्रेम, करूणा और भाईचारा को कहानी के माध्यम से दर्शाया है।

आकार कहानी - मानवता व भाईचारे की कहानी है। अल्पना व आदित्य का मंन्दिर व मस्जिद का आपसी तालमेल देखकर आश्चर्य चकित होना हिन्दू-मुस्लिम एकता व प्रेम को यह कहानी सुन्दर रूप में प्रस्तुत करती है।

डोर के छोर कहानी में आपसी मनमुटाव व पारिवारिक कलह के बावजूद भाई से भाई का प्रेम व मानवीय व्यवहार लेखिका की समझा को व्यक्त करता है।

आर्थिक दृष्टिकोण एवं सामाजिक चेतना :-

जीवन की समस्त बागडोर अर्थ पर ही टिकी होती है। अर्थ बिना जीवन व्यर्थ ही समझा जाता है। आरती लोकेश की कहानियाँ मानव व उससे जुड़ी परिस्थितियों को प्रत्येक ढंग से उजागर करती है। संपूर्ण सामाजिक ढांचा आर्थिक व्यवस्था के आस-पास मंडराता है। अर्थ का महत्व जीवन में सदैव ही लगा रहता है। पारिवारिक जीवन की बुनियादी ढांचा तो बिना अर्थ संभव ही नहीं है। लोकेश की कहानी परिवार, समाज व आर्थिक परिस्थिति को लेकर कथानक प्रस्तुत करती है। समय के बदलाव के साथ कथानंक में बदलाव आए हैं। अब पुरुष अर्थ कमाने वाला अकेला नहीं रहा पत्नी भी साथ धन अर्जन में सहयोग करती है परन्तु यह बदलाव कि पति-पत्नी दोनों घर की गाड़ी चलाते हैं परंतु फिर भी एक महिला पुरुष के तानों का शिकार बनती है। आजाद, स्वच्छंद होकर भी वह पुरुष के आरोपों को सहन करती है। प्रशस्ति-पत्र कहानी में शुद्धोधन अधिक धन कमाने के लिए अपनी पत्नी को प्रेरित करता है। यह सब अपनी अत्याधिक सुख प्राप्ति करने की लालसा थी लेकिन मधुलिका सभी कार्य ठंडे दिमाग से करना चाहती है।

डोर के छोर : कहानी भी ऐसी ही स्वार्थपूर्ण मानसिकता को दिखाती है। फिर क्या बात है? उस व्यक्ति के चाची का ध्यान रखने से परेशानी है या कि उसके मुसलमान होने से?

इस प्रकार जमीन जायदाद के लिए चचेरे भाइयों का झगड़ा और उस चाची के ध्यान का ज्ञान भी न होना आर्थिक लोभ की ओर ध्यान खिंचता है।

आपसी लगाव कहां लड़े होने पर धन की लालसा के कारण गायब हो गया पता ही नहीं चला कि चाचा की मृत्यु के बाद रवि व राजू, माधो व वृंदा से 5000 रूपये की बात करते हैं और अब वे निःसंतान चाची की सारी जायदाद हड़पना चाहते हैं। धन की चाह ने खून के रिश्तों में भी कड़वाहट भर दी है और मनुष्यता को समाप्त कर दिया है।

सामाजिक जीवन व सामाजिक चेतना :

आरती लोकेश की कहानियां आमजन की कहानियां है। वैसे भी देखें तो साहित्य समाज का दपर्ण होता है। इस कारण किसी भी कहानीकार की यह पहली जिम्मेदारी होती है कि वह अपनी लेखनी का प्रथम विषय अपने आस-पास का समाज बनाए। बिना सामाजिक पात्रों के रचना लेखन प्रभावी नहीं बन पाता।

ऐसा संभव भी नहीं कि बिना समाज और सामाजिक वातावरण के लेखन कार्य पूरा हो। यह कहानी समाज व अपने आस-पास के जीवन से जुड़ी हुई है। आरती जी ने अपनी कहानियों में समाज में घटित होने वाली आम समस्याओं को पाठक के सामने रोचक रूप में प्रस्तुत किया है।

समाज का रहन-सहन, तौर-तरीके, व्यवहार विचार सभी को ध्यान में रखकर कहानी के विषय प्रस्तुत किए हैं।

अवलम्ब कहानी एक विधवा स्त्री के जीवन, कठिनाइयों व उसके मन की ऊहापोह को दर्शाती है। 'नशा' कहानी किस प्रकार व्यक्ति नशे का शिकार होकर परिवार, समाज को कलंकित करता है। ब्यान करती है।

इतवार की शाम में आतंकवादी घटना को किस प्रकार समझदारी से टाल दिया जाता है उसका वर्णन है।

गुड़ के भेली समाज में होने वाले संस्कारों की जानकारी देती हुई कृष्णा के मन की वेदनाओं को उजागर करती है।

साँच की आँच कहानी की टैग लाइन भी यही रही - विस्थापित सत्य से जूझती कहानियाँ।

अतः लोकेश की कहानियाँ समाज की तथा सामाजिक चेतना की कहानियाँ है।

निष्कर्ष :

अंत में कहा जा सकता है कि आरती लोकेश आधुनिक काल की नवीन लेखिकाओं में एक प्रभावशाली व्यक्तित्व रहा है। इनकी कहानियों के ताने-बाने जहाँ पढ़ने में सहज है वहीं उत्सुकता व प्रभावशाली रही है। कहानियाँ भिन्न-भिन्न कथानक को लेकर आई है। लोकेश की सूक्ष्म दृष्टि व कलागत कुशलता प्रत्येक कहानी पर अपनी अमिट छाप छोड़ती है।

सिद्धांतों व औपचारिकता से दूर कथानक पाठक को सहज महसूस होने वाले है, जो मनोस्थितियों को एक विश्लेषणात्मक आयाम देने की चेष्टा करती है। भावों की अभिव्यक्ति की कुशलता एक आम पाठक के मन की गहराई को भाप कर उसे जागृत करने का सफल प्रयास कर पाया है तथा जीवन की वास्तविक सच्चाई को जानकर उत्पन्न होने वाली उलझनों के हल ढूंढने में स्वयं में सहज पाता है। हर्ष की बात यह है डॉ. लोकेश ने साहित्य की इस विद्या को इतनी सुन्दरता से पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है कि पाठक सम्मोहित हुए बिना रह ही नहीं पाया है।

संदर्भ सूची :

1. डॉ. आरती लोकेश, 'साँच की आँच', नोशन प्रेस चैन्नई, 2021, पृ. ग
2. डॉ. आरती लोकेश, 'प्रशस्ति पत्र', 2021, पृ. ग1
3. छवि इन्द्री पृ. -55
4. डॉ. आरती लोकेश, 'आकार' नोशन प्रेस चेन्नई, 2021, पृ. 26
5. डॉ. आरती लोकेश, 'गुड़ की भेली', 'साँच की आँच', नोशन प्रेस चैन्नई, 2021, पृ. 123-124
6. डॉ. आरती लोकेश, 'अवलम्ब, 'साँच की आँच', नोशन प्रेस चैन्नई, 2021, पृ. 120
7. मानवीय संवेदना कर्तव्य और अन्तर्द्वन्द्व की कहानियाँ - साहित्य सुरभि डॉ. आरती लोकेश, पृ. सं. 183
8. यथार्थ से जुड़ी कहानियाँ - डॉ. दीपा रस्तोगी (साहित्य सुरभि)
9. डॉ. आरती लोकेश की आधी माँ, अधूरा कर्ज, समीक्षा - डॉ. अखिलेश पालरिया, अजमेर
10. सर्जन व समीक्षण का रसास्वादन - कथ्य-अकथ्य-डॉ. अशोक कुमार मंगलेश।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

किन्नर समाज का संघर्ष : एक विश्लेषण

आशु प्रज्ञा
शोधार्थी, विषय - हिन्दी
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार
ई-मेल - ashupragya-htw@gmail.com
मोबाईल नं. 8210557272, 8809228624

किन्नरों का जीवन-संघर्ष अन्यलिंगी प्राणियों से भिन्न है। उनका संपूर्ण जीवन अपने आपसे लड़के साथ ही समाज के अंदर और बाहर की लड़ाई लड़ने में ही बीत जाता है। प्रत्येक मनुष्य का अपना समुदाय होता है, उनका अपना समाज होता है, रीति-रिवाज और संस्कार होता है। किन्नरों का भी अपना समाज होता है उसके अपने नियम होते हैं उन नियमों से बंधकर रहना जरूरी व्यवहार होता है। अतः यह कहा जा सकता है कि किन्नरों को अपने आप से लड़ना पड़ता है। अपने परिवार से संघर्ष करना पड़ता है और अपने समाज की आन्तरिक दशा से संघर्ष करना पड़ता है और अंततः बाहरी सामाजिक पर्यावरण से संघर्ष करना पड़ता है। किन्नरों के आत्मसंघर्ष द्रष्टव्य है, ‘‘किन्नर वर्ग की व्यक्तिगत समस्याएँ गहन तथा जटिल है। किन्नर सर्वप्रथम तो लिंग से जुड़े अपने अधूरेपन से लड़ता है, दूसरों से अलग होने की पीड़ा से भी लड़ता है। दूसरों से तो दूर, वह स्वयं से भी सामंजस्य नहीं बिठा पाता। खुद को दूसरों को समझा नहीं पाता, उसके बदलते शारीरिक-मानसिक व्यवहार के कारण उसे फटकार-मार मिलती है तथा बचपन के लाड़-प्यार की जगह उसकी झोली में आती है, गालियाँ।’’[1]

किन्नरों का जीवन संघर्ष आत्मसंघर्ष का दस्तावेज होता है। इसके साथ ही यह पारिवारिक जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी भी सिद्ध होता है। परिवार में जन्म लेना और फिर परिवार से सदा के लिए अलग हो जाना ही इसकी नियति बन गई है। अभी तक कोई ऐसी सामाजिक व्यवस्था का विकास नहीं हो सका है कि किन्नर परिवार में जन्म लेकर उसका अभिन्न अंग बना रह सके। पारिवारिक जीवन की सबसे बड़ी विडंबना और क्या हो सकता है। इस विडंबना का सबसे बड़ा शिकार तृतीय लिंगी प्राणी होता है। स्त्रीलिंगी और पुरुषलिंगी सदस्य के लिए परिवार में स्थान होता है लेकिन किन्नरों के ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। यह केवल किन्नर जीवन के अधूरेपन को ही नहीं दर्शाता है बल्कि पारिवारिक जीवन के अधूरेपन को भी दर्शाता है। पारिवारिक जीवन की पूर्णता और आदर्श पर तृतीयलिंगी का अस्तित्व प्रश्न चिन्ह बनकर खड़ा है। इस संदर्भ में डॉ. अनु मेहता का कथन है, ‘‘जहाँ एक ओर वह परिवार के लिए समस्या बन जाता है, वहीं परिवार के लिए वह अनसुलझे प्रश्न के रूप में प्रस्तुत होता है। सामाजिक भर्त्सना, तिरस्कार और लांछनों के भय से परिवार, उसे चाहे-अनचाहे त्यागने और भाग्य के भरोसे पर छोड़ने को विवश हो जाता है। परिवार से कटने पर व्यक्ति की स्थिति क्या हो जाती है, हमसब बेहतर समझ सकते है। इसी कारण उसकी दशा और दिशा, दोनों जड़मूल से परिवर्तित हो जाते हैं।’’[2]

किन्नर समाज की अन्तरिक समस्या कम दुरुह और जटिल नहीं होती है। उसका आन्तरिक समाज कई गुटों में बँटा होता है। प्रत्येक गुट के नेता होते हैं, गुरु होते हैं। समुदाय के सदस्यों पर उनके गुरुओं का वर्चस्व कम कष्टकारी नहीं होता है। प्रत्येक किन्नर सदस्य को अपने समाज के रीति-रिवाजों का पालन करना पड़ता है। गुरु बनने की प्रतिस्पर्धा में हिंसा

का वातावरण बन जाता है। यहाँ अपने-अपने किन्नर समुदाय के चलने वाले निरंतर संघर्ष को स्पष्ट देखा जा सकता है। एक गुट के किन्नर सदस्य का दूसरे गुट में चला जाना अपराध माना जाता है। इसके लिए गुट बदलने वाले सदस्य को प्रताड़ित किया जाता है। किन्नरों के बीच गुरु बनने, गुरु का उत्तराधिकारी बनने तथा गद्दी का अधिकारी बनने तथा धन प्राप्त करने की महत्त्वाकांक्षा हिंसक रूप ले लेता है। इस क्रम में प्रतिस्पधी की हत्या तक कर दी जाती है। किन्नरों के सामाजिक जीवन की आन्तरिक दशा अत्यन्त तनावपूर्ण एवं अस्वस्थकर जिसका दंश किन्नर समुदाय को झेलना पड़ता है। यहा आन्तरिक पीड़ा बाहरी सामाजिक पीड़ा से कम खतरनाक नहीं होती है। इसका घातक प्रभाव उसके अंदरुनी जीवन पर पड़ता है। इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए किन्नर जीवन की अध्येता पार्वती कुमारी ने लिखा हैं, ''किन्नर जीवन अकेलेपन के साथ चलता है। यह सब अपने समुदाय में आ जाता है तो इसका जीवन उस समुदाय के साथ जुड़कर उसकी समस्त गतिविधियों में हिस्सा लेने लगता है। इसी हिस्सेदारी के साथ उनमें एक तरह की प्रतिस्पर्धा पनपने लगती है। इसी के साथ बह आपसी अन्तद्वन्दों में उलझ जाता है और निरंतर अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए संघर्ष करता है।''[3]

किन्नर समुदाय को अपने समाज की आन्तरिक समस्याओं के अतिरिक्त अपने समाज से बाहर के समाज द्वारा बहिष्कार की सबसे गंभीर समस्या से टकराना पड़ता है। सामाजिक बहिष्करण की समस्या का निकट भविष्य में किसी प्रकार के समाधान के आसार नजर नहीं आते हैं। इस प्रकार की चुनौती से संघर्ष करना सबसे कठिन संघर्षों में से एक है। इस दुरन्त समस्या के कारण जो संघर्ष की स्थिति पैदा होता है, वह अत्यन्त समय साध्य एवं कष्टसाध्य होता है। इसके कारण जो व्यथा झेलनी पड़ती है उसका अनुमान करना भी कठिन हो जाता है। यह मानव- जीवन की सबसे त्रासद स्थिति होती है। इस कठिन स्थिति का एक कारक प्रकृति है तो दूसरा कारण मनुष्य है। मनुष्य के मन में मनुष्य के प्रति इतनी उपेक्षा का भाव मानव होने की स्वीकार्य पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करता है। इसका समाचाल मानव समाज को ही ढूँढना पड़ेगा अन्यथा मानवता कलंकित और प्रश्नांकित रहेगी। इस संदर्भ में पार्वती कुमारी का कथन द्रष्टव्य है ''समाज में प्रत्येक व्यक्ति के भीतर सम्मान से जीने की ललक होती है किन्तु समाज में स्त्री-पुरुष से इतर तीसरी योनि के लोग सम्मानपूर्ण जीवन जीने से अनभिज्ञ हैं। इन्हे समाज हेय दृष्टि से देखता है। समाज आज इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में प्रवेश कर चुका है परन्तु अब तक इन किन्नरों को वह सम्मान और इज्जत नहीं मिल पायी है जो समाज के किसी अन्य व्यक्ति को मिलती है।''[4]

किन्नरों के संघर्ष का सबसे बड़ा कारण उनकी जैविक बनावट है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं हैं कि इस समस्या का समाधान नहीं ढूँढ़ा जा सकता है। आज के वैज्ञानिक और कृत्रिम समाधान ढूँढ़ा जा चुका है। किन्नरों के सेक्स संबंधी समस्या का भी वैज्ञानिक समाधान ढूँढ़ा जा सकता है। यह समय की मांग है। प्रियंका नारायण ने लिखा है, ''यदि इस प्राकृतिक समस्या का पूर्ण हल निकाला जाए तो हमें कोई कारण नहीं दिखता कि इनके साथ उपेक्षित जीवों की तरह व्यवहार किया जाए क्योंकि प्रकृति की ऐसी कई व्यवस्थाएँ हैं जो सहज नहीं उन्हें सहज बनाने के लिए ढ़ाला जाता है। जैसे सामान्यतः मरुभूमि बसने के लिए बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं होती है परन्तु मानव या अन्यजीव भी अनुकूलन या अन्य प्राकृतिक या कृत्रिम तंत्र के जरिए उन्हें बसने के लायक बना देते हैं।''[5]

प्रियंका नारायण के कथन में सच्चाई मौजूद है। विज्ञान ने लिंग-परिवर्तन को संभव बनाया है। उच्चतम न्यायालय ने किन्नरों को संतान गोद लेने और लिंग-परिवर्तन का अधिकार दिया है। यद्यपि भारत सरकार ने उनके जीवन में सकारात्मक बदलाव के लिए कानून का निर्माण किया है लेकिन अभी उनकी जैविक समस्या और सामाजिक स्वीकार्यता की समस्या व्यावहारिक और सामाजिक स्तर पर ठोस समाधान सामने नहीं आया है, छिटपुट प्रयास अवश्य देखने को मिलता है लेकिन व्यापक स्तर पर सर्वमान्य हल निकालने का प्रयास अभी दूर नजर आता है। संपत्ति में अधिकार का मामला नहीं सुलझाया जा सकता है तथा उनके साथ किये गये बलात्कार का ठोस समाधान नहीं ढूँढ़ा जा सका सका है। उनके लिए रोजगार एवं आवास की उचित व्यवस्था नहीं किया जा सका है।

कार्यक्षमता की दृष्टि से वे किसी भी अन्य लिंगी नागरिक से कमतर नहीं हैं। उनके भी दिल और दिमाग की गतिशीलता अन्य समुदाय के सदस्यों के बराबर है। अतः उनके लिए न्यायपूर्ण व्यवस्था कर समाज के विकास में उनके योगदान को

सुनिश्चित किया जा सकता है। इस कार्य में किन्नर समुदाय को जागरूक कर और शिक्षित बनाकार, उन्हें हर तरह का नागरिक अधिकार और सुविधा प्रदान कर, समाज को चौतन्य बनाकर सरकारी तंत्र एवं न्यायतंत्र का उन्मुखीकरण कर किन्नरों की समस्याओं के समाधान के साथ ही सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन लाया जा सकता है। यह भारत के प्रत्येक नागरिक के साथ ही सरकार का भी कर्तव्य है। यही हमारा राष्ट्रधर्म है।

किन्नरों की जीवन-संघर्ष के विविध आयामों को देखते हुए उनकी समस्या को बहुआयामी, कालव्यापी और देशव्यापी और माना जा सकता है। इनके संघर्ष का दायरा अत्यन्त व्यापक होते हुए भी इन्हें कम महत्व दिया गया है इसलिए इनकी समस्याओं का समाधान दुरन्त दिखाई देता है। किन्नर समुदाय हाशिया का हाशिया बना हुआ है। इनकी संघर्षशीलता को भी हाशिए पर डाल दिया गया है। इस संदर्भ में पार्वती कुमारी का कथन है, ''सामाजिक अस्वीकृति किन्नरों की सबसे बड़ी समस्या है। अस्मिताबोध के इस दौर में जहाँ हाशिये के उन तमाम लोगों को समाज स्वीकारता जा रहा है, वहीं किन्नरों को आज हाशिये से भी हाशिये पर धकेल दिया गया है।''[6]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ किन्नर समुदाय का संघर्ष आज भी बदस्तूर जारी है। इनके जीवन में हस्तक्षेप कर उक्त समुदाय की उसकी मौलिक समस्याओं का समाधान ढूँढे बिना उसके संघर्ष को न्यूनतम बिंदु पर लाना संभव नहीं है। वर्तमान समय में उनका संघर्ष चरमोत्कर्ष पर है। इस दिशा में बहुमुखी एवं सकारात्मक प्रपास कर तनाव शैथिल्य की स्थिति प्राप्त की जा सकती है। थोड़ा संतोष का विषय यह है कि किन्नरों की समस्याओं की ओर कुछ बुद्धि जीवियों, सरकारों और न्यायालयों का ध्यान जा रहा है। किन्नर समुदाय से जुड़े बुद्धिजीवियों और उससे जुड़े विशिष्ट नागरिकों ने देश और दुनिया के सामने उत्कृष्ट उदाहरण पेश किया हैं।

संदर्भ सूची

1. हिन्दी साहित्य में किन्नर जीवन, सम्पादक : डॉ. दिलीप मेहरा, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2019 पृ. सं. 44
2. हिन्दी साहित्य में किन्नर जीवन, सम्पादक : डॉ. दिलीप मेहरा, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2019 पृ. सं. 44
3. किन्नर समाज, सन्दर्भ तीसरी ताली पार्वती कुमारी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2019, पृ. सं.150
4. किन्नर समाज, सन्दर्भ तीसरी ताली, पार्वती कुमारी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2019 पृ. सं. 162
5. किन्नर : सेक्स और सामाजिक स्वीकार्यता, प्रियंका नारायन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2021, पृ. 33
6. किन्नर समाज, सन्दर्भ तीसरी ताली, पार्वती कुमारी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2019 पृ. सं. 144

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

फिल्म : मनोरंजन एवं शिक्षा का सशक्त माध्यम (हिन्दी फिल्मों के संदर्भ में)

सुनिधि कुमारी
(शोधार्थी)
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा
ई मेल- sunidhikumari-htw@gmail.com
मो॰ न॰ 6201470304

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त ने काव्य के प्रयोजन के संदर्भ में कहा है - केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए, उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए। फिल्म के लिए भी ये दोनों प्रयोजन सार्थक हो सकते है। फिल्म मनोरंजन का मुख्य प्रयोजन को अवश्य पूरा करे, लेकिन इसी के साथ यदि वह शिक्षा भी दे तो सोने पर सुहागे जैसी बात हो जाएगी। फिल्म से मिलने वाली शिक्षा का स्वरूप कान्तासम्मित उपदेश जैसा होता है। फिल्म द्वारा प्रदत्त शिक्षा में संवेदना तक उतरजाने की संभावना छिपी रहती है। इसलिए वह अत्यन्त प्रभावशाली और मार्मिक सिद्ध होती है। हिन्दी की अनेक ऐसी फिल्में हैं जिनकी शिक्षाप्रद बातों का असर दर्शकों तक पहुँची हैं। हिन्दी फिल्मों के इतिहास के सिंहावलोकन द्वारा ऐसी फिल्मों पर ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है। मूक फिल्मों को छोड़ भी दिया जाए तो सवाक् फिल्मों में प्रभात फिल्म कंपनी की सवाक् फिल्म 'अयोध्या का राजा' से ही मूल्य मीमांसा का दौर शुरु हो जाता है। यह निर्देशक वी॰ शांताराम की ऐसी फिल्म है जिसका विषय धार्मिक होने के बावजूद इसे सत्येंप्रेम और देश प्रेम जैसे मूल्यों से जोड़कर प्रस्तुत किया गया है। सत्येंप्रेम और देशेंप्रेम ही इस फिल्म की अनमोल शिक्षाएँ हैं। 'यहूदी की लड़की' मनुष्य की क्रूरता एवं उस पर पश्चाताप की कहानी कहती है। 'चंडीदास' जैसी फिल्म से 'प्रेम' जैसे जीवन मूल्य की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है। यह परंम्परागत रूढ़ियों के विरूद्ध किये गये संघर्ष की गाथा बन गयी है। प्रेम की इस फिल्म का अमर संदेश और शिक्षा है।

फिल्म 'अमर ज्योति', 'समुद्री डाकूरानी', 'सौदामिनी' की कर्त्तव्यपरायणता का मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है। 'प्रेसीडेंट' फिल्म में मालिकेंमजदूर संबंध के तनावपूर्ण स्थिति का वर्णन किया गया है। यह औद्योगीकरण के परिणाम को दिखानेवाली फिल्म है जहाँ व्यापारिक हित की बलिवेदी पर व्यक्तिगत प्रेम की बलि चढ़ानी पड़ती है।'दुनिया न माने', 'आदमी' और 'पड़ोसी' जैसीआरंभिक फिल्मों में सामाजिक चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। स्ट्रीट सिंगर जैसी फिल्म कलोंमूल्य और जीवनेंमूल्य की एक साथ व्याख्या करती नजर आती है। उक्त सभी फिल्मों के संबंध में कहा जा सकता है कि ये फिल्में मनोरंजन तो करती ही हैं संदेश भी देती हैं। इनसे निकलनेवाली शिक्षाएँ स्थायी महत्व ग्रहण कर लेती हैं। आरंभिक फिल्म निर्माताओं में महबूब खान काअत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने हिन्दी फिल्म को वैश्विक स्तर पर मान दिलाया। 'रोटी', 'अंदाज' और 'मदर इण्डिया' जैसी फिल्मों के बल पर उन्होंने मनोरंजन और शिक्षा के बीच के संतुलन को बनाये रखने का सफल प्रयास किया। इस दृष्टि से विचार करने पर पता चलता है कि 'किस्मत' जैसी अपराध फिल्म अपने गीतेंसंगीत के

लिएमनोरंजक और आकर्षक बन पड़ी थी लेकिन उसका युवा पीढ़ी पर पड़नेवाले नकारात्मक प्रभाव की आलोचना की गई हैं इसका दूरगामी प्रभाव पड़ा। इस संदर्भ में लिखा गया है, ''इसमें पहली बार फिल्म का नायक आदर्शवाद की खोल से निकलकर बाहर आया था। वह पॉकेटमार गिरहकट था। सम्भवतः यह उस क्रुध युवा का बीज रूप था जिसने 1975 में अमिताभ बच्चन के रूप आकर ग्रहण किया। उस समय के प्रसिद्ध फिल्म पत्रकार बाबूराव पटेल ने अपनी पत्रिका 'फिल्म इंण्डिया' में इसकी छीछालेदर करते हुए भर्त्सना की थी। इसे समाज में अपराध को बढ़ावा देनेवाली फिल्म करार दिया था। अपराधी छवि का ग्लोरीफिकेशन तीव्र रूप में किया गया था।''[1]

'किस्मत' फिल्म के मूल्यांकन से यह स्पष्ट होता है कि फिल्म की सफलता उसके मूल्यांकन का एकमात्र आधार नहीं हो सकती है। मनोरंजनकारी होना भी काफी नहीं है। फिल्म का स्थायी महत्त्व उसकी मूल्यवत्ता इस बात पर निर्भर है कि स्वस्थ मनोरंजन और मानवीय मूल्यों की शिक्षा देने में वह कहाँ तक सफलता अर्जित कर पाती है। इन दोनों दृष्टियों से सफल और सार्थक सिद्ध होनेवाली फिल्मों में राजकपूर की अधिकांश फिल्में अपना स्थान सुरक्षित रखने में सफल रही हैं। 'बूट पॉलिस', 'श्री 420', 'जागते रहो','आवारा', आदि की सफलता और सार्थकता में इन्हीं दोनों तत्वों की भूमिका रही हैं ऐसे ही फिल्मों को देखते हुए कहा जा सकता है कि फिल्म मनोरंजन और शिक्षा का सशक्त माध्यम है। कुछ फिल्मों को गंभीर और बोझिल कहकर इस श्रेणी से खारिज किया जाता हैं जैसे राजकपूर की फिल्म 'मेरा नाम जोकर', गुरुदत्त की फिल्म 'कागज के फूल'आदि को। 'तीसरी कसम' जैसी सार्थक और सफल फिल्म भी आरंभिक झटके से नहीं बच पायी थी। इस संदर्भ में 'हंस' के संपादक संजय सहाय का कथन द्रष्टव्य है। उन्होंने लिखा है, ''यूँ भी हमारे देश के दर्शकों के सिनेबोध का, बल्कि कहे तो पूरे कलाबोध का ही, विकास नहीं हुआ हैं कब तक होगा, कोई माई का लाल बता भी तो नहीं सकता।''[2]

फिल्मों में मनोरंजन का समावेश करना आसानहो सकता है लेकिन स्वस्थ मनोरंजन का आधान करना आसान नहीं होता है। इसके लिए सुरुचि सम्पन्नता की आवश्यकता होती है। वी॰ शांताराम की फिल्मों को इसका उत्कृष्ट उदाहरण मानाजा सकता है जहाँ एक साथ ही कला, संस्कृति, सामाजिक सरोकार और स्वस्थ मनोरंजन के प्रचुर उपकरण मौजूद रहते हैं। इनके फिल्मों के स्वस्थ मनोरंजक प्रभाव और सामाजिकता की उपस्थिति एक आदर्श स्थिति का संकेतक हैं 'दो आँखे बारह हाथ', 'झनकझनक पायल बाजे', 'नवरंग', 'दहेज' , 'आदमी', 'पड़ोसी' जैसी फिल्मों को उदाहरण स्वरूप देखा जा सकता है। वी॰ शांताराम के फिल्मों के आधार पर उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन करते हुए सुरेश सलिल ने लिखा है, ''शांताराम के सिनेमा व्यक्तित्व का पहला अध्याय 'प्रभात' है तो दूसरा 'राजकमल' जिसका अपना अलग गौरवशाली इतिहास है, जो स्थानाभाव के कारण यहाँ संभव नहीं , फिर भी उसके कीर्तिमान डॉ॰ कोटनीस की अमर कहानी, 'दो आँखें बारह हाथ', 'झनक-झनक पायल बाजे' और 'नवरंग' भारतीय सिनेमा की विकास यात्रा में हरदम याद किये जाते रहेंगे और शांताराम का भीष्म व्यक्तित्व भी।''[3]

जहाँ तक सिनेमा के माध्यम से मनोरंजन की उपलब्धि का सवाल है, इस पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है, जहाँ सत्यजीत राय फिल्म को गंभीरता से देखने की बात करते हैं, वहीं गौतम घोष का मानना है कि मनोरंजन को चरित्रवान होना चाहिए। उन्होंने लिखा है, ''साहित्य या सिनेमा या किसी भी कला का मुख्य हिस्सा आनंद है। लेकिन मनोरंजन का अर्थ यह नहीं है कि अपनी संस्कृति की जड़ें उखाड़ते चले। लोक कथा, लोक कलाओं के अन्य रूप देखें तो वे बेहद मनोरंजन देने वाले हैं। हमारे समाज में अनेक स्तर पर इस प्रकार का मनोरंजन तैयार किया गया थ। उसमें समाज के प्रति व्यंग्य, आलोचना सब कुछ होता था। उसका एक चरित्र होता था। मनोरंजन को चरित्रवान होना चाहिए। यही उसका मूल्य है। जिस मनोरंजन का कोई चरित्र नहीं है, वह बिल्कुल अस्थायी है।''[4]

गौतम घोष ने सिनेमा में मनोरंजन और सामाजिक यथार्थ के समन्वय पर जोर देकर उसी ओर संकेत किया है कि फिल्म को मनोरंजक और ज्ञानवर्धक होना चाहिए। यहाँ कलाबोध और यथार्थबोध को समन्वित दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया है। उन्होंने ऐसे फिल्मकार और फिल्मों की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए लिखा है, ''विमल राय, राजकपूर, गुरुदत्त की फिल्में मनोरंजन देने के साथेंसाथ सामाजिक यथार्थ को भी दिखाने की चेष्टा करती थीं। पाँचवें दशक की फिल्मों पर इसका बहुत प्रभाव था। इप्टा के प्रभाव के कारण ही सिनेमा का कथानक या चरित्र सामान्य जनता से लिए जाते थे। 'धरती के लाल'

ऐसी ही फिल्म थी। यह स्थिति केवल हिन्दी की नहीं थी, दूसरी भारतीय भाषाओं में भी थी। बांग्ला में निभाई घोष की 'छिन्नमूल। वी॰ शांताराम ने मराठी में ऐसी फिल्में बनाई थी।''[5]

उक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि फिल्म से प्राप्त होनेवाले मनोरंजन में स्थायित्व होने चाहिए। उसे आनंद की कोटि का होना चाहिए, न कि फूहड़ और गलीज फिल्म के मनोरंजन को विरेचक होना चाहिए। चरित्रहीन मनोरंजन विरेचक नहीं हो सकता है। वह स्वयं अपकारक होता है। फिल्म के विरेचन करने की क्षमता का उल्लेख करते हुए यह कहा गया है कि जीवन की अन्य मूलभूत आवश्यकता की तरह ही मनुष्य को मनोरंजन या आनंद की आवश्यकता होती है। इसके अभाव में वह मानसिक स्वास्थ्य को प्राप्त नहीं कर पाता है। फिल्म में मनोरंजन या आनंद प्रदान करने का भरपूर गुण होता है। इसकी पुष्टि करते हुए कहा गया है, ''आदमी की मूलभूत जरूरत होती हैं जैसे - ऑक्सीजन, पानी, भोजन, सेक्स और घर ये सारी चीजें हैं। उसे अपनों का साथ चाहिए। इन्हीं सब जरूरतों में एक बहुत बड़ी जरूरत है विरेचन। विरेचन वह अनुभव है जिसमे आपको लगता है कि सारा तनाव एकदम से बाहर आ गया है। हल्का महसूस करने लगते हैं।... यही अंग्रेजी में कैथारसिस है। संस्कृत साहित्य में इसे ब्रह्मानन्द सहोदर कहा गया है। यानी सुख की चरम अवस्था।''[6]

अंत में यह कहा जा सकता है कि अच्छी फिल्में मनोरंजन, शिक्षा, ज्ञानोदय एवं भावोदय का अत्यन्त सशक्त माध्यम होती हैं। जो व्यावहारिक जीवन में अपनी उपयोगिता एवं सार्थकता सिद्ध करने में सक्षम होती हैं।

संदर्भ सूची

1. हिन्दी सिनेमा : आदि से अनंत... प्रह्लाद अग्रवाल खण्ड - 1 साहित्य भण्डार, इलाहाबाद; संस्करण - 2014, पृ॰ -115
2. हंस, फरवरी 2013, पृ॰ -05
3. हंस, फरवरी 2013, पृ॰ -05
4. समकालीन सृजन : हिन्दी सिनेमा का सच; सं॰ मृत्युजय, समकालीन सृजन, कलकत्ता अंक -17, प्रकाशन वर्ष -1997 पृ॰ -70
5. समकालीन सृजन : हिन्दी सिनेमा का सच; सं॰ मृत्युजय, समकालीन सृजन, कलकत्ता अंक -17, प्रकाशन वर्ष -1997 पृ॰ -70
6. आइडिया से परदे तक; रामकुमार सिंह, सत्यांशु सिंह राजकमल, प्रकाशन, नई दिल्ली संस्करण -2021 पृ॰ -33

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

अभिभावकों की भागीदारी और दृष्टिकोण : समावेशी शिक्षा की दिशा में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

कमलेश माथुर
Ph.D. Scholar
Department of B.Ed./M.Ed. (IASE),
M.J.P. Rohilkhand University, Bareilly, Uttar Pradesh, India

शोध सारांश (Abstract)

यह शोध पत्र अभिभावकों की भागीदारी और समावेशी शिक्षा के प्रति उनके दृष्टिकोण का विश्लेषण करता है। समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) का उद्देश्य सभी बच्चों—चाहे वे सामान्य हों या विशेष आवश्यकता वाले—को एक समान अवसर प्रदान करना है। यह व्यवस्था न केवल बच्चों के शैक्षणिक जीवन को बल्कि उनके सामाजिक और भावनात्मक विकास को भी प्रभावित करती है। अभिभावक बच्चों के पहले शिक्षक और मार्गदर्शक होते हैं। इसलिए उनकी सोच, सहयोग और सक्रिय भागीदारी समावेशी शिक्षा को सफल बनाने में निर्णायक भूमिका निभाती है।

शोध में पाया गया कि अधिकांश अभिभावक समावेशी शिक्षा की संकल्पना से सहमत और उसके प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं, परंतु व्यवहारिक स्तर पर उनकी भागीदारी सीमित दिखाई देती है। सामाजिक-आर्थिक स्थिति, शैक्षिक पृष्ठभूमि और जागरूकता की कमी इसके प्रमुख कारणों में शामिल हैं। इस अध्ययन में सुझाव दिया गया है कि स्कूलों को अभिभावकों के लिए प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए ताकि वे समावेशी शिक्षा की प्रक्रिया का सक्रिय हिस्सा बन सकें।

प्रस्तावना (Introduction)

समाज के विकास और प्रगति के लिए शिक्षा सबसे सशक्त साधन है। शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति में आत्मनिर्भरता, सहयोग, सम्मान और सामाजिक जिम्मेदारी की भावना विकसित करना भी है। इसी दृष्टिकोण से ष्समावेशी शिक्षाष (Inclusive Education) का महत्व और भी बढ़ जाता है।

समावेशी शिक्षा का मूल मंत्र है— ''किसी को पीछे न छोड़ना।'' यह केवल विशेष आवश्यकता वाले बच्चों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें वे सभी बच्चे आते हैं जो सामाजिक, आर्थिक या सांस्कृतिक रूप से पिछड़े हैं। इसका लक्ष्य है कि सभी को एक ही मंच पर समान अवसर मिलें। इस प्रक्रिया में अभिभावकों की भूमिका केंद्रीय है। अभिभावक बच्चों के प्रथम शिक्षक होते हैं, इसलिए उनके दृष्टिकोण और सक्रिय भागीदारी से ही समावेशी शिक्षा सफल हो सकती है। यदि अभिभावक अपने बच्चों की विशेष आवश्यकताओं को समझते हैं, शिक्षकों के साथ सहयोग करते हैं और सकारात्मक वातावरण तैयार करते हैं, तो बच्चे शिक्षा में अधिक प्रगति करते हैं।

कूट शब्द (Keywords)
समावेशी शिक्षा (Inclusive Education)
अभिभावक भागीदारी (Parental Involvement)
दृष्टिकोण (Perception)
सामाजिक-आर्थिक कारक (Socio-Economic Factors)
शैक्षिक नीति (Educational Policy)

साहित्य समीक्षा (Review of Literature)

समावेशी शिक्षा पर हुए विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि अभिभावकों की भागीदारी और उनके दृष्टिकोण इस प्रक्रिया की सफलता के लिए निर्णायक होते हैं।

Sharma (2020) ने अपनी पुस्तक Inclusive Education: A Comprehensive Approach में बताया कि समावेशी शिक्षा तभी प्रभावी हो सकती है जब परिवार, शिक्षक और समुदाय मिलकर सहयोग करें।

Gupta (2019) ने अभिभावकों की सहभागिता पर बल दिया और पाया कि जिन बच्चों के माता-पिता नियमित रूप से विद्यालयी गतिविधियों में भाग लेते हैं, उनका प्रदर्शन बेहतर होता है।

Singh (2021) के अनुसार अभिभावकों का दृष्टिकोण सकारात्मक होने पर समावेशी शिक्षा का प्रभाव बच्चों के आत्मविश्वास और सामाजिक कौशल पर अधिक पड़ता है।

Verma (2022) ने चुनौतियों की ओर संकेत करते हुए लिखा कि अभी भी कई अभिभावकों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति पूर्वाग्रह मौजूद है।

Joshi (2018) ने शिक्षक-अभिभावक सहयोग को आवश्यक बताया और कहा कि यह साझेदारी बच्चों के शैक्षिक वातावरण को समृद्ध करती है।

अभिभावक और उनकी भूमिका (Parents and Their Role)

अभिभावक शिक्षा प्रक्रिया के सबसे महत्त्वपूर्ण हितधारक (stakeholders) माने जाते हैं। वे न केवल बच्चों के जीवन में सबसे अधिक समय बिताते हैं, बल्कि उनके शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास पर भी गहरा प्रभाव डालते हैं।

1. प्रथम शिक्षक के रूप में भूमिका : बच्चा सबसे पहले अपने परिवार से सीखता है। परिवार ही उसकी भाषा, संस्कृति, मूल्य और अनुशासन का आधार तैयार करता है।

2. शिक्षा में सहयोगी : जब अभिभावक स्कूल की गतिविधियों में भाग लेते हैं—जैसे पेरेंट-टीचर मीटिंग, होमवर्क में सहयोग, विद्यालयी कार्यक्रम—तो बच्चों का आत्मविश्वास और प्रदर्शन बेहतर होता है।

3. समावेशी वातावरण का निर्माण : यदि अभिभावक विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को स्वीकारते हैं और उनके प्रति संवेदनशील होते हैं, तो बच्चे भी अपने साथियों का सम्मान करना सीखते हैं।

4. प्रेरणा स्रोत : अभिभावकों का सकारात्मक रवैया बच्चों को प्रोत्साहित करता है। यदि माता-पिता शिक्षा के महत्व को समझते हैं, तो बच्चे भी अधिक गंभीरता से पढ़ाई करते हैं।

शोध के उद्देश्य (Objectives of the Study)

इस शोध का मुख्य उद्देश्य यह जानना है कि अभिभावक समावेशी शिक्षा के प्रति किस प्रकार का दृष्टिकोण रखते हैं और बच्चों की शिक्षा में उनकी भागीदारी किस स्तर तक है। अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. अभिभावकों की समावेशी शिक्षा के प्रति धारणा (Perceptions) का अध्ययन करना।

2. बच्चों की शैक्षिक गतिविधियों में अभिभावकों की भागीदारी (Involvement) का मूल्यांकन करना।

3. अभिभावकों की शैक्षिक पृष्ठभूमि, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, और जागरूकता के आधार पर उनके दृष्टिकोण में होने वाले अंतर को समझना।

4. अभिभावकों और शिक्षकों के बीच सहयोग की प्रकृति और महत्व का विश्लेषण करना।

5. समावेशी शिक्षा को प्रभावी बनाने हेतु नीतिगत और व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

अभिभावकों के दृष्टिकोण (Parental Perceptions)

अभिभावकों का दृष्टिकोण inclusive education के सफल या असफल होने में निर्णायक भूमिका निभाता है।

सकारात्मक दृष्टिकोण :

कई अभिभावक मानते हैं कि समावेशी शिक्षा बच्चों के बीच सहिष्णुता और सहयोग बढ़ाती है। वे देखते हैं कि इससे उनके बच्चे में सामाजिक कौशल विकसित होते हैं।

नकारात्मक दृष्टिकोण :

कुछ अभिभावकों को लगता है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के साथ पढ़ने से उनके बच्चों की पढ़ाई पर नकारात्मक असर पड़ सकता है। उन्हें यह डर रहता है कि शिक्षकों का ध्यान बराबर नहीं बंटेगा।

तटस्थ या संदेहपूर्ण दृष्टिकोण :

कई बार जागरूकता की कमी के कारण अभिभावक न तो इसका समर्थन करते हैं और न ही विरोध। इसलिए यह आवश्यक है कि अभिभावकों को समावेशी शिक्षा के वास्तविक लाभ और महत्व से परिचित कराया जाए।

शोध कार्यप्रणाली (Research Methodology)

(i) शोध प्रकार (Type of Research)

यह अध्ययन वर्णनात्मक (Descriptive Survey Method) पर आधारित है। इसमें मात्रात्मक (Quantitative) और गुणात्मक (Qualitative) दोनों विधियों का उपयोग किया गया।

(ii) जनसंख्या (Population)

शोध की जनसंख्या में प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों के अभिभावक शामिल किए गए।

(iii) नमूना (Sample)

कुल 100 अभिभावकों का चयन किया गया।

इसमें 50 पुरुष और 50 महिला अभिभावक शामिल थे।

60% शहरी और 40% ग्रामीण क्षेत्रों से लिए गए।

(iv) नमूना चयन विधि (Sampling Method)

यादृच्छिक नमूना विधि (Random Sampling Method) का प्रयोग किया गया।

(v) डेटा संकलन उपकरण (Tools of Data Collection)

1. प्रश्नावली (Questionnaire) Likert scale आधारित प्रश्न (सहमति / असहमति)।

2. साक्षात्कार (Interviews) अभिभावकों की गहन राय जानने के लिए।

3. अवलोकन (Observation) स्कूलों में बच्चों के साथ अभिभावकों के व्यवहार का अवलोकन।

(vi) डेटा विश्लेषण (Data Analysis)

मात्रात्मक डेटा का विश्लेषण प्रतिशत, माध्य (Mean), मानक विचलन (SD), सहसंबंध (Correlation) द्वारा किया

गया।

गुणात्मक डेटा का विश्लेषण विषयवस्तु विश्लेषण (Thematic Analysis) द्वारा किया गया।

निष्कर्ष एवं चर्चा (Findings & Discussion)

शोध के परिणाम निम्न प्रकार से सामने आए :

(i) अभिभावकों की धारणा (Perceptions of Parents)

लगभग 72% अभिभावकों ने समावेशी शिक्षा को सकारात्मक रूप से स्वीकार किया।

18% अभिभावकों को आशंका थी कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की वजह से शिक्षण गति धीमी हो सकती है।

10% अभिभावकों तटस्थ या अनिर्णीत रहे।

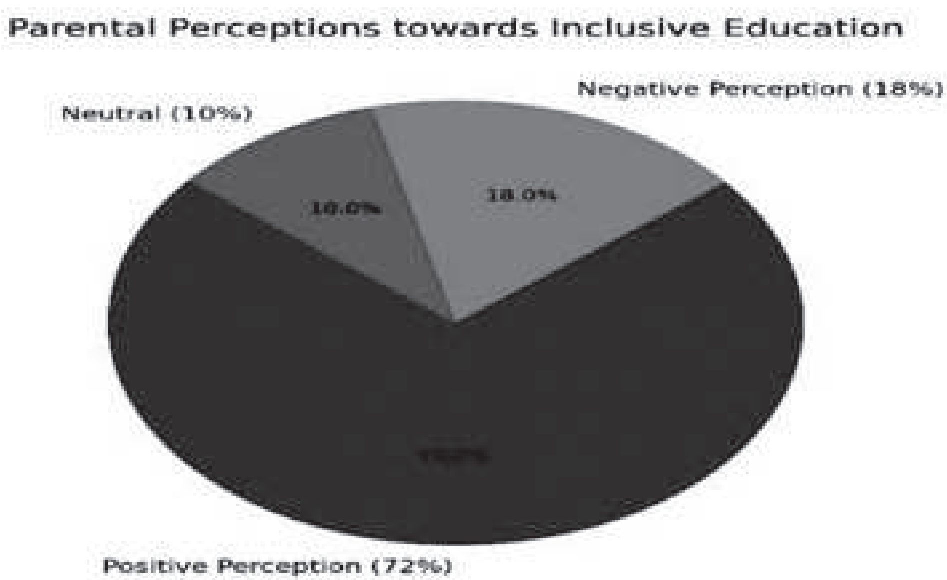

(ii) भागीदारी का स्तर (Level of Involvement)

60% अभिभावक स्कूल की बैठकों और गतिविधियों में भाग लेते हैं।

25% अभिभावक केवल औपचारिक भागीदारी करते हैं (PTM में उपस्थिति भर)।

15% अभिभावक बिल्कुल भाग नहीं लेते।

(iii) सामाजिक-आर्थिक और शैक्षिक पृष्ठभूमि का प्रभाव

उच्च शिक्षा प्राप्त अभिभावक समावेशी शिक्षा के पक्ष में अधिक जागरूक और सक्रिय पाए गए।

निम्न आय वर्ग के अभिभावक भागीदारी में पीछे रहे, कारणरू समय की कमी और संसाधनों का अभाव।

(iv) ग्रामीण-शहरी अंतर

शहरी अभिभावकों में जागरूकता अधिक थी।

ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति पूर्वाग्रह मौजूद थे।

इन निष्कर्षों से स्पष्ट है कि अभिभावकों की सोच और भागीदारी समावेशी शिक्षा को गहराई से प्रभावित करती है। सकारात्मक दृष्टिकोण होने पर भी व्यावहारिक भागीदारी सीमित है। इसका कारण जागरूकता की कमी, समयाभाव और सामाजिक-आर्थिक सीमाएँ हैं।

निष्कर्ष (Conclusion)

समावेशी शिक्षा बच्चों के सर्वांगीण विकास और सामाजिक समरसता का आधार है। इस शोध से यह स्पष्ट होता है कि अभिभावक समावेशी शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं, परंतु उनकी भागीदारी अभी भी पर्याप्त नहीं है। जब तक अभिभावक सक्रिय रूप से सम्मिलित नहीं होंगे, inclusive education की सफलता अधूरी रहेगी।

अतः आवश्यक है कि स्कूल और समाज मिलकर अभिभावकों को जागरूक करें, उन्हें भागीदारी के अवसर दें और उनकी समस्याओं को समझें। तभी समावेशी शिक्षा का लक्ष्य– "सभी बच्चों को समान अवसर" – वास्तविक रूप से पूरा हो सकेगा।

संदर्भ सूची (References)

1. Sharma, A. (2020). Inclusive Education: A Comprehensive Approach. New Delhi: Educational Publishers.
2. Gupta, R. (2019). Parental Involvement in Education: Perspectives and Practices. Mumbai: Academic Press.
3. Singh, P. (2021). The Role of Parents in Inclusive Education. Journal of Educational Research, 45(3), 123-135.
4. Verma, S. (2022). Understanding Inclusive Education: Challenges and Opportunities. Delhi: Scholar Publications.
5. Joshi, M. (2018). Collaboration between Parents and Teachers in Inclusive Settings. International Journal of Inclusive Education, 22(4), 456-470.
6. Mehta, K. (2023). Respect and Cooperation in Inclusive Education: A Study of Parental Attitudes. Educational Studies, 50(2), 89-102.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

वर्तमान परिदृश्य में जनजातीय अधिकार, नीतियाँ और सशक्तिकरण : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. साधना यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर, सोशियोलॉजी
श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

भारत की जनजातियाँ देश की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विविधता का महत्वपूर्ण अंग हैं। यह समुदाय ऐतिहासिक रूप से वंचित, शोषित और उपेक्षित रहा है, जिसकी पहचान, अधिकार और संसाधनों पर पहुंच सीमित रही है। स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने जनजातीय समुदायों के अधिकारों की रक्षा और उनके समग्र विकास के लिए अनेक नीतियाँ और योजनाएँ बनाई हैं। इनमें अनुसूचित जनजातियों को अनुसूचित क्षेत्र का दर्जा, वन अधिकार अधिनियम 2006, पंचायती राज (अनुसूचित क्षेत्र विस्तार) अधिनियम (PESA) 1996, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं में विशेष प्रावधान, तथा आर्थिक सहायता योजनाएं प्रमुख हैं।

जनजातीय सशक्तिकरण का तात्पर्य केवल आर्थिक विकास से नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, राजनीतिक भागीदारी, सांस्कृतिक संरक्षण और आत्मनिर्भरता से भी है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, भूमि अधिकार और महिला सशक्तिकरण जैसे क्षेत्रों में ठोस प्रयासों के माध्यम से जनजातीय समुदायों को मुख्यधारा में लाने की पहल की जा रही है। विशेष रूप से जनजातीय महिलाओं की भूमिका सामाजिक परिवर्तन और सामुदायिक नेतृत्व में उल्लेखनीय रही है।

इस शोधपत्र का उद्देश्य जनजातीय अधिकारों की वर्तमान स्थिति, लागू नीतियों की प्रभावशीलता और सशक्तिकरण की दिशा में उठाए गए कदमों का विश्लेषण करना है, ताकि एक समावेशी और न्यायपूर्ण समाज की दिशा में सार्थक योगदान दिया जा सके।

भूमिका

भारत में अंग्रेजी शासन से पहले जनजातियों को अपनी शासन प्रणाली और जीवन शैली के लिए पूरी स्वतंत्रता हासिल थी। ब्रिटिश शासन के दौरान अनुसूचित जनजातियों को उपहास के नजरिये से देखा जाने लगा और उन्हें अपने पुश्तैनी अधिकारो से वंचित करने के लिए कई कानून लाए गए। साथ ही अधिकारों की मांग करने पर उनके साथ अपराधी जैसा व्यवहार किया गया।

जनजाति (आदिवासी) अधिकारो के अद्वितीय नायक बिरसा मुण्डा ने अपने आदिवासी समुदाय को जागरूक किया और ब्रिटिश शासन एवं जमींदारों के अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठायी। सन् 1895 में उन्होंने 'उलगुलान या विद्रोह' का निर्देशन किया, जिसका उद्देश्य जनजाति समुदाय को उनकी भूमि और अधिकारों की रक्षा करना। बिरसा मुण्डा ने आदिवासी समाज मे धार्मिक और सामाजिक सुधारों की शुरुआत की साथ ही उन्होंने मुण्डा लोगों को उनकी राजनीतिक मुक्ति के लिए एकजुट किया और उनमें राष्ट्रवाद की भावना को विकसित किया।

संविधान निर्माताओं ने अनुसूचित जनजाति के अधिकारों की रक्षा के लिए भारत के संविधान मे आरक्षण का प्रावधान किया है। संविधान के अनुच्छेद 366 (25) के मुताबिक अनुसूचित जनजाति का आशय ''ऐसी जनजातियों या जनजाति समुदाय से है, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद- 342 में मान्यता दी गयी है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में जनजाति समुदाय की आबादी 10.43 करोड़ है, जो देश की कुल आबादी का 8.6% है। और देश यह जनजातीय जनसंख्या देश की सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।'' इनकी स्थिति को सुधारने के लिए सरकार ने अनेक योजनाओं की शुरुआत की, जिनका उद्देश्य जनजातीय समुदाय का समग्र सशक्तिकरण करना है।

जनजातीय अधिकारो का संवैधानिक सुरक्षा

भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजातियों को कई विशेष अधिकार दिए गए है जैसे—

- **अनुच्छेद 15(4) :** पिछड़े वर्गो के लिए (इसमें अनुसूचित जनजाति शामिल है) उन्नति का प्रावधान।
- **अनुच्छेद 29 :** अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण।
- **अनुच्छेद 46 :** "राज्य कमजोर और वंचित तबकों, विशेष तौर पर अनुसूचित जाति और जनजाति के लोगों के शैक्षणिक और आधिक हितों को बढ़ावा देगा और सामाजिक अन्याय और अन्य तरह के शोषण से उनकी रक्षा करेगा।"
- **अनुच्छेद 350 :** विशिष्ट भाषा, लिपि या संस्कृति के संरक्षण का अधिकार।
- **अनुच्छेद 275 :** अनुसूचित जनजाति को प्रशासनिक सुरक्षा को बढ़ावा देता है।
- **अनुच्छेद 330, 337, और 243 :** जनजातियों को राजनीतिक सुरक्षा प्रदान करता है, जिसमें क्रमशः लोकसभा, राज्य विधान सभाओं और पंचायतों में अनुसूचित जनजातियों के सीटों का आरक्षण देता है।

संविधान की पाँचवी और छठवीं अनुसूची में अनुसूचित जनजातीयों को क्षेत्रो और जनजातीय स्वशासन का अधिकार प्रदान करती है।

संवैधानिक प्रावधानों के अलावा, संसद ने अनुसूचित जाति और जनजाति (अत्याचार निरोधक) कानून, 1989 पास किया है। जिसका उद्देश्य अनुसूचित जाति और जनजाति के लोगों पर होने वाले अत्याचार और अपराधों को रोकना और पीड़ितों को राहत और पुनर्वास मुहैया कराना है।

राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग का गठन अनुच्छेद 338। के तहत किया गया है अतः यह एक संवैधानिक संस्था है। जो इस समुदाय के अधिकारी के संरक्षक और थिंकटैंक की तरह काम करता है।

प्रमुख जनजातीय अधिकार योजनाएं

1. वन अधिकार अधिनियम (2006) : इस अधिनियम के तहत, अनुसूचित जनजातियों और परम्परागत वन निवासी, जो वनों में पीढ़ियों से निवास कर रहे है तथा जीविका की वास्तविक आवश्यकताओं के लिये वन या वन भूमि पर निर्भर है, के वन अधिकारों एवं वन भूमि में अधिभोग को मान्यता देने और निहित करने का है।

2. एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (EMRS)

EMRS वे आवासीय विद्यालय है जो जनजातीय बहुल क्षेत्रों में स्थापित किए जाते हैं, ताकि आदिवासी समुदायों के छात्र-छाताओं को निरू शुल्क और गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा, रहने की सुविधा, और समग्र विकास मिल सके।

3. बंचित जनजातियों के लिए विशेष सहायता योजना (SCA to TsP)

a. इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास

b. रोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रम

c. जनजातीय सशक्तिकरण के क्षेत्र में सफल उराहरण

4. ट्राइफेड (TRIFED) और वन धन योजना सरकार द्वारा चलाई जा रही दो महत्वपूर्ण पहल जो जनजातीय समुदायों के आर्थिक विकास से सम्बन्धित है। TRIFED, आदिवासियों द्वारा एकत्र या उत्पादित वस्तुओं के लिए बाजार उपलब्ध कराता है जबकि वन धन योजना, जनजातीय क्षेत्रों में वन धन विकास केन्द्र (VDVK) स्थापित करने, गैर इमारती वन उत्पादों (NTFP) और अन्य उत्पादों के मूल्यवर्धन और विपणन पर केंद्रित है।

5. स्कॉलरशिप योजनाएँ

a. प्री-मैट्रिक, पोस्ट-मैट्रिक और मेरिट-कम-गीन्स स्कॉलरशिप की व्यवस्था।

b. ऊँची शिक्षा में प्रवेश को प्रोत्साहन।

जनजातीय सशक्तिकरण के क्षेत्र में सफल उदाहरण

1. ओडिशा का कोया आदिवासी आन्दोलन : कोया जनजाति द्वारा छत्तीसगढ़ और ओडिशा की सीमा पर स्थित मलकानगिरी और आसपास के क्षेत्रों ने चलाया गया। जिसमें थ्द। के अंतर्गत भूमि अधिकारों को कानूनी मान्यता मिली।

2. छत्तीसगढ़ में वन धन विकास केन्द्र

a. इसमें लघु वनोपज आधारित SHG द्वारा स्थानीय महिलाओं की आय में वृद्धि।

b. आर्थिक आत्मनिर्भरता की दिशा में प्रगति।

3. झारखण्ड में आदिवासी युवा उद्यमिता कार्यक्रम के अन्तर्गत : आदिवासी युवाओं को स्टार्टअप हेतु प्रोत्साहन और वित्तीय सहायता दी जाती है।

चुनौतियाँ और समाधान

योजनाओं के क्रियान्यवयन में बहुत सी समस्याएं सामने आती है।

जैसे–

1. योजनाओं की जानकारी का आभाव।
2. भ्रष्टाचार और बिचौलियों की भूमिका।

समाधान

1. ग्राम सभा को निर्णय लेने में सशक्त बनाना
2. मातृ भाषा में शिक्षा प्रदान करना।
3. पारदर्शी निगरानी तंत्र बनाना।
4. जनजातीय संस्कृति और ज्ञान प्रणाली का संरक्षण।

निष्कर्ष

जनजातीय सशक्तिकरण केवल आर्थिक -विकास का विषय नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक अस्मिता और समावेशी लोकतंत्र की दिशा में एक कदम है केन्द्र और राज्य सरकारो द्वारा चलायी जा रही योजनाएं यदि सही रूप से क्रियान्वित की जाएं, तो वे न केवल जनजातीय समुदाय की स्थिति में सुधार ला सकती है, बल्कि भारत के सतत विकास लक्ष्यों (SDGS) की प्राप्ति में भी सहायक सिद्ध हो सकती है।

भारत का समावेशी विकास तभी संभव है जब देश के सबसे हाशिए पर खड़े समुदायों को सशक्त, बनाया जाए और उनके अधिकारी मी रक्षा सुनिश्चित की जाए।

संदर्भ ग्रन्थ

1. मीणा, डॉ रमेश चचन्द्र-आदिवासी विमर्श (2013), राजस्थान ग्रन्थ अकादमी।
2. योजना (2022) भारत में जनजातियाँ।
3. ट्राईब (2017-2018) पत्रिका, जनजाति विधिक अधिकार विशेषांक, माणिक्य लाल वर्मा जाति शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान अशोक नगर, उदयक (राजस्थान)।
4. सिंह, डॉ. आरती, बिरहोर महिलाएँ और बदलता परिवेश।
5. https://tribal.nic.in act Rules/Prevention of Atricities.pdf

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

A Study on Recruitment and Selection Process of ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd.

Isha Katiyare
Assistant Professor
(DR. CV. RAMAN UNIVERSITY KHANDWA) M.P
EMAIL: ishakatiyare@gmail.co
Mobile no-7000923975

Abstract

This research paper examines ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd.'s recruitment and selection process using the Likert Scale methodology. It evaluates its effectiveness, fairness, transparency, and stakeholder satisfaction. The study integrates qualitative and quantitative methods, providing insights into the company's talent acquisition practices and identifying strengths and weaknesses.

The recruitment and selection process is a critical function within organizations, serving as the gateway for acquiring talent that aligns with the company's goals and culture. This thesis report delves into a comprehensive analysis of the recruitment and selection practices employed by ICICI Prudential Life Insurance Private Limited, a leading player in the insurance sector.

The primary objective of this study is to examine the effectiveness and efficiency of ICICI Prudential's recruitment and selection process in attracting, assessing, and on boarding suitable candidates. Through a combination of qualitative and quantitative research methods, including interviews, surveys, and data analysis, this research aims to provide valuable insights into the strategies, challenges, and outcomes associated with the company's talent acquisition practices.

Key areas of investigation include the identification of recruitment channels utilized by ICICI Prudential, the evaluation criteria employed during the selection process, the role of technology in streamlining recruitment operations, and the impact of organizational culture on attracting and retaining top talent.

Furthermore, this study seeks to identify areas for improvement and propose recommendations for enhancing the effectiveness of ICICI Prudential's recruitment and selection process, thereby contributing to the company's overall talent management strategy and competitive advantage in the marketplace.

By offering a detailed examination of the recruitment and selection practices within ICICI Prudential Life Insurance Private Limited, this thesis report aims to provide valuable insights for HR practitioners, academics, and industry professionals interested in optimizing talent acquisition processes within the insurance sector and beyond.

Key words: ICICI Prudential Life Insurance, Recruitment process, Selection process, Insurance Industry

Introduction

This research paper explores the recruitment and selection practices of ICICI Prudential Life Insurance Private Limited, a leading player in the insurance sector. The study aims to understand the intricate mechanisms employed by the organization to identify, attract, and nurture top-tier talent. It delves into the company's operational framework, revealing its internal dynamics and extracting valuable insights that can inform best practices within the broader insurance industry.

The research acknowledges the multifaceted challenges inherent in recruitment and selection, particularly within the insurance sector. It seeks to uncover the underlying strategies and innovative approaches that underpin the company's recruitment and selection paradigm. The paper also evaluates the effectiveness of ICICI Prudential Life Insurance Private Limited's recruitment and selection processes in light of contemporary industry standards and global trends. Through a meticulous examination of key performance indicators and comparative analysis with industry benchmarks, the study provides a nuanced assessment of the organization's competitive positioning in the talent acquisition landscape.

The exploration transcends theoretical discourse to embrace real-world perspectives and empirical evidence. By leveraging qualitative and quantitative research methodologies, including interviews, surveys, and data analytics, the study aims to capture the candid experiences and perceptions of key stakeholders involved in the recruitment and selection processes within ICICI Prudential Life Insurance Private Limited. Such insights enrich the academic discourse and offer actionable recommendations for enhancing organizational effectiveness and driving sustainable growth.

In conclusion, this research paper serves as a testament to the pivotal role of recruitment and selection in shaping organizations' trajectory within the insurance sector.Recruitment and selection are crucial for organizational success and sustainability. ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd., a leading player in India's insurance sector, emphasizes acquiring and retaining top talent to maintain its competitive edge. This paper explores the company's recruitment and selection process using the Likert Scale.

Human resources are crucial for organizational success and efficiency. The hiring process starts with human resource planning (HRP), which determines the organization's staffing needs. Job analysis and design define roles and qualifications. Recruitment attracts applicants, while selection focuses on the most qualified candidates. The selection process impacts performance and minimizes costs. ICICI Prudential Life Insurance Company, India's leading private life insurer, exemplifies these processes. Its selection process includes preliminary interviews, application screening, tests, interviews, reference checks, and medical examinations. A robust recruitment and selection strategy aligns with organizational goals, reduces turnover rates, and enhances performance.

This study explores the recruitment and selection practices of ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd., a leading private life insurer in India, to provide a comprehensive understanding of its approach to talent acquisition. The research examines recruitment strategies, including sourcing channels, branding initiatives, and outreach programs, as well as selection methodologies, including assessment techniques, interview processes, and candidate evaluation criteria. It also aims to uncover the

challenges and opportunities encountered by ICICI Prudential in its recruitment and selection endeavors, such as navigating talent shortages, skill mismatches, and addressing diversity and inclusion imperatives.

The study aims to offer actionable insights and recommendations that can inform and enhance recruitment and selection practices not only within ICICI Prudential but also across the broader insurance industry. By synthesizing empirical data, industry benchmarks, and best practices, the study aims to equip organizational leaders, HR practitioners, and policymakers with the knowledge and tools necessary to optimize recruitment and selection processes, drive organizational performance, and foster sustainable growth in an increasingly competitive and dynamic environment.

In essence, this research endeavor seeks to unravel the intricacies of recruitment and selection within ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd., shedding light on the organization's strategies, challenges, and outcomes, while also offering valuable insights and implications for practitioners and scholars alike. Through a holistic examination of recruitment and selection practices, this study aims to advance our understanding of talent management in the insurance sector and pave the way for future research and innovation in this critical domain.

Review of literature

1. According to Ta her et al. (2000)

Taher et al. (2000) conducted a study to evaluate the value-added and non-value activities in the recruitment and selection process, focusing on strategic manpower planning, training and development programs, performance appraisal, reward systems, and industrial relations. They emphasized the importance of efficient HR planning for organizational success, which naturally flows into employee recruitment and selection.

2. According to work by Alan price (2007)

Alan Price (2007) defines recruitment and selection as the process of attracting suitable employment applications, requiring management decision making and planning. Ambika Verma (2009) found that most organizations use technology-based recruitment and selection tools to enhance efficiency, reduce costs, and expand the applicant pool.

3. Jacob Thomas shijithkumar K: Marketing of insurance product in met life (2006)

The study by Jacobs Thomas Shijithkumar K examines Met life's marketing of insurance products in Thrissur, Kerala. Data from 209 advisors was collected through observation and interviews. Results showed that active advisors preferred products like 'Suvidha' for customer-friendliness, 'Met Ultimate' and 'Met Smart' for withdrawal and fund options, 'Met Smaksha' for low charges, and 'Met Bhavishya' for being a children's plan.

4. Singh, Gaurav, Prakash, Ajai: Recruitment among private sector (2012)

In India, life insurance is a sales-driven product, with insurance advisors playing a crucial role in identifying potential customers' needs and selling insurance products. However, field experiments show that agents often recommend unsuitable products with high commissions, catering to uninformed consumers' beliefs. Regulatory interventions, such as commission disclosure requirements, have led to agents recommending alternative high-commission products without disclosure requirements.

Market competition has also led to agents in more competitive environments recommending suitable products. Overall, insurance advisors play a crucial role in establishing long-term customer relationships and enhancing retention rates.

5. Jain CA. Sarika: Financial inclusion (2014)

Financial inclusion in India aims to provide affordable financial services to disadvantaged and low-income groups, including banking, credit, advice, and outreach. Key products include zero-balance savings accounts, micro credit, and micro-insurance. This paper reviews India's progress in financial inclusion and highlights achievements in the banking sector, highlighting the importance of bringing unbanked populations into the formal financial system.

6. Manthan: Journal of commerce and management (2018)

The article discusses the low penetration and density of life insurance in India, highlighting the need for further research on the life insurance industry. It reviews data on the foreign and Indian life insurance industry, revealing a difference in perspective on international business compared to Indian research. The article also examines phenomena such as information asymmetry, heuristics, and biases, emphasizing the need for further detailed study on the life insurance industry.

Objectives of study

1. To understand the internal recruitment processes of ICICI Prudential life insurance.
2. To identify areas where there can be scope for improvement & give suitable recommendation to streamline the hiring process.
3. To analyze the impact of recruitment and selection practices on employee retention and performance.
4. To evaluate the consistency and fairness of the selection process in ICICI life prudential.

Hypothesis have been developed

Null Hypothesis (H0): There is no significant difference in the effectiveness of the recruitment and selection process at ICICI Prudential Life Insurance compared to industry standards.

Alternative Hypothesis (H1): The recruitment and selection process at ICICI Prudential Life Insurance is more effective than industry standards.

Research Methodology

The study uses a mixed-methods research design, combining qualitative and quantitative data collection methods. It involves semi-structured interviews with HR professionals, hiring managers, and newly recruited employees to understand their perceptions of the recruitment process. Quantitative data is collected using a Likert Scale questionnaire to measure employee satisfaction and perceived effectiveness of recruitment methods.

Descriptive Research

Descriptive research involves systematically observing, documenting, and analyzing phenomena as they naturally occur. It aims to provide a detailed description or portrayal of a situation, event, or

phenomenon without manipulating variables or attempting to establish cause-and-effect relationships. Instead, descriptive research focuses on answering "what," "who," "when," "where," and "how" questions to gain a comprehensive understanding of the subject under study. This type of research often utilizes surveys, interviews, observations, and existing data to collect information, which is then analyzed using statistical methods or qualitative techniques to summarize and interpret findings. Descriptive research is valuable for providing insights into characteristics, behaviors, patterns, and trends within a specific context, serving as a foundation for further research or informing decision-making processes.

Sample design:

Sample area: Data has been collected from Indore

Sampling Size: 70 to 100

Sampling method used: convincing sampling method

Research instrument: Questionnaire

Collection of the data

- **Gathered Primary and Secondary Data.**

Primary Data: Data was collected through a questionnaire. Primary data plays an important role when research is being carried out for the first time. This is the data, which is collected after interacting with people using interviews and questionnaire forms. Primary data is inferred by statistical analysis and has a clear and precise structure.

Secondary Data: Secondary data are those which have already been collected by someone else and which already had been passed through the statistical process. The secondary data was collected through websites, internet books and magazines.

Results and Analysis

The recruitment and selection process at ICICI Prudential Life Insurance is analyzed based on data collected from various demographics. The majority of respondents are female, indicating a potential higher interest in the study. The largest age group is 21-35, suggesting a predominantly younger workforce, while older age groups also represent diversity. The largest occupational group is students, followed by employed individuals and retirees. Most respondents fall within middle-income brackets, which could impact their perceptions and experiences regarding recruitment and selection processes.

Convenience in recruitment is a significant concern for respondents. There is a consensus among respondents about the importance of improving the current hiring process, highlighting potential areas for enhancement. Employee retention and performance are generally perceived to be positively impacted by recruitment and selection practices. However, there is some disagreement, indicating room for improvement.

Consistency and fairness in the selection process are also a concern, with some respondents expressing concerns about consistency and bias. Transparency and equal opportunity are also areas for improvement in communication and fairness. Respondents' responses to prompt feedback and overall

satisfaction suggest areas for refinement to enhance candidate experience and satisfaction levels.

Conclusion

This research paper provides a detailed analysis of the recruitment and selection process at ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd, integrating qualitative and quantitative methodologies, including the Likert Scale, to understand stakeholders' perceptions and experiences, identifying strengths and areas for improvement, contributing to the ongoing dialogue on effective talent acquisition strategies in the insurance industry.

In conclusion, the recruitment and selection process of ICICI Prudential Life Insurance Private Limited plays a critical role in acquiring and retaining top talent to drive organizational success. Through an analysis of the current process, it is evident that there are opportunities for improvement to enhance efficiency, effectiveness, and candidate experience.

By implementing the recommended strategies, ICICI Prudential can optimize its recruitment and selection process to attract, select, and retain the best-fit candidates for its workforce. By prioritizing candidate experience, diversifying sourcing channels, providing training for hiring managers, developing a talent pipeline, and leveraging technology, ICICI Prudential can strengthen its competitive advantage in the insurance industry and position itself as an employer of choice.

Future Scope of the study

1.Demographic Insights

The study provides valuable insights into the gender, age, occupation, and income distribution of respondents, offering a comprehensive understanding of the target population.

2.Perceptions of Recruitment Process

It examines respondents' perceptions regarding various aspects of the recruitment and selection processes at ICICI Prudential Life Insurance, including transparency, fairness, equal opportunity, information adequacy, and satisfaction levels.

3.Impact on Employee Retention and Performance

The study investigates the perceived impact of recruitment and selection practices on employee retention and performance, shedding light on their effectiveness from the perspective of respondents

References

1. Singh, J. and Kaur, G. (2011), "Customer satisfaction and universal banks: an empirical study", *International Journal of Commerce and Management*, Vol. 21 No. 4, pp. 327-348. https://doi.org/10.1108/10569211111189356
2. Publication Amity Global Business Review, 2012, Vol 7, p30 ,ISSN ,0975-511X ,Publication type ,Academic Journal ,Title Their Recruitment among the Private Life Insurance Sector in India. Authors ,Singh, Gaurav; Prakash, Ajai.
3. Hegde, Shantaram P. and Seth, Rama and M, Durga Prasad and Vishwanath, S.R., Strategic Allocation to Institutional Investors, Underpricing and the After Market Performance of IPOs (January 29, 2016). Asian Finance Association (AsianFA) 2016 Conference, Available at SSRN: https://ssrn.com/abstract=2724450

4. Motwani, Dharmesh, Internet Banking, Consumer Adoption & Satisfaction: A Study of Udaipur Region (May 6, 2014). Asian Journal of Research in Banking and Finance, Volume 2, Issue 10 (October, 2012), Available at SSRN: **https://ssrn.com/abstract=2433386**
5. **Journal: Management Dynamics in the Knowledge Economy Issue Year:** 3/2015 , **Issue No:** 3, **Page Range:** 533-551 ,**Page Count:** 19 ,**Language:** English
6. Jain, S. and Nair, S.K. (2021), "Integrating work–family conflict and enrichment: understanding the moderating role of demographic variables", *International Journal of Organizational Analysis*, Vol. 29 No. 5, pp. 1172-1198. https://doi.org/10.1108/IJOA-07-2020-2330
7. Khandare, R.B. & Sonwane, S.S. Library and information science e-Journals accessible under N-LIST consortium., 2017, 7(2), 8-15.
8. Kavithanjali, J. E – Resources : Their importance , Types Issues and challenges : An analysis, 2019, 6(1), 775-778.
9. Trimukhe, D.S. An analytical study of awareness of the e-resources and its uses in the educational institutes. 2019, 7(2), 121-129. 3. Soni, N.K.; Gupta, K.K. & Shrivastava J.
10. Gwalior : A survey., 2018; 38(1), 56-62. 4. Pandey, S.S. Impact of the services of INFLIBNET in the Uttar Pradesh University libraries : A study., 2018, 4(1), 1-11.
11. (2022), "Prelims", Sood, K., Balusamy, B., Grima, S. and Marano, P. (Ed.) *Big Data Analytics in the Insurance Market* (*Emerald Studies in Finance, Insurance, and Risk Management*), Emerald Publishing Limited, Leeds, pp. i-xix. https://doi.org/10.1108/978-1-80262-637-720221019.
12. Review of Finance & Banking, 2023, Vol 15, Issue 1, p65 ISSN , 2067-2713 ,Publication type ,Academic Journal ,DOI 10.24818/rfb.15.01.06

नाटक के सैद्धांतिक प्रतिमान : एक विश्लेषण

तहरीम फातमा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुज़फ्फरपुर

नाटक का साहित्य और रंगमंच के साथ क्या संबंध है या भिन्नता है? इस प्रश्न पर विमर्श किये बिना हम नाट्य-प्रतिमानों का निर्धारण नहीं कर सकते। शायद विवाद का मूल बिन्दु भी यही है। संस्कृत साहित्य में भी इस पर विवाद रहा है। "भरत मुनि ने 'नाट्यशास्त्र' में नाटककार, अभिनेता और सामाजिक में से प्रत्येक का दूसरे की कला से परिचित होना अनिवार्य माना है। इन तीनों को नाट्य प्रदर्शन का अंग मानकर उन्हें दृष्टि में रख कर ही 'नाट्यशास्त्र' में दृश्यकाव्य का विवेचन किया था। उन्होंने तीनों को समान महत्व दिया था।"[1]

भूमिका

नाट्य रचना में साहित्यिकता और अभिनेता दोनों का समकोटी का मिश्रण आचार्य भरत का अभिष्ट था। उनकी दृष्टि में कवि और अभिनेता अभिन्न हृदय हैं। दोनों की प्रतिभा से नाट्य-कला का विकास होता है। लेकिन बाद में प्रश्न उठा कि कवि और अभिनेता में किसका महत्व अधिक है। "आचार्य भोज ने अभिनेता से अधिक कवि को महत्व दिया। उन्होंने कहा 'अभिनेतभ्यः कवीमेव बहु मन्यामहे'। अर्थात् कवि के रचना के अनुसार अभिनय करना अभिनेता का कर्तव्य है न कि अभिनयशाला के आदेश पर रचना करना कवि का धर्म है।"[2] यहीं से कवि की महत्ता स्थापित होती गई और कालान्तर में दोनों एक दूसरे से पृथक होते गये। हिन्दी में सर्वप्रथम भारतेन्दु ने नाट्य रचना और अभिनय कला को संयुक्त किया, लेकिन बाद में यह अन्तर बना रहा।

आचार्य शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में लिखा कि, "विलक्षण बात यह है कि आधुनिक गद्य परम्परा का प्रवर्तन नाटकों से हुआ।"[3] जाहिर है साहित्य और रचनात्मक नाटक का गहरा संबंध है। साहित्य रूप होने के नाते रचनात्मक दृष्टि से किसी भी नाट्यकृति का एक स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है और यह भी जरूरी नहीं कि वह मंचीय दृष्टि से सफल भी हो। भारतेन्दु के बाद से नाट्यकृतियों के मूल्यांकन साहित्यिक प्रतिमानों के आधार पर किये गये। इस समय के मूल्यांकन के नाम पर प्रस्तुत अधिकांश आलोचनाएँ या तो इतिवृत्तात्मक रहीं या फिर काव्यलोचन मात्र।

डॉ. दशरथ ओझा के 'हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास' में तथा बच्चन सिंह के 'हिन्दी नाटक' में इस काव्यालोचनात्मक इतिवृत्त के दर्शन होते हैं। और भी कई ग्रन्थों के नाम लिये जा सकते है। इसी तरह अध्यापकीय आलोचनात्मक शैली भी दिखाई देती है, जिसमें नाटक के तत्वों के आधार पर नाटकों का मूल्यांकन प्रस्तुत की जाती रही है। उदाहरण के तौर पर डॉ. जगन्नाथ शर्मा द्वारा प्रस्तुत 'प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन' इसी कोटि का मूल्यांकन है। बाद में काफी आलोचकों ने साहित्यिक प्रतिमानों का प्रयोग मूल्यांकन के लिए किया और रंगमंचीय प्रतिमान या तो उपेक्षित कर दिये या अधिक महत्व नहीं दिये। दूसरी तरफ रंगमंचीय आलोचकों का एक धड़ा ऐसा रहा है जिसने निरा रंगमंचीय प्रतिमानों से ही नाटक का

मूल्यांकन किया या साहित्यिक प्रतिमानों को अधिक महत्व नहीं दिया।

डॉ. दशरथ ओझा ने लिखा है, "अभिनय कला से अभिज्ञ आलोचकों का उद्घोष है कि नाटक रंगमंच के लिए ही है। जो कृति रंगमंच पर सफल नहीं वह चाहे सिद्धान्त की दृष्टि से कितनी ही उच्च हो, पर वह नाट्य क्षेत्र से बहिष्कृत होने योग्य है।"[4] इस प्रकार नाट्य मूल्यांकन के दो रूप सामने आते हैं। एक नाट्य मूल्यांकन में नाट्य कृति की सर्जनात्मक धरातल पर किया गया मूल्यांकन मिलता है तो दूसरी में नाटक के प्रस्तुति पक्ष का मूल्यांकन होता है।

अब प्रश्न उठता है कि क्या नाट्यरचना केवल साहित्यिक ही है, अगर साहित्यिक विधा ही है तो रंगमंच को ध्यान में रखकर नाटककार क्यों नाट्य रचना करता है? नाटककार सृजन के क्षणों में अपने कथ्य योजना और उसकी रंगमंचीय प्रस्तुति की उपयोगिता पर एक साथ सोचता है। कारण साफ है, बिना रंगमंचीयता के नाटक अधूरा है। नेमिचंद्र जैन ने लिखा है, "नाटक शब्दबद्ध होने पर भी निरा साहित्य नहीं है और भी बहुत कुछ है।"5 जो उसके अपने हैं, विशिष्ट हैं, जो सब एक साथ अन्य किसी कलात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम में नहीं होते।निश्चित ही नाटक में नाटककार के अतिरिक्त अभिनेता, निर्देशक, रंगशिल्पी तथा समूह रूप में उपस्थित दर्शक वर्ग आदि ऐसे तत्व मौजूद हैं जो अन्य किसी कला के रूप में नहीं होते। इसीलिए नाटक का सही मूल्यांकन इतने सब तत्वों को एक साथ परीक्षा किए बिना संभव नहीं है। सुरेश अवस्थी भी लिखते हैं, "नाटक के साहित्यिक अंश पर आग्रह करने वाले यह भूल जाते हैं कि उसका रूप और उसकी प्रेषणीयता कई अन्य कलाओं के तत्वों से प्रभावित और नियंत्रित होती है। इसमें सबसे प्रधान अभिनेता की कला है। अभिनेता केवल अनुकर्ता और व्याख्याता ही नहीं है, उसकी कला-सृजनधर्मा है। उसमें बार-बार नारकीय चरित्र नया जन्म लेता है, बहुत बार उसके माध्यम से चरित्र नाटककार द्वारा कल्पित चरित्र से भिन्न भी हो जाता है। अभिनेता नाटक के कथा दृश्यों और पात्रों का जिस प्रकार साक्षात्कार करता है, वैसा अन्य किसी साहित्यिक कृति में संभव नहीं है।"[6] इस सम्बन्ध में सत्यव्रत सिन्हा ने भी लिखा है-, "नाटक की केवल साहित्यिक मानदण्डों द्वारा समीक्षा नाटक की अधूरी समीक्षा है।"[7] रंगमंच ओर प्रदर्शन की रूढ़ियाँ, रंग सज्जा, प्रकाश-व्यवस्था तथा संगीत और नृत्य आदि अनेक कलाओं के तत्व और कला-रूढ़ियाँ, नाटक की मूल वस्तु, साहित्यिक अंश, सभी प्रेषणीयता का रूप अनुशासित भी करती है और विशिष्ट भी बनाती है। इसलिये नाटक के मूल्यांकन के लिए जब तक समग्रता से नहीं देखा जायेगा, तब तक उचित मूल्यांकन नहीं हो सकता। उपरोक्त आलोचकों की तरह मोहन राकेश भी मानते हैं - नाटक अपने में पूर्ण नहीं होता। रंगमंच की पृष्ठभूमि और पात्रों का अभिनय उसे पूर्णता प्रदान करते हैं। एक कृति के रूप में "नाटक तभी सफलता प्राप्त कर सकता है जबकि उसमें रंगमंच पर अभिनीत होने की संभावना निहित हो।"[8] इन सभी आलोचकों ने नाटक के साहित्यिक मूल्यांकन के साथ रंगमंचीय मूल्यांकन की भी मांग की है। जब कृति (नाट्य) बिना रंगमंच के अधूरी है तब उसका मूल्यांकन भी बिना रंगमंच के अधूरा ही होगा।

जिस प्रकार किसी नाट्यकृति की सफलता उसके रंगमंच में है उसी प्रकार बिना साहित्यिकता के भी कोई नाटक पूर्ण नहीं हो सकता। ऐसे बहुत से नाट्यकृतियों को आप देख सकते हैं जो नाट्यमंचन की दृष्टि से बहुत ही लोकप्रिय रही हैं लेकिन फिर भी किसी प्रकार के उच्च साहित्यिक मूल्यों से वे एकदम शून्य हों। रमेश मेहता के नाटक अपने समय में बहुत मंचित हुए। बेशक उनका मंचन बार-बार हुआ लेकिन आलेख रूप में वे निहायत ही सपाट, एकांगी और किसी भी प्रकार के मानवीय संबंध के गहराई से शून्य हैं। इस प्रकार के नाटकों का मूल्यांकन अगर किया जाय तो साहित्यिक दृष्टि से घटिया ओर मंचन दृष्टि से अच्छा नाटक होगा। नेमिचंद्र जैन ने लिखा है, "नाटक को निरा साहित्यिक मानना जितना भ्रामक सिद्ध होता है उतना ही उसे निरा रंगमंच मानना भी।"[9] बहुत सी नाट्य कृतियाँ ऐसी भी हैं जो साहित्यिक और रंगमंचीय दोनों दृष्टियों से कमजोर हैं, कुछ ऐसी भी है जो दोनों दृष्टियों से महान हैं। जाहिर है जब तक हम इनका समग्रता से मूल्यांकन करने के लिए प्रतिमान नहीं बनाएंगे, तब तक नाटकों का सही मूल्यांकन नहीं हो सकता। नाटक को बाँट कर देखने के कारण ही यह पूरा विवाद उत्पन्न हुआ है। कोई इसको निरा साहित्यिक मानत और कोई निरा रंगमंचीय। जब तक नाट्यकृति, नाटककार तथा रंगमंचीय उपादानों को मिला कर समग्रता के साथ मूल्यांकन नहीं किया जाता तब तक वह नाटक का मूल्यांकन नहीं होगा।

नाटककार और आलोचक मोहन राकेश नाट्य रचना और नाट्य प्रस्तुति को प्रक्रिया के स्तर पर अलगाते हैं। राकेश की दृष्टि में, "नाट्य रचना, नाटककार के अकेले कमरे और व्यक्तित्व की प्रक्रिया है जबकि नाट्य प्रस्तुति प्रस्तोता के व्यक्तित्व की विभिन्न अंतः प्रक्रियाओं से गुजरकर सामूहिक दृश्य प्रस्तुत करती है।"[10] जहां तक राकेश जी की स्थापना का प्रश्न है, यह कहा जा सकता है कि बन्द कमरे में बैठा नाटककार रंगमंच और दर्शकों की सीमा को भूलकर नाटक नहीं लिख सकता। अगर लिखता है तो उसे फिर अपने नाटक में वैसा ही संशोधन करना पड़ता है जैसे राकेश जी को स्वयं करना पड़ा था।राकेश जी की स्थापना के अनुसार प्रस्तुति की आलोचना अलग हो जाती है और नाट्यकृति की सर्जनात्मक आलोचना अलग। इससे एक संभावना जरूर उभरती है कि दोनों ही शैलियाँ स्वतंत्र रूप से विकसित होकर रंगालोचन की एक विराट स्वरूप निर्मित करेंगी। बहुत से आलोचक ऐसे हुए जो नाटक का मूल्यांकन दो भागों में बांटकर लिये (1) नाट्यकृति का तथा (2) नाट्यमंचन का। किसी नाटक के मूल्यांकन के लिए किसी नाटककार द्वारा रचित नाट्यकथा के किसी नाट्य प्रयोग द्वारा मंचीय प्रस्तुति तक के समस्त व्यापार की एक अन्तः प्रक्रिया के रूप में नाटक को स्वीकार करना होगा। और नाट्य रचना तथा नाट्य प्रस्तुति को अलग करके नहीं देखा जा सकता है। नाटक का मूल्यांकन हमेशा दो दृष्टियों से किया जाना चाहिए-नाटय रचना की दृष्टि से और नाट्य प्रयोग की दृष्टि से। इस प्रकार नाट्य-मूल्यांकन का रूप और आकार एक ही रहेगा लेकिन इस प्रकार के नाट्य मूल्यांकन में दृष्टि दो काम कर रही होगी।

निष्कर्ष

प्रश्न उठता है कि नाट्य मूल्यांकन के लिए एक दृष्टि का प्रयोग क्यों न किया जाय, इसे अलग-अलग खानों में बांट कर क्यों किया जाय। नेमिचंद्र जैन ने लिखा है- "नाटक का मूल्यांकन साहित्यिकता ओर अभिनेयता और मंचोपयुक्तता के अलग-अलग खानों में बांट कर नहीं हो सकता। नाटक श्रेष्ठ तभी हो सकता है जब वह अन्य कलात्मक-सृजनात्मक अभिव्यक्तियों की भांति, किसी न किसी तीव्र और गहरी और महत्वपूर्ण अनुभूति, भाव, विचार, जीवनदृष्टि या परिस्थिति को प्रस्तुत करता हो।"[11]

यदि नाटक कोई सार्थक, विशेष ओर मूलभूत बात नहीं कहता है तो वह चाहे जितना अभिनेय या 'साहित्यिक' हो उसका कोई कलात्मक महत्व नहीं है। डॉ. निर्मला जैन भी इस मत को स्वीकार करते हुए कहती हैं, "नाट्य समीक्षा के रूप में जिन नाटकों की पुस्तक समीक्षा लिखी जाय उनमें नाटक के काव्य रूप एवं प्रस्तुति पक्ष दोनों को सम्मिलित किया जाय।"[12] जब-तब दोनों पक्षों को मिलाकर मूल्यांकन नहीं किया जायेगा तब तक वह 'नाटक' का मूल्यांकन नहीं होगा।नाटक की साहित्यिकता और रंगमंचीयता का अलग-अलग मूल्यांकन संभव भी है और उचित भी है लेकिन यह नाटक का मूल्यांकन नहीं होगा। नाटक के एक विशेष पक्ष का मूल्यांकन होगा। किसी भी नाटक की कोई अन्तिम मूल्यांकन संभव भी नहीं है, क्योंकि नाटक के हर मंचन पर उसके मूल्य बदलते रहेंगे। इस संबंध में देवेन्द्र नाथ अंकुर का आग्रह है कि "आज जरूरत इस बात की है कि ऐसे प्रतिमान का विकास किया जाय, जो एक साथ नाटक के साहित्यिक एवं रंगमंचीय पक्ष को उजागर करने की कोशिश करें।"[13] बिना इस प्रतिमान के नाटक का मूल्यांकन नहीं हो सकता। यह तभी संभव है जब तक नये 'नाट्यशास्त्र' की रचना हो। इस प्रतिमान के अनुपस्थिति में हमें नाटक को दो भागों में बांट कर मूल्यांकन करने का ही विकल्प रह जायेगा। अतः नाटक के मूल्यांकन के लिए न तो साहित्यिक प्रतिमान उपयुक्त होगा और न ही रंगमंचीय प्रतिमान। बल्कि दोनों ही प्रतिमानों के माध्यम से नाट्य समीक्षा की सीमाएं ही उजागर होती है।

संदर्भ

1. ओझा, दशरथ, रूपक और परिवर्तित प्रतिमान, नटरंग पत्रिका, वर्ष -1987, अंक 3. सं. नेमिचंद्र जैन, पृष्ठ 21
2. वही, पृष्ठ 21

3. शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र , हिन्दी साहित्य का इतिहास, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 393
5. अवस्थी, सुरेश,नाट्य समीक्षा स्वरूप और मूल्यों का अंतर्विरोध, नटरंग वर्ष, 1988, अंक 5
6. जैन, नेमिचंद्र संपादकीय, नटरंग पत्रिका, अंक 3
7. सिन्हा, सत्यव्रत, रंगमंच ही नाटक का निकष, नटरंग पत्रिका, अंक 3, वर्ष -1987 सं. नेमिचंद जैन, पृष्ठ 15
8. राकेश, मोहन, साहित्य और संस्कृति, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ 86
9. नेमिचन्द्र जैन, संपादकीय, नटरंग पत्रिका, वर्ष -1987 अंक 3
10. नटरंग (त्रै.), नई दिल्ली, मोहन राकेश स्मृति अंक में मोहन राकेश का लेख, 1991,पृष्ठ 13
11. जैन, नेमिचंद्र, संपादकीय, नटरंग पत्रिका, वर्ष 1987, अंक 3
12. जैन, डॉ. निर्मला, हिन्दी आलोचना 20वीं शताब्दी, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृष्ठ 84
13. अंकुर, देवेन्द्र राज, साहित्य रंगमंच और आलोचना, राजकमल प्रकाशन, 2007, पृष्ठ 21

भारतीय पुनर्जागरण में आर्य समाज की भूमिका

शैलेश कुमार
शोधार्थी- इतिहास-विभाग
महामाया राजकीय महाविद्यालय - श्रावस्ती

डॉ. दिलीप कुमार
शोध निर्देशक - सहायक आचार्य
राजकीय महाविद्यालय बाराखल मेहदावल

शोध सारांश

समाज सुधार के क्षेत्र में आर्य समाज ने अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया। इसने भारतीय पुनर्जागरण को लाने हेतु वैदिक परंपरा की नींव रखी, यही नहीं बल्कि ''वेदों के तरफ लौटो'' का नारा दिया। भारतीय समाज में जात-पात, बाल-विवाह, सती-प्रथा एवं छूआछूत का खुलकर विरोध किया। विधवा-विवाह एवं स्त्री शिक्षा के प्रचार प्रसार के लिये एक ठोस तथा गम्भीर प्रयास किया गया।आर्य समाज ने भारतीय जन-मानसमें जागरण एवं चेतना लाने हेतु व्यापक रूप से स्कूलों एवं कालेजों की नींव रखी गयी, जिसमें दयानंद-एंग्लो-वैदिक-कॉलेज एक था। जिसकी स्थापना 1886 ई. में लाला हंसराज ने लाहौर में की थी। आर्य समाज ने वेदों के अध्ययन-अध्यापन के लिये अनेक महत्वपूर्ण संस्थाओं को स्थापित किया। आर्य-समाज ने भारतीय पुनर्जागरण के अन्तर्गत ही 'शुद्धिकरण' आंदोलन चलाया जिसे हिन्दू धर्म में उन व्यक्तियों के पुनः प्रवेश के लिए (जो इसाई एवं मुसलमान बना दिये गये थें) आंदोलन छेड़ दिया था। आर्य-समाजआंदोलन पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात में अत्यंत ही लोकप्रिय रहा। आर्य समाज के सिद्धान्तों एवं उद्देश्यों में प्राचीन भारतीय संस्कृति के प्रति गौरव की भावना पर जोर दिया गया। हिन्दू समाज को सभी प्रकार के सामाजिक, धार्मिक, अंधविश्वासों एवं कुरीतियों से मुक्ति दिलाने और भारतीय समाज को शक्तिशाली, संगठित एवं एकता के सूत्र में पिरोने हेतु भारतीय पुनर्जाजरण द्वारा आर्य समाज ने एक नूतन आधुनिक भारत की आधारशिला का निर्माण किया।

मूल शब्द : शुद्धिकरण, पुनरावृत्ति, मनीषी, बहुदेववाद, विकृत्तियाँ, अविचलित, संदिग्ध, सार्वदेशिक, गौरवबोध, विवादात्मक, गोवधः कुसंस्कार, साच्चिदानन्द, निराकार, निर्विकार, अनादि, अनुपम, अजन्मा, उद्यत, यथायोग्य, सर्वहितकारी, अनाथालय, इत्यादि।

प्रस्तावना

19वीं शताब्दी के धर्म-सुधार आन्दोलनने भारतीय राष्ट्रीय जन-जागरण की आधारशिला रखी। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, आत्माराम पाण्डुरंग, महादेव गोविन्द रानाडे तथा श्रीमती एनी विसेंट जैसे महान धर्म सुधारकों ने धर्म सुधार के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना को जन्म दिया।[1] भारतीय पुनरूद्वार अथवा पुनर्जागरण आंदोलन भारत की एक महान घटना है। सदी के आरम्भ तक भारतीय पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित हो गयी थी भारतीय अंग्रेजी भाषा, वेश-भूषा, साहित्य और ज्ञान को श्रेष्ठ मानने लगे थे। शिक्षित भारतीय अपने सभ्यता संस्कृति के प्रति विश्वास को खो रहे थे। उस अवसर पर भारतीय सभ्यता में अनेक कारणों से एक नवीन चेतना आयी जिसने एक नूतन मत को जन्म दिया। भारतीय समाज धर्म साहित्य एवं राजनीतिक जीवन को पूरी तरह से प्रभावित किया। भारत में इस चेतना, भावना, और इससे प्रभावित

अनेक प्रयासों को हम भारतीय पुनरूद्धार आंदोलन के नाम से पुकारते हैं।[2]

जिस विचार से बंगाल और महाराष्ट्र के हिन्दुओं, उत्तर भारत के मुसलमानों और पश्चिम भारत के पारसियों तथा अन्य में धार्मिक तथा समाज सुधार के आन्दोलन प्रारम्भ हुए।[3] इससे सम्पूर्ण देश के लोगों और समस्त जन-मानस में सामाजिक जागृति पैदा हुई थी।[4]

यद्यपि ब्रह्म समाज ने हिन्दू धर्म और समाज-सुधार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया, लेकिन फिर भी ब्रह्म समाज आंदोलन केवल रक्षात्मक था। ईसाई धर्म और पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित होकर इसने हिन्दू धर्म और समाज की कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया था। हिन्दू धर्म और समाज को एक उग्र और साहसी समर्थनकी जरूरत थी इस आवश्यकता की पूर्ति आर्य समाज ने की।[5]

भारत के सामाजिक सुधार के इतिहास में आर्य समाज का विशेष स्थान है। वास्तव में भारत के सभी सुधार संस्थानों में आर्य समाज अधिकाधिक लोकप्रिय हुआ। भारतीय संस्कृति एवं विचारों को उत्तम दर्शाने के लिए इसे सबसे अधिक शक्तिशाली आंदोलन कहा जाएगा।[6] आर्य समाज की स्थापना स्वामी दयानंद सरस्वती ने 1875 ई. में मुंबई में की थी। इस आंदोलन के उदय में पश्चिमी संपर्क कहां तक सहायक था,यह बात कहना मुश्किल है। इस समाज का स्वरूप भी अन्य सुधार आंदोलनों से अलग था। जो भी हो निरंतरता एवं प्रभाव की ही दृष्टि से आंदोलन अपने समय में और आंदोलन की अपेक्षा ज्यादा लोकप्रिय था।[7] स्वामी दयानंद सरस्वती का जन्म 1824 ई. में गुजरात के काठियावाड़ के मोरवी रियासत में टंकारा नामक कस्बे के एक गांव में अंबाशंकर के घर में मूल शंकर का जन्म हुआ, जो आगे चलकर स्वामी दयानंद सरस्वती के नाम से प्रख्यात हुए।[8]

मूल शंकर को प्रारंभ से ही धार्मिक शिक्षा दी गई। 14 वर्ष की उम्र तक बालक वेदों के ज्ञान से विज्ञ हो गए थे, इस अवधि में उनकी मुलाकात असंख्य साधु संत-सन्यासियों से भेंट हुई जिसमें एक संत ब्रह्मानंद सन्यासी ने उन्हें जीव एवं ब्रह्म की एकता के सिद्धांत की तरफ आकृष्ट किया। 1848 ई. में शंकर मत के स्वामी परमानंद से दीक्षा प्राप्त की तब से वह अपने दीक्षा नाम दयानंद से प्रसिद्ध हो गए।[9] स्वामी दयानंद सरस्वती ज्ञान के तलाश में विंध्य पर्वत और अरावली पहाड़ियों की यात्रा की। वह गंगा यमुना और नर्मदा के घाटियों में भ्रमणकिये, तत्पश्चात वे संस्कृत, व्याकरण, दर्शन और धर्मशास्त्र केवे बड़े विशेषज्ञ बन गए, इसके बाद ढाई साल तक एक अंध साधु ब्रजानंद के शिष्य रहे।[10] ब्रजानंद प्राचीन विधाओं के प्रखर बड़े मनीषी थें साथ ही एक स्वतंत्र चिंतक भी थे। वह मूर्ति पूजा कुसंस्कार और बहुदेववाद के खिलाफ थे। वे दयानंद को वेदों की दार्शनिक व्याख्या सिखाई थी, और उन्होंने कहा कि तुम हिंदू धर्म को गंदे क्षेपकों और विकृतियों सेशुद्ध करो।[11]

1863 ई. में गुरुजी से विदा होकर दयानंद सरस्वती ने पुनः भ्रमण पर निकल पड़े वह सब कुछ त्याग कर शिव के भक्त बन गए हैं साथ ही ईश्वर की पूजा में लीन हो गए यह परिवर्तन उनमें 1866 ई. में आया। 1872 ई. में दयानंद सरस्वती कलकत्ता गए वहां 4 महीने तक रहे। वहां पर उनकी मुलाकात कुछ समाज सुधारकों से हुई जिसमें शिवचंद्रसेन ईश्वर चंद्र विद्यासागर प्रमुख थे अब वे संस्कृत के जगह हिंदी में भाषण देना शुरू कर दिए जिससे उनकी लोकप्रियता और बढ़ गई।[12] भारतीय पुनर्जागरण में अग्रणी भूमिका उनकी महत्वपूर्ण पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश जो 1874 ई. में 'सत्यार्थ प्रकाश' नाम से लिखी गई। 1874 ई. में बम्बई की यात्रा की जहां वे प्रार्थना समाज के सम्पर्क मे आयें, ब्रह्म समाज एवं प्रार्थना समाज के शिक्षाओं से अधिक प्रभावित हुये। तत्पश्चात वे 1875 ई. में मुंबई में आर्य समाज की स्थापना की 1877 ई. में वे लाहौर एवं लुधियाना गए वहां वे आर्य समाज का पुनर्गठन किया। 1875 ई. में न्यूयॉर्क में थियोसोफिकल सोसाइटी की नींव रखी गई। 1881 ई. तक दोनों एक साथ मिलकर कार्य करते रहे, 1882 ई. में दयानंद ने 'गौ करुणा सभा' की स्थापना की इसी बीच वे 'गौ करुणा निधि' नाम से एक पुस्तक लिखा।[13] कुछ समयोपरान्त ही जोधपुर के राजा जसवंत सिंह के दरबारी वेश्या नन्हीं जान ने उन्हें जहर दे दिया जिससे 30 अक्टूबर 1883 ई. में दयानंद सरस्वती की मृत्यु हो गई।[14] इनका मानना था कि मत मतांतर के प्रस्पर विरुद्ध जो झगड़े हैं उनको मैं पसंद नहीं करता, क्योंकि इन्हीं मत वालों ने अपने मतों का प्रचार-प्रसार कर मनुष्यों को फंसा कर परस्पर शत्रु बना दिया है।[15] एनसाइक्लोपीडिया आफ रिलीजन एंड एथिक्स के अनुसार दयानंद के समक्ष समस्या

थी कि भारतीय धर्म का सुधार किस प्रकार किया जाए। आर्य समाज का सिद्धांत व नियम मुंबई में गठित किया गया पुनः उन्हें लाहौर में 1870 ई. में संपादित किया गया जो इस प्रकार है–

1. सब सत्य विद्या जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं सब का मूल परमेश्वर हैं।
2. ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप निराकार सर्वशक्तिमान न्यायकारी दयालू अजन्मा अनंत निर्विकार अनादि अनुपम, सर्वाधारसर्वेश्वर सर्वव्यापक, सर्वातरयामी अजर- अमर अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना होनी चाहिए।[16]
3. वेदों को ईश्वर द्वारा प्रकट किया गया है क्योंकि वे प्रकृति से अनुरूपता रखते हैं।
4. वेद समस्त मानव जाति के विज्ञान और धर्म के मूल स्रोत हैं।
5. भारत को परित्यक्त (विस्मृत) वैदिक मार्ग पर वापस लाना।
6. संपूर्ण विश्व में वचनामृत का प्रचार प्रसार करना।[17]
7. आर्य समाज वेदों को ही स्वतंत्र और अंतिम शब्द स्वीकार करेगा।
8. समाज का प्रत्येक सदस्य अपनी आय का 1/100 वाँ भाग आर्य समाज को देगा।
9. शिक्षा वेद के आधार पर ही दी जाएगी वेद ही सत्य-ज्ञान के स्रोत हैं इसलिए वेद की जानकारी जरूरी है।
10. वेदों के आधार पर मंत्र, पाठ एवं हवन का कार्य करना।[18]
11. मूर्ति-पूजा का खंडन एवं तिर्थयात्रा और अवतारवाद का विरोध।
12. कर्म एवं पुनर्जन्म के सिद्धांत में आस्था।
13. एक ईश्वर में विश्वास जो निराकार है।
14. स्त्री-शिक्षा में विश्वास बाल विवाह, और बहु-विवाह का विरोध।
15. विशेष दशा में विधवा विवाह का समर्थन।[19]
16. हिंदी और संस्कृत भाषा के प्रसार का कोशिश।
17. सत्य को ग्रहण करें असत्य का त्याग करें।
18. सभी कार्य धर्म के अनुसार करना।
19. आर्य समाज का मुख्य लक्ष्य जगत का परोपकार करना।
20. अविद्या का नाश हो और विद्या में वृद्धि हो।[20]

आर्य समाज का प्रमुख ध्येय सनातन के धार्मिक विश्वासों में परिवर्तन लाना, वैदिक धर्म के सच्चे ज्ञान का प्रचार-प्रसार हिंदू समाज से समस्त प्रकार की कुरीतियों से मुक्त करना। भारतीय पुनर्जागरण में सामाजिक सुधार संस्थाओं में आर्य समाज की बड़ी भूमिका थी। आर्य समाज ने राष्ट्रीय भावना के विकास में भी योगदान दिया। आर्य समाज द्वारा भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान-विज्ञान और वैदिक परंपराओं को ऊंचा करने का विशेष प्रयास किया गया। देशभक्ति का पाठ पढ़ाने का पूर्ण प्रयास किया गया।[21] आर्य समाज समानता और धार्मिक कट्टरता की भावना को लेकर आर्य-समाज ने भारत में आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक व राजनीतिक क्षेत्र में जो कार्य किया उसकी तुलना किसी अन्य धार्मिक सुधार आंदोलन से नहीं कर सकते हैं।[22] आर्य समाज ने संपूर्ण भारत में भारतीय पुनर्जागरण को चलाने में मुख्य रूप से उत्तरदाई था, साथ ही ज्ञान के विस्तार में इसका बड़ा ही योगदान था राजनीतिक जागृति में आर्य समाज का विशेष योगदान रहा है। वास्तव में वह पहले व्यक्ति थे जो 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। वह प्रथम व्यक्ति थे जो विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करना और स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करना सिखाया स्वामी दयानंद सरस्वती पहले महान समाज सुधारक थे जिन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा स्वीकार किया। बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, गोपाल कृष्ण गोखले इन्होंने इनके आंदोलन को सकारात्मक नेतृत्व प्रदान किया।[23] आर्य समाज ने हिंदू धर्म और संस्कृति की श्रेष्ठता का दावा करके हिंदू धर्म का सम्मान और गौरव की रक्षा की। भारतीय समाज में आत्मविश्वास और स्वाभिमान को जन्म दिया, इससे भारतीय पुनर्जागरण के प्रचार-प्रसार एवं भारतीय राष्ट्रीयता के निर्माण में

अत्यधिक सहायता मिली।[24]

निष्कर्ष

इस प्रकार आर्य समाज ने भारत को धर्म, समाज, शिक्षा और राजनीतिक चेतना के क्षेत्र में बहुत अधिक अपना योगदान प्रदान किया है, इसी कारण जबकि ब्रह्म समाज आंदोलन प्रायः समाप्त हो गया।

भारतीय पुनर्जागरण आंदोलन ने न केवल भारतीय समाज के ढांचे में परिवर्तन किया, बल्कि देश के राजनीतिक एवं आर्थिक जीवन को भी प्रभावित किया। भारत में आर्य समाज का विशेष महत्व था क्योंकि यहाँ धर्म का सामाजिक आचरण और संस्थाओं से घनिष्ठ संबंध है इस देश के धार्मिक सुधार आंदोलनों में प्रतिक्रियावादी नसही पुनरुत्थान वादी प्रवृत्तियों से सम्बद्ध किया जाता है।

पुनरुत्थान वादी प्रवृत्ति के अतिरिक्त आर्य-समाज ने अलग-अलग क्षेत्रों में आधुनिक विचारों के आधार पर सामाजिक पुनर्निर्माण का कार्यक्रम अपनाया और इस क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की हम स्पष्टतः कह सकते हैं कि भारत में धार्मिक सामाजिक पुनर्जागरण में एवं शैक्षणिक उन्नयन में आर्य समाज का विशेष योगदान था, साथ ही देश को आत्मविश्वास, आत्म शक्ति और राष्ट्रीय चेतना का निर्माण कर एक आधुनिकीकरण के प्रक्रिया को गति प्रदान करने का कार्य किया। आर्य समाज में भारतीय समाज में पुनर्जागरण प्रारंभ कर नूतन एवं एक आधुनिक राष्ट्र के निर्माण का कार्य किया।

सन्दर्भ - ग्रन्थ

1. पाठक, डॉ. सुशील माधवः भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1997, पृ. 21
2. शर्मा, डॉ. एल.पी.: आधुनिक भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा, 2004, पृ. 384
3. ताराचंद : भारतीय स्वतंत्रता आंदालन का इतिहास, प्रकाशन विभाग, दूसरा खण्ड, 1918 , पृ. 353
4. शर्मा, एल. पी., आधुनिक भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल-आगरा, 2004, पृ. 393
5. शर्मा, एल. पी., आधुनिक भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल-आगरा, 2004, पृ. 387
6. प्रसाद, डॉ. राजीव नयनः आधुनिक भारत का इतिहास, भारती भवन प्रकाशन, पटना 1998, पृ. 122
7. शुक्ल, आर.एल.: आधुनिक भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली, 1997, पृ. 353
8. मित्तल, डॉ. ए.के.: भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन, 1999, पृ. 37
9. पांथरी, प्रो. शैलेन्द्र, अमरेन्द्र प्रताप सिंह : आधुनिक भारत का सामाजिक इतिहास, राजघाट, वाराणसी, 2000, पृ. 155
10. डॉ. ताराचंद : भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, प्रकाशन विभाग, दूसरा खण्ड, 1918, पृ. 353
11. वही, पृ. 38
12. मित्तल, डॉ. ए.के.: भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन, 1999, पृ. 38
13. वही, पृ. 38
14. पांथरी, प्रो. शैलेन्द्र, अमरेन्द्र प्रताप सिंह, आधुनिक भारत का सामाजिक इतिहासरूराजघाट, वाराणसी, 2000 ई., पृ. 157
15. सरस्वती, स्वामी दयानन्दः सत्यार्थ प्रकाश, रूपेश ठाकुर प्रसाद, प्रकाशन वाराणसी, 2013, पृ. 1 (मुख्य पृष्ठ)
16. ग्रोवर, वी.एल., यशपाल : आधुनिक भारत का इतिहास, एस चन्द एण्ड कम्पनी लि. रामनगर, नई दिल्ली, 1981, पृ. 275
17. पांथरी, प्रो. शैलेन्द्र, अमरेन्द्र प्रताप सिंह : आधुनिक भारत का सामाजिक इतिहास, राजघाट, वाराणसी, 2000 ई., पृ. 157
18. शर्मा, एल. पी.: आधुनिक भारत, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2004, पृ. 394

19. वही, पृ. 395
20. प्रसाद, डॉ. राजीव नयनः आधुनिक भारत का इतिहास, भारती भवन प्रकाशन, 1998, पृ. 122
21. वही, पृ. 124
22. शर्मा, एल.पी.ः आधुनिक भारत, लक्ष्मी नारायन अग्रवाल, आगरा, 2004, पृ. 394
23. वही, पृ. 395
24. वही, पृ. 396

पत्राचार का पताः- शैलेश कुमार पुत्र श्री संगम मल्ल
ग्राम- मिर्जवा बाबू
पोस्ट- बेलवा बाबू सरदार नगर
जिला- गोरखपुर
पिन कोड- 273202
मो0- 9454062729
ई.मे0- dr09shailesh@gmail.com

WOMEN EMPOWERMENT IN INDIA: A PRESENT SCENARIO

Abhijay Saini
Research Scholar,
Dr. C. V. Raman University
Kota, Bilaspur

Aditi Saini
Research Scholar,
Hemchand Yadav Durg University

ABSTRACT

Women empowerment refers to the process of granting women equal rights, opportunities, and the ability to participate fully in societal, economic, political, and cultural spheres. In India, significant progress has been made over the years through government policies, legal reforms, and societal changes. Initiatives like Beti Bachao Beti Padhao, women's reservation in local governance, and various entrepreneurship schemes have paved the way for greater inclusion and opportunities. Despite advancements, challenges persist, including low female labour force participation, gender-based violence, health disparities, and entrenched patriarchal norms. Women face barriers in accessing education, economic resources, and leadership positions, particularly in rural areas. The present scenario also highlights promising trends. Women are breaking barriers in fields like politics, sports, and entrepreneurship. Movements and increased representation in media have fostered awareness and advocacy for gender equality. However, achieving comprehensive empowerment requires continued efforts to address systemic inequalities, enforce laws, and foster cultural transformation. Women empowerment in India is a dynamic and evolving process, crucial for achieving gender equality and sustainable national development. Collaborative efforts at all levels are essential to create a society where women thrive as equal contributors and leaders.

Keywords: empowerment, societal, economic, political, cultural, barriers, dynamic.

1.O INTRODUCTION

Women Empowerment has been a hot raging topic of debate in almost every conclave, seminar, webinar, conferences etc. Government finds topic as pivotal in its policy making. No country in world has been able to progress if they keep out women behind. European countries and USA have been way ahead of India to grant equal status and rights to women in their countries. However, in India status of women has been fluctuating with each advent of era. For example, in Vedic era women were in better off position than men. In Mughal era, they were oppressed. This oppression still continues in the patriarchal society of India. Whether it is Hindu or Muslim, higher caste or lower caste, women oppression is universal. Taking cognizance of this fact, Government of India

has envisaged new policies and laws to empower women.

2.0 ENVISAGING WOMEN EMPOWERMENT

Equal rights for men and women are enshrined under Articles 14 to 16 in the Indian constitution, which came into effect on 26 January 1950.(1)

i. Discrimination based on gender is strictly prohibited. Indian women received universal suffrage during India's independence in 1947, long before several Western countries granted women the right to vote. India was second country in modern history to have a female leader, Indira Gandhi, in 1966 after another South Asian state, Sri Lanka, elected Sirimavo Bandaranaike in 1960.

   Our Government has understood the importance of women labour and work force. It also taken a concerted effort to ratify key international conventions to end discrimination against women. It is a founding member of the International Labour Orgainsation (ILO) and has ratified 47 conversions and one protocol (2).

ii. It signed the Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against Women (CEDAW) (3) in the year 1980 and ratified it in 1993 with some reservations. It has yet to ratify the Optional Protocol of the CEDAW and National Action Plan on women, Peace and Security. Within the country, the Dowry Prohibition Act. 1961 and the Protection of Women form Domestic Violence Act, 2005 has been enacted to criminalize instances of dowry and domestic violence.

iii. The Government also increased maternity leave from 12 weeks to 26 weeks under the Maternity Benefit Act in 2017 for the private sector (3).

iv. The Women's Reservation Bill gives 33 per cent reservation for women seats in all levels of Indian politics. This is an attempt to increase female political participation. The bill was first introduced on 12 September 1996 by the Deve Gowda Government.

3.0 SOME ACHIEVEMENTS

i. Women in India are emerging in all sectors, including politics, business, medicine, sports and agriculture. History was made when two female scientists from the Indian Space Research Organisation led the country's second lunar mission Chadrayaan-2 from its inception to completion in 2019. Female leadership for a huge space mission challenged the Meta narrative the rocket science in a profession reserved for men (4).

ii. Another milestone was reached when the Supreme Court upended the government's position on women serving as army commanders in 2020. Women were first inducted into the armed forces in 1992 and have served in a multitude of positions, including fighter pilots, doctors, nurses, engineers, signalers, etc. While the issue of women serving in combat roles continues to be a contentious one worldwide, these area instances where Indian women have overcome the glass ceiling in the armed forces.

iii. India's story on women empowerment is not complete without focusing on grassroots initiatives adopted by the government and civil society orgainsations. The federal and state governments have launched new schemes, policies and programme to empower both urban

and rural women. The Narendra Modi government has launched flagship schemes to promote gender equality, including Beti Bacho Beti Padhao (Save the Daughter, Educated the Daughter), Pradhan Mantir Ujjwala Yojana (a scheme to provide gas connections to women from below the poverty line households) and Mahila-E-Haat (5). The Bachao Beti Padhao Yojana scheme was launched in January 2015 to address the issue of a gender skewed ratio and generate greater welfare for the girl child. The focus is centered mostly on Northern India, including Haryana, Uttar Pradesh, Delhi, Punjab and Uttarakhand where the gender ratio is wider. The mahila-E-Haat project, an online marketing campaign, was launched in 2016. It uses technology to support female entrepreneurs, self-help groups and non-government organizations (NGOs). Each scheme has its own unique objective, ranging from welfare of the girl child and community engagement to supporting aspiring female entrepreneurs.

iv. There is also the United Nations (UN) India Business Forum which has partnered with the National Institution for Transforming India (NITI Aayog) to set up the UN-India NITI Aayog Investor Consortium for Women entrepreneurs to strengthen female entrepreneurship and create an ecosystem for investments (6).

4.0 ISSUES PERSISTING IN THE COUNTRY

i. Illiteracy of women
ii. Lack of adequate education
iii. Lack of desired skills
iv. Unemployment
v. Violence against women
vi. Inefficient government machinery
vii. Lack of stringent laws
viii. Government apathy
ix. Presence of unawareness among women
x. Poor physical and mental health of women
xi. Gender discrimination
xii. Patriarchal society
xiii. Lack of willingness among women to change

5.0 CONCLUSION

Women Empowerment is not a cake walk. It is a difficult process. It involves various aspects such as law, society, and personal attitude. Government laws are not enough. Society and people personally have to understand that women empowerment is inevitable. It cannot be avoided. A society where women are neglected and suppressed can never progress. Thus, women empowerment is a multi dimensional process and all the aspects should be taken care of.

Empowering women is not just a matter of justice; it is an investment in the nation's future.

A society that values and empowers its women ensures better education, health, and economic outcomes for all. By addressing systemic inequalities and fostering equality, India can pave the way for a brighter, more equitable, and prosperous future.

Women empowerment is both a necessity and a moral obligation for India to achieve holistic development. While significant progress has been made, continued efforts are essential to create an equitable society where women can live with dignity, freedom, and opportunities.

The position of women in present-day India has witnessed substantial progress but remains a work in progress. Women are breaking barriers and achieving success in diverse fields, yet challenges rooted in societal norms and systemic inequalities persist. A collaborative effort by the government, private sector, civil society, and individuals is essential to create a society where women can live with dignity, equality, and freedom. Empowering women is not just a step toward justice but a pathway to a more prosperous and inclusive India.

Reference

1. Desai, N. (2020). Women empowerment in India: Policies and progress. Oxford University Press.
2. Sharma, R., & Gupta, S. (2021). The Role of education in women's empowerment in rural India. Journal of Social Development.
3. Ministry of Women and Child Development. (2019). Annual report 2018-19. Government of India. https://wed.nic.in/Kumar, A. (2023, June15). Women's empowerment in modern India: Challenges and opportunities. The Indian Journal.
4. Roy, P. (2022, October 5). Breaking barriers: Women leaders in India. The Hindu. https://www.thehindu.com/news/women-leaders
5. United Nations Development Programme. (2021). Gender equality and women's empowerment. UNDP India.https://www.undp.org/india/gender-equality.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भाषा अधिगम में मौखिक संचार का महत्व

डॉ. अंजू पांचाल
अकादमिक परामर्शदाता (IGNOU), अदिति महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय)
9711559127, drpanchalanju@gmail.com
पता : C-342, दिव्य ज्योति अपार्टमेंट सेक्टर-19, रोहिणी, दिल्ली-110085

सारांश : मौखिक संचार मानव सभ्यता में लंबे समय से अस्तित्व में है और इसका उपयोग संचार के प्रमुख माध्यम के रूप में किया जाता रहा है। यह एक दोतरफा प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति बोलता है और दूसरा सुनता है। भाषा शिक्षण में मौखिक संचार की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न केवल छात्रों को भाषा सीखने में मदद करता है, बल्कि उनके सामाजिक, भावनात्मक और शैक्षणिक विकास में भी सहायक होता है। "भाषा शिक्षण'' विशेष रूप से किसी भाषा को पढ़ाने और सीखने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है, जिसमें भाषा की सैद्धांतिक समझ और भाषा कौशल का व्यावहारिक अनुप्रयोग दोनों शामिल हैं। मौखिक संचार के माध्यम से छात्र अपने विचारों, भावनाओं और जरूरतों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करना सीखते हैं, जिससे दूसरों के साथ उनकी समझ और जुड़ाव बढ़ता है। भाषा शिक्षण की मौखिक वार्तालाप विधि, जिसे 'मौखिक विधि' या 'संवादी विधि' भी कहा जाता है, भाषा सीखने का एक प्रभावी तरीका है जिसमें छात्र सक्रिय रूप से बातचीत में शामिल होते हैं। इस विधि में, शिक्षक छात्रों को वास्तविक जीवन की स्थितियों में भाषा का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, जिससे उनकी मौखिक अभिव्यक्ति, सुनने की समझ और आत्मविश्वास में सुधार होता है।

शब्द कुंजी : भाषा अधिगम, अभिव्यक्ति, मौखिक संचार, नोम चॉम्स्की, LAD, शिक्षण सूत्र।

प्रस्तावना : इसमें कोई संदेह नहीं है कि सीखने की प्रक्रिया में बातचीत स्कूली शिक्षणशास्त्र का मूल है। बच्चे, अपने आसपास की दुनिया को जानने और समझने के प्रयास में, निरंतर प्रश्न पूछते रहते हैं। मौखिक कौशल शिक्षक-बालक अंतःक्रिया और बच्चों की मौखिक भाषा के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कारक हैं। मौखिक भाषा का विकास विशेष रूप से अंतःक्रियाओं, सामाजिक संबंधों और मित्रता के लिए, और अपनेपन की भावना के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण है। शिक्षक बच्चों के साथ प्रत्यक्ष रूप से भाषागत अंतःक्रिया के माध्यम से और अप्रत्यक्ष रूप से, सीखने की प्रेरणाओं से भरपूर वातावरण बनाकर, बच्चों को अच्छे मौखिक भाषा कौशल विकसित करने में मदद करते हैं। मौखिक संचार कौशल पाठ्यक्रम कार्यान्वयन और उसके लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्रिय रूप से सहायता करने में सक्षम हैं।

मौखिक संचार छात्रों को न केवल भाषा सीखने में मदद करता है, बल्कि उन्हें प्रभावी ढंग से संवाद करने, सामाजिक रूप से जुड़ने और आत्मविश्वास विकसित करने में भी सक्षम बनाता है। छात्र शब्दों, वाक्यों और व्याकरण को सुनकर और बोलकर सीखते हैं। श्रवण और वाचन छात्रों को अपने विचारों, भावनाओं और जरूरतों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने में सक्षम बनाता है। जब छात्र प्रभावी ढंग से संवाद कर पाते हैं, तो उनका आत्मविश्वास बढ़ता है।

एनसीईआरटी के अनुसार, "भाषा शिक्षण'' यह मानता है कि भाषा केवल शब्दों और नियमों का संग्रह नहीं है, बल्कि बच्चे के व्यक्तित्व और समग्र विकास को आकार देने का एक साधन भी है।"

औपचारिक शिक्षा पद्धति में विद्यालय स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक बाल- केंद्रित शिक्षा की हिमायत की जाती है। बालक को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देने वाले पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है। अपने विचारों को वह तभी अभिव्यक्त कर पाएगा जब उसके पास उपयुक्त शब्द भंडार होगा और उन शब्दों को वाक्यों मे पिरोने की कला होगी। इस कला के सृजन का दायित्व भाषा पर आता है। भाषा अधिगम और भाषा में दक्षता हेतु मौखिक संचार की अनेकानेक विधियों का प्रयोग किया जाता है, जैसे कि मंडली चर्चाएँ, शिक्षक-शिक्षार्थी नियमित बातचीत, कहानियाँ पढ़ना और सुनाना, विषय विकसित करना, निर्देश देना, चित्रों का वर्णन करना, नियम निर्धारित करना और सार्वजनिक संकेतों को पढ़ना। भाषा अधिगम मे इन मौखिक संचार की गतिविधियों को कार्यान्वित करने मे वार्तालाप को नींव के रूप मे रखा जाता है।

वार्तालाप दिन-प्रतिदिन का प्रमुख भाषाई व्यवहार है। वार्तालाप विश्लेषण विधि 1970 में विकसित की गई थी ताकि यह पता लगाया जा सके कि सामान्य दैनिक व्यवहार को किस प्रकार देखा जाता है। इस विधि में न केवल बोले गए शब्द शामिल हैं, बल्कि विराम, ओवरलैप, स्वर-उच्चारण और अन्य भाषाई विशेषताएँ भी शामिल हैं। बातचीत की परिवर्तनशील प्रकृति को समझते हुए, वार्तालाप विश्लेषक इस बात का अध्ययन करते हैं कि वार्ताकार किस प्रकार संरचना को समझते हैं और अपने व्यवहार को समन्वित करते हैं ताकि प्रभावी मौखिक आदान-प्रदान संभव हो सके। संचार पाठ्यक्रम के सभी शिक्षण क्षेत्रों में व्याप्त है, जिससे एक संवादात्मक और बहु-संवेदी शिक्षण प्रक्रिया सुगम होती है। भाषा के प्रति एक समग्र दृष्टिकोण अपनाया जाता है जो भाषा को बोलने, सुनने, पढ़ने और लिखने के एक एकीकृत रूप में देखता है। यह दृष्टिकोण 'निरंतरता सिद्धांत' पर आधारित है, जिसके अनुसार बच्चा पहले संकेतों, हाव- भाव व्यवहार आदि का अनुकरण करता है और बाद मे मौखिक भाषा का अधिगम करता है।

एनसीईआरटी के अनुसार, "भाषा शिक्षण" संपूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया की नींव रखता है, तथा समग्र शैक्षणिक सफलता के लिए भाषा को मजबूत आधार प्रदान करता है।"

'ज्ञात से अज्ञात की ओर ' शिक्षण सूत्र इस तथ्य का प्रमाण है कि मौखिक कार्य ही भाषा शिक्षण का आधार हो क्योकि यह भाषा की नींव तैयार करता है।

मौखिक संचार की क्रियाएँ और भाषा अधिगम

मौखिक संचार कक्षा चर्चाओं, प्रश्न पूछने और स्पष्टीकरण प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जो शैक्षणिक सफलता में योगदान देता है। औपचारिक बातचीत, नाटक, व्याख्यान, कहानी सुनाना, चित्र वर्णन, भाषण, आशु भाषण, परिसंवाद तथा विचार विमर्श, बाल सभा एवं छात्रसंसद, अभिनय, काव्य पाठ, इलेक्ट्रिक साधनों पर बोलने का अभ्यास और सार्वजनिक संबोधन प्रस्तुतियाँ सभी मौखिक संचार के उदाहरण हैं।

औपचारिक बातचीत- शिक्षक- छात्र के बीच औपचारिक बातचीत का उद्देश्य छात्र की आत्माभिव्यक्ति की झिझक को खोलना है। यह गतिविधि कक्षा-कक्ष के बाहर और अंदर दोनों जगह की जा सकती है। भाषा अधिगम के स्तर पर छात्र मे शब्द भंडार की वृद्धि के साथ वाक्य विन्यास में भी सुधार होगा।

नियमित शिक्षक-छात्र अंतःक्रिया-शिक्षक-छात्र अंतःक्रिया छात्रों को भाषा का उपयोग करने, सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने के अवसरों को बढ़ाती है। इससे छात्रों की भाषा दक्षता में सुधार होता है।

अस्थायी सहायता या स्कैफोल्डिंग में छात्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप सहायता प्रदान करना शामिल है, जिससे उन्हें ऐसी सामग्री तक पहुंचने और उसमें महारत हासिल करने में मदद मिलती है जो अन्यथा बहुत कठिन हो सकती है।

कहानी कथन- यह भी मौखिक अभिव्यक्ति का एक ऐसा माध्यम है जिसकी सहायता से भाषा अधिगम किया जाता है। विद्यालय स्तर और विश्वविद्यालय स्तर पर भी यह भाषा कौशल मे दक्षता हेतु सहायक है। रोचकता के साथ -साथ यह छात्रों की जिज्ञासा को शांत कर घटनाओं को प्रस्तुत करना भी सिखाती है जिससे छात्रों मे स्व-लेखन, स्वकथा वाचन, रचनात्मक क्षमता का विकास होता है।

भाषण- भाषण से विचारों को यथा क्रम संजोने की विधि, श्रोताओ के अनुसार विषय सामग्री चयन, उचित हाव- भाव प्रदर्शन, वाणी मे उतार- चढ़ाव आदि भाषिक दक्षताओ का विकास होता है।

विभिन्न विषयों पर विस्तार से चर्चा करना-छात्रों को भाषा के वर्णो के शुद्ध उच्चारण पर व्यक्तिगत रूप से विचार करने, फिर एक साथी के साथ उस पर चर्चा करने, तथा अंत में अपने विचारों को बड़े समूह के साथ साझा करने मे मौखिक संचार को ही प्रयोग में लाया जाता है।

वस्तुओं और घटनाओं का वर्णन करना-बच्चों की अपने आसपास की दुनिया को जानने की गहरी रुचि, बचपन में सीखने के लिए एक प्रमुख प्रेरणा है। सीखने के लिए एक सुरक्षित वातावरण हो जो उत्तेजनाओं से भरपूर हो, और जिसमें बच्चे सक्रिय होकर सार्थक एवं उपयुक्त शब्दों का चुनाव और प्रयोग कर सके। बच्चों की भाषाई और मानसिक क्षमताओं का विकास ऐसे सकारात्मक वातावरण मे ही संभव हो पाएगा।

काल्पनिक या वास्तविक चित्रों का वर्णन- कक्षा मे काल्पनिक या वास्तविक चित्रों का वर्णन करने की गतिविधि छात्रों मे संवाद कौशल, लेखन कौशल, वाक् कौशल के विकास मे सहायक होती है। भाषा अधिगम के सृजनात्मक लेखन का विकास इससे होता है।

रोल प्ले या खेल अभिव्यक्ति-मौखिक संचार और खेल अभिव्यक्ति के प्रमुख माध्यम भाषा सीखने व भाषा दक्षता में सहायक उपकरण हैं। खेल के दौरान, बच्चे स्वयं से और अपने साथियों से बात करते हैं। भाषा, मित्र बनाने और बच्चों द्वारा रचित काल्पनिक दुनिया को साझा करने का एक माध्यम बन जाती है। खेल स्वयं भाषा के माध्यम से समृद्ध होता है। इसका दायरा विस्तृत होता है, जिससे यह अधिक जटिल और विविध बनता है। गैर-भाषाई बच्चे अपने दोस्तों की भाषा बोलने का प्रयास करते हैं ताकि खेल हो सके। कुल मिलाकर, खेल के दौरान, बच्चे अपने भाषाई कौशल का निर्माण करते हैं

इलेक्ट्रिक साधनों पर बोलने का अभ्यास- छात्रों को टेप रिकॉर्डर द्वारा उनकी आवाज एवं विचारों को उन्नत किया जा सकता है। रिकॉर्ड की हुई आवाज जब छात्र को सुनाई जाती है तो वह स्वयं में सुधार हेतु उत्प्रेरित होता है। त्रुटि पूर्ण शब्द स्वयं सुनकर उसके सही प्रयोग की ओर अग्रसर होता है।

कविताएँ सुनाना- विद्यालय व विश्वविद्यालय स्तर पर काव्य संग्रह को पाठ्यचर्या मे स्थान देने का उद्देश्य भाषा शक्ति को सुदृढ़ करना ही है। इसमें छात्रों द्वारा किसी पद का सस्वर वाचन और उसका शब्द और अर्थ- विस्तार शामिल हैं।

प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक नोम चॉम्स्की का भाषा सिद्धांत मानता है कि बच्चों में भाषा सीखने की क्षमता जन्मजात होती है। उन्होंने इसे "भाषा अधिग्रहण उपकरण" (Language Acquisition Device or LAD) कहा है। शिक्षको को LAD की अवधारणा को समझना चाहिए और बच्चों को भाषा सीखने में मदद करने के लिए इसका उपयोग करना चाहिए। उदाहरण के लिए, शिक्षकों को बच्चों को व्याकरण के नियमों को सिखाने के बजाय, उन्हें भाषा के प्रयोग के माध्यम से भाषा सीखने में मदद करनी चाहिए। शिक्षकों को बच्चों को ऐसे अवसर प्रदान करने चाहिए जहाँ वे भाषा का उपयोग कर सकें और भाषा के साथ प्रयोग कर सकें।

नई संभावनाएं

अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाएँ इस बात पर जोर देती हैं कि सक्रिय, अनुभवात्मक और सहयोगात्मक शिक्षण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। भाषा शिक्षण अन्य विषयों के शिक्षण से काफी भिन्न है। फिर भी, चूँकि भाषा का मानव विचार से सीधा संबंध है, यह सभी शिक्षण क्षेत्रों में व्याप्त है। इस कारण, भाषा शिक्षण के लिए मौखिक संचारात्मक पद्धति का कार्यान्वियन सकारात्मक शिक्षण परिणाम प्राप्त करने में मदद कर सकता है। भाषा के दो मूल तत्व, शब्दावली (अवधारणाएँ-अर्थ-शब्द), और व्याकरणिक एवं वाक्य-रचनात्मक संरचनाओं के माध्यम से शब्दावली को सार्थक संयोजनों में व्यवस्थित करना, मौखिक संचार के उपर्युक्त साधनों द्वारा सिखाया जा सकता है।

संदर्भ

1. संचार के पारंपरिक और आधुनिक मीडिया, gyankosh, unit-16, page 40-
2. ncert.nic.in
3. research gate. net
4. संचार के पारंपरिक और नए माध्यमों का अभिसरण, जून 2019, एंजेला न्वामुओ, चुकुवेमेका ओडुमेग्वु ओजुकु विश्वविद्यालय।

नई शिक्षा नीति - 2020 के आर्थिक प्रभाव

अनुपम कुमार यादव
सहायक प्रोफेसर - अर्थशास्त्र विभाग
गाँधी स्मारक त्रिवेणी पी.जी. कालेज, बरदह, आजमगढ़

सारांश

भारत सरकार द्वारा लाई गई नई शिक्षा नीति 2020, देश की शिक्षा व्यवस्था में एक बड़ा बदलाव लाने की दिशा में उठाया गया कदम है। यह नीति सिर्फ किताबों और पाठ्यक्रम तक सीमित नहीं है. बल्कि इसका गहरा नाता देश की अर्थव्यवस्था और सामाजिक ढांचे से भी है। इसमें यह साफ तौर पर कहा गया है कि अगर हम आने वाले समय में शिक्षा को मजबूत बनाना चाहते हैं तो हमें उसमें भरपूर निवेश करना होगा चाहे वह स्कूल हों, कॉलेज हों या रिसर्च संस्थान। आज की तारीख में हमारे देश में शिक्षा पर जितना खर्च होना चाहिए, उतना नहीं हो रहा। GDP का केवल 3.1 से 3.5 प्रतिशत हिस्सा ही शिक्षा पर लगाया जा रहा है, जबकि नई नीति का मक़सद है इसे 6 प्रतिशत तक पहुँचाना। यही नहीं, नीति में शोध के लिए 'राष्ट्रीय अनुसंधान कोष' (NRF) का गठन, डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स का विस्तार, और शिक्षकों की ट्रेनिंग को प्राथमिकता देने जैसे कई सुझाव दिए गए हैं। यह सब तभी मुमकिन होगा जब सरकार और समाज दोनों मिलकर इसमें निवेश करेंगे।

नीति के लागू होने में कुछ कठिनाइयाँ भी सामने आ रही हैं- जैसे हर राज्य में शिक्षा पर खर्च करने -की क्षमता अलग-अलग है, गाँवों में इंटरनेट और डिजिटल संसाधनों की कमी है, और निजीकरण की वजह से शिक्षा में असमानता बढ़ने का खतरा भी है। इन सबका हल तभी निकलेगा जब केंद्र और राज्य मिलकर साफ-सुथरी और टिकाऊ योजना बनाएँ। कुल मिलाकर, नई शिक्षा नीति 2020 एक ऐसा रास्ता दिखाती है जो भारत को ज्ञान के क्षेत्र में आत्मनिर्भर और आर्थिक रूप से मजबूत बना सकती है, बशर्ते हम इसके पीछे ईमानदारी से संसाधन और नीयत दोनों लगाएँ।

मुख्य शब्द : नई शिक्षा नीति 2020, सार्वजनिक निवेश, मानव पूंजी, डिजिटल समावेशन, आर्थिक पुनर्गठन।

परिचय

भारत प्राचीनकाल से ही विश्वगुरू रहा है। अपने उच्च स्तरीय शिक्षा स्थलों जैसे नालन्दा, तक्षशिला आदि के बल पर इसकी तूती पूरे विश्व में बोलती थी। देश विदेश के विद्यार्थी यहाँ शिक्षा ग्रहण करने को आते थे। शिक्षा स्थल ही वो केन्द्र बिंदु है जहाँ से राष्ट्र का निर्माण और विनाश दोनों ही सम्भव हो सकते है। आजादी के बाद से ही शिक्षा को ही हर बार परिवर्तन का माध्यम माना जाने लगा है। शिक्षा में हर बार नये प्रयोग कर विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता रहा है। जितने प्रयोग इस क्षेत्र में होते है उतने शायद ही किसी अन्य क्षेत्र में होते होंगे। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अभाव को पूरा करने का एक प्रयास किया गया है। शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्ति का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक सुधार और आर्थिक विकास की नींव होती है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति इस बात पर निर्भर करती है कि वहाँ के नागरिक कितने शिक्षित,

प्रशिक्षित और जागरूक हैं। भारत जैसे विविधता-सम्पन्न देश में शिक्षा प्रणाली को समय-समय पर नए संदर्भों और आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना अत्यंत आवश्यक रहा है। इसी क्रम में वर्ष 2020 में प्रस्तुत की गई नई शिक्षा नीति (NEP 2020) एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ के रूप में सामने आई। जिसका उद्देश्य, स्वरूप और संरचना तीनों को पुनर्परिभाषित करने का प्रयास किया। जिसने शिक्षा के उद्देश यह नीति शिक्षा को केवल परीक्षा आधारित प्रणाली से निकालकर, कौशल, नवाचार, और शोध पर आधारित व्यापक और व्यावहारिक दृष्टिकोण के साथ जोड़ती है। इसमें विशेष रूप से यह कि शिक्षा को केवल एक सामाजिक दायित्व के रूप में नहीं, बल्कि एक दीर्घकालिक आर्थिक निवेश के रूप में देखा जाए। सरकार द्वारा घोषित यह नीति स्कूली स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक, सभी स्तरों पर ऐसे ढाँचागत और नीतिगत परिवर्तनों की बात करती है जिनके लिए व्यापक वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता होगी।

NEP 2020 के आर्थिक पक्ष पर गंभीरतापूर्वक विचार करना इसीलिए आवश्यक है क्योंकि नीति का क्रियान्वयन केवल विचारों या नीतिगत घोषणाओं से नहीं, बल्कि मजबूत आर्थिक ढाँचे के सहयोग से ही संभव हो सकेगा। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य नई शिक्षा नीर्ति के अंतर्निहित आर्थिक पहलुओं का विश्लेषण करना, इसके वित्तीय प्रभावों को समझना, और नीति के सुचारु कार्यान्वयन हेतु आवश्यक रणनीतियों का प्रस्ताव करना है।

अध्ययन का उद्‌देश्य

1. नई शिक्षा नीति 2020 के आर्थित स्थिति के बारे में जानना।
2. इस नीति के आर्थिक लक्ष्यों एवं सिद्धान्तों के बारे में जानना।
3. नई शिक्षा नीति 2020, पुरानी शिक्षा नीति आर्थिक रूप से किस प्रकार भिन्न है इसके बारे में जानना।
4. नई शिक्षा नीति में आंतरिक आर्थिक पहलुओं का अध्ययन करना।

शोध विधि

यह लेख पत्र द्वितियक स्रोतों के माध्यम से लिखा गया हे। इस हेतु विभिन्न रिपोर्ट, समाचार पत्रों एवं पुस्तकों से तथ्यों का संकलन किया गया है।

आर्थिक शोध समीक्षा

भारतीय अर्थव्यवस्था की नये साल की चुनौतियों और संभावनाओ पर विचार करते समय कोई बहुत आशाजनक तस्वीर नहीं उभरती है यह ठीक है कि हम मंदी के गहरे संकट से बाहर निकल आये है लेकिन हमारी अर्थव्यवस्था की स्थिरता और ऊँची विकास दर के सामने चार प्रमुख चुनौतियाँ है। हमारी अर्थव्यवस्था के सामने सबसे बड़ा संकट खाद्यान्न का है किन्तु हमारे देश के राजनेताओं की अपनी कोई आर्थिक सोच नहीं है। भारत के 70 करोड़ किसान उसकी कुल आबादी में 64 प्रतिशत है यह भारत की प्रमुख और महत्वपूर्ण विशिष्टता है देश के आर्थिक विकास के लिए किसानों और कृषि की स्थिति हमेशा बेहद महत्वपूर्ण रही है। पिछले 30 सालों के दौरान यह बार-बार देखा गया है कि कृषि उत्पादन अर्थव्यवस्था के विकास पर काफी हद तक असर डालता है। जब भी फसल खराब हुई तो तुरन्त उसके बाद हल्के और भारी औद्योगिक उत्पादन में भी कमी आयी है उसके बाद जब कृषि की हालत सुधरी तो औद्योगिक उत्पादन दुबारा बढ़ने लगा। लेकिन जिस तरह कृषि को हमारी सरकार बाजार के हवाले कर रही है उससे इस संकट के और अधिक गहराने के आसार दिखाई दे रहे है। सरकार के पास खाद्य पदार्थो की मँहगाई कम करने के कोई उपाय नहीं है। रिजर्व बैंक पर भी ब्याज दरें बढ़ाने का दबाव बन रहा है लेकिन इससे अर्थव्यवस्था के सुधार पर बुरा असर हो सकता है। देश की अर्थव्यवस्था के सामने दूसरी बड़ी चुनौती बढ़ता सामाजिक असंतोष है इसका लाभ नक्सली और आतंकवादी उठा रहे है यह हिंसा तीन राज्यों से बढ़कर तेरह राज्यों के 180 जिलो में फैल चुकी है। भारत के लिए पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका के घरेलू हालात भी चिंता के विषय है। उग्रवादी जाली नोटों के जरिए भी भारतीय अर्थव्यवस्था को भारी क्षति पहुँचा रहे है। सबसे खराब हालत उत्तर प्रदेश की है अनेक राज्यों

में 18 लाख से ज्यादा लोगो की रोजी रोटी जिन उपक्रमों पर टिकी है उनकी हालत इतनी खराब है कि असल निवेश के बाद इन्हें बिना कर्ज व सब्सिडी दिये चलाना मुश्किल हो रहा है।

हमारी अर्थव्यवस्था के सामने चौथी बड़ी चुनौती सुविधाओं का भारी अभाव ही आबादी बढ़ने के साथ-साथ पानी, बिजली, जनस्वास्थ्य सुविधा, शिक्षा, परिवहन और सड़क की समस्या बढ़ती जा रही है। इन समस्याओं को सुलझाने में अब तक हमारा शासन और प्रशासन असफल रहा है इंटरनेट और मोबाइल के युग में सदियों पुराने ढर्रे पर प्रशासन चलाने का तौर तरीका हमारे राजनेताओं की क्षमता पर ही सवाल खड़ा करता है। एक उभरते हुए देश के लिए पानी, बिजली, सड़क, परिवहन, अस्पताल जैसी-बुनयादी सुविधाओं की समस्या हैरान और परेशान करती है हमारे नीति-निर्माता जब तक इन समस्याओं के समाधान के लिए कारगर कदम नहीं उठायेंगे तब तक हमारी अर्थव्यवस्था की स्थिरता के लिए खतरा सदैव बना रहेगा।

NEP 2020 के प्रमुख आर्थिक प्रावधान

1. GDP का 6% शिक्षा में निवेशः नीति 1968 और 1986 की नीतियों के अनुरूप पुनः यह लक्ष्य निर्धारित करती है (MHRD, 2020)। अभी तक भारत का शिक्षा व्यय GDP का मात्र 3.1%-3.5% है (Economic Survey, 2022-23)।

2. राष्ट्रीय अनुसंधान कोष (NRF): [1] 50,000 करोड़ के प्रारंभिक कोष द्वारा उच्च शिक्षा संस्थानों में अनुसंधान को बढ़ावा देना प्रस्तावित है (NEP 2020, para 10.12)।

3. डिजिटलीकरणः नीति डिजिटल शिक्षा को को व्यापक बनाने हेतु 'DIKSHA' 'SWAYAM' जैसे पोर्टल्स के माध्यम से निवेश बढ़ाने की आवश्यकता पर बल देती है (NCERT 2023)।

4. बहु-विषयक उच्च शिक्षण संस्थानः प्रत्येक जिले में HEI की स्थापना हेतु ढाँचागत विकास, उपकरण, और मानव संसाधन हेतु निवेश आवश्यक होगा (NEP 2020, para 11.3)।

स्कूली एवं उच्च शिक्षा पर आर्थिक प्रभाव

स्कूली शिक्षा पर प्रभावः

ECCE का एकीकरणः 3-6 वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए ECCE कार्यक्रम की आवश्यकता को मान्यता दी गई है, जिससे आँगनबाड़ी और प्राथमिक विद्यालयों को समन्वयित करने की वित्तीय चुनौती उत्पन्न होती है (UDISE$ 2022)।

शिक्षक प्रशिक्षणः नीति सभी शिक्षकों को B-Ed. जैसी न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता से सुसज्जित करने पर बल देती है (NEP 2020, para 5.5), जिससे प्रशिक्षक संस्थानों के विस्तार की आवश्यकता होगी।

इन्फ्रास्ट्रक्चरः ICT युक्त कक्षाएँ, पुस्तकालय, और स्मार्ट शिक्षण पद्धति लागू करने के लिए राज्यों को बड़ी मात्रा में निवेश करना होगा (Agarwal, 2021)।

उच्च शिक्षा पर प्रभावः

शोध आधारित शिक्षाः NRF के अंतर्गत संकायों और शोधार्थियों को वित्तीय सहायता देकर अनुसंधान उन्नयन की योजना है (Tilak, 2020)।

शिक्षा की लागत और समानताः निजी HEIs की वृद्धि और शुल्क संरचना शिक्षा तक पहुँच को प्रभावित कर सकती है (UNESCO, 2021)।

नीति क्रियान्वयन की वित्तीय चुनौतियाँ

राज्य-केंद्र निवेश असंतुलनः नीति के क्रियान्वयन हेतु केंद्र व राज्य दोनों की सहभागिता आवश्यक है, परंतु

अधिकतर राज्य शिक्षा पर GDP का 2.5% से कम ही व्यय करते हैं (Planning Commission Report, 2021)।

डिजिटल डिवाइडः ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट, स्मार्ट डिवाइस, और तकनीकी साक्षरता की कमी डिजिटलीकरण को बाधित करती है (UNESCO, 2021)।

शिक्षा वित्तीय नीति का अभावः भारत में अभी तक कोई स्पष्ट राष्ट्रीय शिक्षा वित्तीय नीति नहीं है जो दीर्घकालिक संसाधन प्रबंधन का मार्गदर्शन करे (Tilak, 2020)1

निजीकरण की प्रवृत्तिः अत्यधिक निजीकरण से उच्च शिक्षा में असमानता और योग्यता आधारित पहुँच सीमित हो सकती है (Agarwal, 2021)।

संभावनाएँ और रणनीतियाँ

PPP मॉडल का विस्तारः निजी क्षेत्र की भागीदारी से इन्फ्रास्ट्रक्चर, सामग्री निर्माण और तकनीकी नवाचार को बल मिल सकता है (Planning Commission, 2021)।

शिक्षक विकास निधिः शिक्षकों के निरंतर प्रशिक्षण हेतु पृथक कोष की स्थापना की जा सकती है। राज्य स्तरीय शिक्षा योजनाः प्रत्येक राज्य को पाँच वर्षीय शिक्षा निवेश योजना बनानी चाहिए जिसमें वित्तीय लक्ष्य और क्रियान्वयन पद्धति स्पष्ट हो।

डिजिटल साक्षरता मिशनः व्यापक डिजिटल शिक्षा मिशन चलाकर ग्रामीण क्षेत्रों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सकती है।

निष्कर्ष

नई शिक्षा नीति 2020 केवल पाठ्यक्रम सुधार या संस्थागत पुनर्गठन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन और आर्थिक विकास के सशक्त उपकरण के रूप में स्थापित करने की दिशा में एक गंभीर पहल है। इस नीति का मूल भाव है शिक्षा को समावेशी, बहुआयामी, और गुणवत्ता-संपन्न बनाना, ताकि भारत ज्ञान-आधारित वैश्विक अर्थव्यवस्था में अपनी सार्थक भूमिका निभा सके। नीति के आर्थिक पहलुओं का विश्लेषण स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि इसके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए केवल राजनीतिक इच्छाशक्ति पर्याप्त नहीं है, बल्कि इसके पीछे ठोस और दीर्घकालिक वित्तीय आधार का होना भी अनिवार्य है। शिक्षा बजट में वृद्धि, शोध एवं नवाचार के लिए समर्पित कोष, डिजिटल अधोसंरचना का सुदृढीकरण, और योग्य शिक्षक तैयार करने हेतु संसाधनों का विकास - ये सभी घटक मिलकर नीति को धरातल पर सफल बना सकते हैं।

हालाँकि, नीति के सामने कुछ व्यवहारिक चुनौतियाँ भी हैं, जैसे केंद्र एवं राज्यों के बीच निवेश में असंतुलन, ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल संसाधनों की कमी, और निजीकरण के कारण बढ़ती शैक्षिक असमानता। इन समस्याओं से निपटने के लिए नीति को सिर्फ कागजों पर सीमित न रखते हुए. जमीनी स्तर पर योजनाबद्ध क्रियान्वयन की आवश्यकता है। राज्यों को अपनी स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार वित्तीय योजनाएँ तैयार करनी होंगी, और केंद्र को उन्हें तकनीकी एवं वित्तीय सहयोग प्रदान करना होगा। अंततः कहा जा सकता है कि यदि NEP 2020 को आर्थिक दृष्टि से पर्याप्त समर्थन मिले, तो यह न केवल शिक्षा व्यवस्था को सशक्त बनाएगी, बल्कि भारत को आत्मनिर्भर, नवाचार-प्रधान और समावेशी राष्ट्र बनने की दिशा में भी सशक्त आधार प्रदान करेगी।

संदर्भ सूची (References)

1- Agarwal, P- (2021)- Understanding NEP 2020: A Policy Perspective- New Delhi: Academic Foundation-

2- Economic Survey of India- (2022-23)- Ministry of Finance, Government of India.

3- Ministry of Human Resource Development (MHRD)- (2020)- National Education Policy 2020- Government of India.
4- NCERT- (2023)- भारतीय आधुनिक शिक्षा, खंड 29, अंक 4.
5- Planning Commission of India- (2021)- Report on State Education Financing-
6- Tilak, J. B. G. (2020)- "Public Financing of Education in India"- Economic and Political Weekly, 55(12)-
7- UNESCO- (2021)- State of Education Financing in South Asia-
8- UDISE$- (2022)- Unified District Information System for Education Plus, Government of India-

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय समाज में महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य का समाजशास्त्री विश्लेषण

डॉ. अनीश कुमार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)
गाँधी स्मारक त्रिवेणी पी.जी. कालेज बरदह, आजमगढ़

सारांश

आज के आधुनिक युग में प्रत्येक मनुष्य के लिये शिक्षा बहुत जरूरी है। आधुनिक युग विज्ञान और सोशल मीडिया का युग है जिसमें अशिक्षित होना अभिशाप के समान है। जो महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक विकास में भाग लेने में सक्षम बनाती है। महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य और सशक्तिकरण समाज में पारम्परिक रूप से वंचित महिलाओं की आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति में अनिवार्य रूप से उत्थान की प्रक्रिया है। महिलाएं देश के विकास और परिवर्तन की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार है। भारत में महिलाएं अपेक्षाकृत अशक्त है। सरकार द्वारा किये गये प्रयासों के बावजूद भी पुरूषों की तुलना में असमानता के शिकार है। महिलाओं द्वारा असमान लैंगिक मापदण्डों की स्वीकृति अभी भी समाज में प्रचलित है। उन्हें बुनियादी संसाधनों से लेकर आस्तित्व तक लगभग हर चीज के लिए संघर्ष करना पड़ता है। स्वस्थ जीवन शैली और पौष्टिक भोजन का अधिक सेवन मनुष्य को जीवन भर अच्छा स्वास्थ्य प्रदान कर सकता है। उनके बचपन और प्रजनन आयु के दौरान स्वास्थ्य सुविधाओं के उपयोग पर खराब पोषण और अनभिज्ञता उच्च मातृ मृत्यु दर के प्रमुख कारक हैं। यद्यपि भारत सरकार महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार के लिए कई प्रयास कर रही है। वर्तमान अवलोकन प्रमुख कारकों पर केंद्रित है, जो भारत में महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं को प्रभावित करते हैं। इसलिये महिलाओं के लिये शिक्षा और स्वास्थ्य आवश्यक है, जिससे उनकी स्थिति में सुधार हो सके, ताकि वे बदलाव के लिये उत्प्रेरक का कार्य कर सकें।

मुख्य शब्दः महिलाओं में शिक्षा, साक्षरता, स्वास्थ्य, जैविक, सामाजिक।

परिचय : शिक्षा मनुष्यों को सशक्त बनाने का एक साधन है, विशेष रूप से महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए शिक्षा महत्वपूर्ण साधनों में से एक है। महिलाओं का सशक्तिकरण समृद्धि, लैंगिक समानता और सतत् विकास के लिए शिक्षा का होना अनिवार्य है। शिक्षा ही वह उपकरण है जिससे समाज में महिला अपनी सशक्त उपयोगी और समान भूमिका की अनुभूति करा सकती है। महिला शिक्षित होकर स्वयं लाभान्वित नहीं होती है बल्कि पूरा समाज लाभान्वित होता है। क्योंकि शिक्षित महिला से उसका परिवार तथा भावी पीढ़ी भी लाभान्वित होती है। जिससे स्वस्थ्य समाज का निर्माण होता है। और परिवार समाज निर्माण के आधार हैं। शिक्षा विवेकपूर्ण दृष्टिकोण के विकास तथा किसी प्रकार के कौशल की प्राप्ति के लिए पूर्णतया आवश्यक है। किसी भी समाज या राष्ट्र की प्रगति के लिए महिला शिक्षा का विशेष महत्व है। समाज में महिला का निम्न स्तरीय विकास, सामाजिक, आर्थिक स्तर पर निम्न भागीदारी तथा कुशलता का सीधा प्रभाव है। नवीनतम तकनीकों और

पद्धतियों को शिक्षा प्रणाली में शामिल करना आवश्यक है। जिससे एक मजबूत, साक्षर और उन्नत समाज की नींव रखी जा सके। महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी चिंता परस्पर संबंधित जैविक, सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों से प्रभावित होती है। आम तौर पर यह अपेक्षा की जाती है कि महिलाएं पुरुषों की तुलना में अधिक समय तक जीवित रह सकती हैं, यह जरूरी नहीं कि जीवन की बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करे। गहन अध्ययनों से पता चला है कि पूरे जीवन चक्र में महिलाएं पुरुषों की तुलना में अधिक बीमार और विकलांग होती हैं। यह सुझाव दिया गया है कि महिलाएं विशेष रूप से कमजोर होती हैं, जहां बुनियादी मातृत्व देखभाल उपलब्ध नहीं होती है। मां और बच्चे की पोषण स्थिति में सुधार करना, जो एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। इसलिए महिलाओं के स्वास्थ्य एवं चिंता में सुधार के लिए एक मजबूत और निरंतर सरकारी प्रतिबद्धता की आवश्यकता है।

भारत में महिला शिक्षा का इतिहास

महिला शिक्षा का विकास यात्रा प्राचीन वैदिक काल से जुड़ा हुआ है। उल्लेखनीय है कि वैदिक काल में लगभग 3000 से अधिक वर्ष पूर्व समाच में महिलाओं को एक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था। और उन्हें पुरुषों के समान समाज का एक महत्वपूर्ण अंग समझा जाता था। वैदिक काल के स्त्री शक्ति सिद्धान्त के अनुसार महिलाओं का पुजन देवी के रूप में शुरू हुई जैसे शिक्षा की देवी सरस्वती। वैदिक साहित्य में अध्ययनरत् महिला का उल्लेख किया गया है। वैदिक काल के अनुसार लड़के और लड़कियों दोनों का एक साथ उचित देखभाल और प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। पश्चिम भारत के ज्योतिबा फुले और उनकी पत्नी सावित्री बाई फुले ने महिला शिक्षा के लिए कार्य किये और वर्ष 1848 में पुणे में गर्ल्स स्कूल की शुरूआत करने वाले अग्रणी थे। बेथ्यून महिला कालेज वर्तमान में एशिया का सबसे पुराना कालेज है जिसकी स्थपना वर्ष 1879 में हुआ। इस समय गाँधी जी व अम्बेडकर जी द्वारा महिलाओं को समाज की मनु धारा में लाने का प्रयास सराहनीय रूप से देखा जाता है। और महिला शिक्षा दर पर सरकार ने वर्ष 1958 में एक राष्ट्रीय समिति का गठन किया जिसकी सभी सिफारिशें स्वीकार कर ली गयी। लड़के और लड़कियों के लिए एक समान पाठ्यकम हो इसी विषय पर गठित समिति ने वर्ष 1959 में विभिन्न चरणों में लागू करने की सिफारिशें की।

अध्ययन का उद्देश्य

1. भारतीय समाज में महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य का अध्ययन करना।
2. भारतीय समाज में महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य आने वाली चुनौतियों का अध्ययन करना।
3. भारतीय समाज में महिलाओं की वर्तमान शिक्षा तथा स्वास्थ्य का पता लगाने के लिये अध्ययन करना।
4. भारतीय समाज में महिला के शिक्षा एवं स्वास्थ्य के बढ़ावे का विश्लेषण करना।
5. भारतीय समाज में महिलाओं के लिये सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन करना।
6. ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने की दिशा में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता के बारे में जानना।

अनुसंधान क्रियाविधिः

इस शोध का अध्ययन पूर्ण रूप से वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। जिसमें महिला शिक्षा एवं स्वास्थ्य का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। वर्णनात्मक शोध विधि का उद्देश्य समस्या के संबंध में पूर्ण, यथार्थ एवं विस्तृत तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना है। अध्ययन की आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया गया डेटा विशुद्ध रूप से द्वितीयक ऑकड़ों पर आधारित प्रमाणित एवं विश्वसनीय स्रोत राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर की शोध, पत्र, पत्रिकाओं, लेखों, जनगणना से लिया गया है।

महिला शिक्षा की अवधारणा

आठ मार्च को पूरे विश्व में महिला दिवस मनाया जाता है। हरिवंश परसाई जी के व्यंग्य की पंक्ति है कि "दिवस कमजोरों के मनाये जाते है मजबूत लोगों के नहीं।" सशक्त होने का आशय केवल घर से बाहर निकलकर नौकरी करना या पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर चलना भर नहीं है। यहां पर सशक्त होने का आशय उनके निर्णय ले सकने की क्षमता का आधार है। जिससे कि वह अपना निर्णय स्वयं ले सके और किसी पर निर्भर न रहें। महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त होना उनके लिए बहुत आवश्यक है। महिलाएं दुनिया की आधी आबादी है। सृष्टि के निर्माण में उनका भी उतना ही सहयोग है जितना कि पुरूष का। महिलाओं को शिक्षित करना भारत में कई सामाजिक बुराइयों जैसे दहेज प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या और कार्यस्थल पर उत्पीड़न आदि को दूर करने में सहायक हो सकता है। तथा अधिक से अधिक महिलाएं श्रम कार्यों में हिस्सा ले पायेंगी जिससे देश के आर्थिक शक्ति में विकास होगा। महिलाओं को शिक्षित होने से बच्चों के पालन-पोषण और आहार को भी मजबूत आधार मिलता है। महिला शिक्षा किसी भी देश के विकास के लिए बहुत जरूरी है। जिसके लिए महिलाओं और लड़कियों को उचित संसाधन उपलब्ध कराना आवश्यक है। शिक्षित महिलाएं अपने परिवार के विकास के साथ ही देश के विकास में अहम भूमिका निभाती है। इस कारणों से महिलाओं को अपनी सुरक्षा, और अपनी पवित्रता एवं गरिमा को सुरक्षित रखने के लिए सशक्तिकरण की आवश्यकता होती है। महिला शिक्षा उन्हें सशक्त बनाने में बहुत महत्वपूर्ण है। तमाम क्षेत्रों में आवश्यक रूप से महिलाओं में शिक्षा और स्वास्थ्य को बढ़ाने की जरूरत है जिससे वे सशक्त, शक्तिशाली और सम्मानित बन सकें। वर्तमान में भारत सरकार ने महिला सशक्तिकरण के लिए अनेक योजनाओं को लागू किया है। भारतीय संबिधान ने अपने विभिन्न अनुच्छेदों के माध्यम से महिलाओं के लिए समान अधिकारों के द्वारा महिलाओं में शिक्षा को बढ़ावा देने का प्रावधान दिया गया।

महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी स्थिति

भारत में प्रचलित सांस्कृतिक और पारंपरिक प्रथाओं के कारण भारतीय महिलाओं का स्वास्थ्य की स्थिति बदतर होती जा रही है। यह बताया गया है कि जन्म के समय बच्चे के वजन पर अन्य कारकों के प्रभाव की तुलना में मां की पोषण स्थिति का प्रभाव अधिक व्यापक है। आमतौर पर खराब स्वास्थ्य वाली माताओं के कम वजन वाले शिशुओं का जन्म होता है। गर्भवती महिलाओं और किशोर लड़कियों के बाद स्तनपान कराने वाली महिलाओं में एनीमिया की घटना सबसे अधिक समस्या पाई गई। गर्भवती किशोरों, विशेष रूप से कम वजन वाले, विभिन्न जटिलताओं जैसे कि बाधित श्रम और अन्य प्रसूति संबंधी जटिलताओं के अधिक जोखिम में हैं। गर्भावस्था के दौरान स्वास्थ्य देखभाल के बारे में अनभिज्ञता के परिणामस्वरूप मां और बच्चे दोनों के लिए नकारात्मक परिणाम होते हैं। सही और उचित शिक्षा माताओं का उनके स्वास्थ्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। स्वास्थ्य गर्भधारण और सुरक्षित प्रसव सुनिश्चित करने के लिए स्वास्थ्य देखभाल के महत्व के बारे में महिलाओं को शिक्षित करने के लिए निश्चित कदम उठाए जाने चाहिए।

यौन भेदभाव

महिलाओं की गैर-आनुपातिक गरीबी, निम्न सामाजिक, आर्थिक स्थिति, यौन भेदभाव और प्रजनन भूमिका न केवल उन्हें विभिन्न बीमारियों के लिए उजागर करती है, बल्कि स्वास्थ्य सेवाओं तक उनकी पहुंच और उपयोग को भी उजागर करती है। महिलाओं के खिलाफ घरेलू हिंसा, बलात्कार और यौन शोषण उनकी उत्पादकता, स्वायत्तता, जीवन की गुणवत्ता और शारीरिक और मानसिक कल्याण को प्रभावित करते हैं। गर्भावस्था से संबंधित एनीमिया या रक्तस्राव से निपटने के लिए रक्त आधान प्रदान करने पर महिलाओं को एचआईवी संक्रमण भी हो जाता है। भेदभाव (बेटे को वरीयता) के साथ-साथ उनकी बेटियों के लिए उच्च दहेज लागत, विवाह, अक्सर बेटियों के साथ दुर्व्यवहार का परिणाम होता है। हालांकि दुनिया भर में महिलाओं ने जन्म के समय जीवन प्रत्याशा में वृद्धि की है, भारतीय महिलाओं के स्वास्थ्य से जुड़ी प्रणालीगत समस्याएं एक

विशिष्ट महिला लाभ की संभावना है। भारत में, पुरुषों और महिलाओं दोनों की जन्म के समय समान जीवन प्रत्याशा होती है। हालाँकि, भारत सरकार ने मौजूदा भेदभाव को कम करने के लिए आवश्यक कदम उठाए हैं। जिन बच्चों का जन्म निम्न स्तर की शिक्षा वाली माताओं से हुआ है, वे उच्च शिक्षा प्राप्त माताओं की तुलना में दो गुना अधिक पोषण संबंधी विकारों से पीड़ित हैं, जिसके लिये उनका भी शिक्षित होना अतिआवश्यक है।

पोषण की कमी

कैलोरी, प्रोटीन, विटामिन, और खनिजों की कमी और अन्य खराब स्वास्थ्य और सामाजिक स्थिति के कारण, दुनिया भर में लाखों महिलाओं और किशोर लड़कियों को प्रभावित करता है। पोषण की कमी एक गंभीर स्वास्थ्य चिंता भारतीय माताओं और उनके बच्चों के अस्तित्व के लिए खतरा है। इस प्रकार पर्याप्त पोषण किसी भी व्यक्ति के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए एक आवश्यक आधारशिला है। दुनिया भर में महिलाओं में दो सबसे आम पोषण संबंधी कमियां हैं। आयरन की कमी और एनीमिया। लगभग 80% भारतीय गर्भवती महिलाएं आयरन की कमी से होने वाले एनीमिया से पीड़ित हैं। पोषक तत्वों की कमी, जिसमें आयरन और आयोडीन की कमी और आवश्यक पोषक तत्वों का कम सेवन शामिल है। लड़कियों के बचपन के दौरान पोषण के कम सेवन से विकास अवरुद्ध हो सकता है, जो बदले में बच्चे के जन्म के दौरान और बाद में जटिलताओं के उच्च जोखिम की ओर ले जाता है। किशोरी लड़कियों में आयोडीन की कमी का सामान्य परिणाम है। मातृ कुपोषण अक्सर उनके प्रजनन चक्र के प्रकार के कारण होता है और वे घर के काम पर अधिक समय व्यतीत करती हैं। जिससे बचने के लिये उन्हें शिक्षित होना आवश्यक है।

मातृ मृत्यु दर

कई विकासशील देशों की तुलना में भारत में मातृ मृत्यु दर बहुत अधिक बनी हुई है। निम्न सामाजिक आर्थिक स्थिति और सांस्कृतिक बाधाओं के साथ-साथ स्वास्थ्य देखभाल तक सीमित पहुंच के कारण महिला स्वास्थ्य की कमी रही हैं। गंभीर एनीमिया भारत में सभी मातृ मृत्यु का 20% है। यह सुझाव दिया गया है कि उच्च साक्षरता में अधिक मातृ स्वास्थ्य के साथ-साथ शिशु मृत्यु दर भी कम होती है। भारत में महिला मृत्यु दर में वृद्धि के लिए हृदय रोग का प्रमुख योगदान है जो लिंगों के बीच स्वास्थ्य देखभाल के लिए अंतर पहुंच के कारण है। इसके अलावा, भारतीय महिलाएं भारतीय पुरुषों की तुलना में उच्च दर पर मानसिक अवसाद से पीडित हैं। लिंग आधारित हिंसा को रोकने के साथ-साथ महिलाओं की शैक्षिक और स्वास्थ्य स्थिति में सुधार के लिए सरकार द्वारा बहुत सख्त, मजबूत और निरंतर कानून बनाए जाने चाहिए।

निष्कर्ष

हमें यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि किसी भी देश के विकास के लिए महिला शिक्षा बहुत आवश्यक है। महिला शिक्षा और स्वास्थ्य के लिए लड़कियों और महिलाओं को उचित शिक्षा मुहैया कराना जरूरी हैं। वे अपने परिवार के विकास में अहम भूमिका निभाती हैं। इसके साथ ही महिलाओं में अपने देश के आर्थिक विकास में योगदान देने की क्षमता होती है। वर्तमान परिवेश में महिलाओं की स्थिति उतनी अच्छी नहीं है जितनी होनी चाहिए। हालांकि वर्तमान समय में हमारे देश की महिलाओं की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। उनकी पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक स्थिति में परिवर्तन आया है। महिलाओं की स्थिति सुधारने और उनका प्रगतिशील विकास करने के लिए भारत सरकार के अनेक योजनाओं के लाभ प्राप्ति के साथ ही समाज के प्रत्येक व्यक्ति को सोचना होगा और उसके लिए ठोस कदम उठाने होंगे जिससे वे शिक्षित और स्वास्थ्य में सुधार कर सकें। बदलते परिवेश में जैसे-जैसे महिलाओं में शिक्षा का रुझान बढ़ा है, शिक्षित हुई है वे उसी प्रकार से सामाजिक, आर्थिक और स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी सुदृढ़ हुई हैं तथा आत्मनिर्भर बनीं है। महिलाओं को शिक्षित और स्वस्थ्य बनाने में समाज की भूमिका महत्वपूर्ण है। अच्छी शिक्षा और स्वास्थ्य कल्याण और आर्थिक विकास में योगदान देता है। सरकार को साक्षरता

दर और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा में सुधार के साथ-साथ महिलाओं के लिए पर्याप्त रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए आवश्यक और अनिवार्य नीतियां अपनानी चाहिए, जो महिलाओं के स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं पर सकारात्मक प्रभाव का पता लगा सकती हैं। सरकार आवश्यक शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं को मजबूत और विस्तारित करने के साथ-साथ सुरक्षित शैक्षिक और पोषण संबंधी जरूरतों पर जागरूकता पर लगातार परामर्श करके महिलाओं की शिक्षा और स्वास्थ्य स्थिति में सुधार करने का अहम हिस्सा बन सकती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गिंटर ई, सिमको वी, महिलाएं पुरुषों की तुलना में अधिक समय तक जीवित रहती हैं ब्रातिसल लेक लिस्टी 2013
2. ओनारहाइम के एच, इवर्सन जे एच, ब्लूम डीई, महिलाओं के स्वास्थ्य में निवेश के एक व्यवस्थित समीक्षा–2016 आर्थिक लाभ।
3. ब्रांका एफ, पिवोज ई, शुल्टिंक डब्ल्यू, एट अल, महिलाओं, बच्चों और किशोरियों में पोषण और स्वास्थ्य–बीएमजे 2015
4. धर्मलिंगम ए, नवनेथन के, कृष्णकुमार सीएस, भारत में माताओं की पोषण स्थिति और जन्म के समय कम वजन–मातृ बाल स्वास्थ्य 2010 पृ.सं. 290
5. मल्लिकार्जुन राव के, बालकृष्ण एन, अर्लप्पा एन, एट अल, भारत में महिलाओं के आहार और पोषण की स्थिति जे हम इकोल 2010 पृ.सं. 165-170
6. मकोल नीलम, संदीप शर्मा सामाजिक विकास में शिक्षित महिलाओं का योगदान, कुरूक्षेत्र, सितम्बर 2006।
7. अल्तेकर, डॉ. अनन्त सदाशिव प्राचीन भारतीय शिक्षण–नन्द किशोर एण्ड ब्रदर्स, वाराणसी 1986 पृष्ठ 155
8. लवानिया, एम. एम. 1989, समाजशास्त्रीय अनुसंधान का तर्क एवं विधियाँ–रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर।
9. कनिटकर मुकुल भारत में महिला शिक्षा, समाज व सरकार की भूमिका–योजना सितम्बर 2016।
10. तिवारी, आर. पी. 1999, भारतीय नारीः वर्तमान समस्याएं एवं समाधान, नई दिल्ली।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारतीय ज्ञान-विज्ञान की परम्परा का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. अजय कुमार सोनकर
असिस्टेन्ट प्रोफेसर - समाजशास्त्र विभाग
डी.ए.वी. पी.जी. कालेज, आजमगढ़

सारांश

भारतीय ज्ञान-विज्ञान की गौरवमयी परंपरा बहुत ही प्राचीन है जो सम्पूर्ण जगत को आलोकित करने वाली है इसमें ज्ञान, विज्ञान दर्शन कला और संस्कृति का समावेश है और इसका आरंभ वेदों से माना जाता है। भारतीय ज्ञान-विज्ञान परंपरा एक समृद्ध और विविधतापूर्ण इतिहास रखती है, क्योंकि यह परंपरा हजारों सालों से चली आ रही है। जो सदियों से मानव सभ्यता को आकार देती रही है। यह परंपरा सिर्फ भारत की सीमाओं तक ही सीमित नहीं रही है, बल्कि विश्व के विभिन्न हिस्सों में इसका गहरा प्रभाव पड़ा है। भारतीय ज्ञान वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों, लोककथाओं और पारंपरिक प्रथाओं से समृद्ध है, जो शासन, नैतिकता, पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक संरचना और आध्यात्मिक ज्ञान सहित विभिन्न विषयों को समाहित करती है। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद न केवल धार्मिक ग्रंथ हैं, बल्कि इनमें विज्ञान, गणित, चिकित्सा, खगोलशास्त्र और दर्शन के गहरे बीज भी निहित हैं। महाभारत, रामायण, मनुस्मृति, कौटिल्य का अर्थशास्त्र, चरक और सुश्रुत संहिता जैसे ग्रंथों ने राजनीति, समाजशास्त्र, अर्थव्यवस्था और चिकित्सा विज्ञान में अद्वितीय योगदान दिया। इन ग्रंथों में पुरातन में ही नवीनता निहित है। वर्तमान युग में जब मानव सभ्यता तकनीकी प्रगति, उपभोक्तावाद और वैश्वीकरण की ओर तीव्र गति से अग्रसर है, तब भारतीय ज्ञान परंपरा कई प्रकार की चुनौतियों से जूझ रही है। जिसका समाधान शिक्षा में समावेश, अनुवाद और डिजिटलीकरण, स्थानीय भाषाओं का प्रोत्साहन, आध्यात्मिक पुनर्जागरण सांस्कृतिक चेतना का विकास किया जा सकता है।

मुख्य शब्द : भारतीय ज्ञान परंपरा, समाजशास्त्रीय विश्लेषण मूल्यांकन, सामाजिक उत्तरदायित्व, परंपराएँ पर्यावरण चेतना, वैश्विक प्रभाव, समकालीन शिक्षा।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति और सभ्यता ने सदियों से विज्ञान, गणित, खगोल, चिकित्सा, आयुर्वेद और दर्शन जैसे अनेक क्षेत्रों में अद्वितीय योगदान दिया है। भारतीय मनीषियों ने अपने गहन चिंतन और अनुसंधान से न केवल अपने देश में बल्कि वैश्विक स्तर पर भी ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान हासिल किया। भारतीय ज्ञान सदियों से चला आ रहा है, जिसमे वेदों का बड़ा योगदान रहा है, वेद भारतीय सभ्यता के सबसे पुराने ग्रंथ हैं, जिनमें ज्ञान के कई आयामों का वर्णन मिलता है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में प्राकृतिक विज्ञान, चिकित्सा और गणित के सिद्धांतों का वर्णन मिलता है। ज्ञान वह सूचना, तथ्य, समझ और अनुभव है जिसे व्यक्ति द्वारा सीखा, अर्जित या समझा जाता है। यह किसी विशेष विषय या वस्तु के बारे में गहन जानकारी और समझ का परिणाम होता है। ज्ञान केवल जानकारी तक सीमित नहीं होता, बल्कि व्यक्ति की

अनुभवजनित समझ, तर्क और विश्लेषणात्मक क्षमता को भी शामिल करता है। इसका उद्देश्य व्यक्ति को सही निर्णय लेने और समस्याओं का समाधान करने में सक्षम बनाना होता है। विज्ञान एक प्रणालीबद्ध अध्ययन है जो प्राकृतिक और भौतिक दुनिया के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए निरीक्षण, प्रयोग, विश्लेषण और परीक्षण का उपयोग करता है। यह ज्ञान की वह शाखा है जो तथ्यों, सिद्धांतों और नियमों के आधार पर ब्रह्मांड के विभिन्न पहलुओं की व्याख्या करती है। भारतीय ज्ञान प्रणाली सदियों से भारत की सांस्कृतिक, दार्शनिक और बौद्धिक परंपराओं की आधारशिला रही है। इन ज्ञान प्रणालियों ने भारत की पहचान को आकार दिया है और विविधता में एकता की अवधारणा को सशक्त किया है। आधुनिक युग में, वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों ने पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के सामने नई चुनौतियाँ प्रस्तुत की हैं। आज के संदर्भ में भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता शासन, शिक्षा, सतत विकास और सामाजिक समरसता जैसे क्षेत्रों में विशेष अध्ययन और विश्लेषण का विषय बनी हुई है।

यह शोध पत्र प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपराओं के उन मूलभूत सिद्धांतों की पड़ताल करता है, जो आधुनिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर सकते हैं और बदलते युग की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढाल सकते हैं। ऐतिहासिक स्रोतों, समाजशास्त्रीय दृष्टिकोणों और समकालीन प्रयोगों के आधार पर यह अध्ययन भारतीय ज्ञान परंपराओं के सतत महत्व को उजागर करेगा और यह बताएगा कि कैसे ये परंपराएँ एक न्यायसंगत, सामंजस्यपूर्ण और स्थायी वैश्विक समाज के निर्माण में योगदान दे सकती हैं।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान का इतिहास

ज्ञान-विज्ञान का इतिहास भी बेहद समृद्ध रहा है। इसमें खगोल, गणित, और चिकित्सा विज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिकाएं हैं। भारत की ज्ञान-विज्ञान परंपरा का वैश्विक प्रभाव भी गहरा रहा है। कई प्राचीन भारतीय विचार और सिद्धांत पश्चिमी विज्ञान और दर्शन पर भी प्रभाव डाल चुके हैं। भारतीय ज्ञान-विज्ञान का हमारी जिन्दगी पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्राचीन भारत में शिक्षा का माध्यम गुरुकुल प्रणाली थी, जहां छात्र अपने गुरु के सानिध्य में ज्ञान प्राप्त करते थे। यह प्रणाली संपूर्ण और समग्र शिक्षा प्रदान करती थी। भारत में योग और आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति की परंपरा भी अत्यंत समृद्ध रही है, जो शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य का संतुलन स्थापित करती है। आर्यभट्ट और वराहमिहिर ने गणित और खगोल विज्ञान में जो योगदान दिया है, वह आज भी वैज्ञानिक समाज द्वारा मान्यता प्राप्त है। आर्यभट्ट ने शून्य की खोज की और ग्रहों की गति का अध्ययन किया। रामानुजन ने गणित के क्षेत्र में अद्वितीय योगदान दिया। उनके सिद्धान्तों ने आधुनिक गणित को नई दिशा दी। मध्यकालीन और आधुनिक भारत में ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण खोज और विकास हुआ। सी.वी. रमन, ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम और विक्रम साराभाई जैसे वैज्ञानिकों ने भारतीय ज्ञान-विज्ञान को वैश्विक मंच पर स्थापित किया। कई प्राचीन भारतीय विचार और सिद्धांत पश्चिमी विज्ञान और दर्शन पर भी प्रभाव डाल चुके हैं।

भारतीय ज्ञान प्रणाली सदियों से भारत की सांस्कृतिक, दार्शनिक और बौद्धिक परंपराओं की आधारशिला रही है। इन ज्ञान प्रणालियों ने भारत की पहचान को आकार दिया है और विविधता में एकता की अवधारणा को सशक्त किया है। आधुनिक युग में, वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों ने पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के सामने नई चुनौतियाँ प्रस्तुत की हैं। आज के संदर्भ में भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता शासन, शिक्षा, सतत विकास और सामाजिक समरसता जैसे क्षेत्रों में विशेष अध्ययन और विश्लेषण का विषय बनी हुई है। यह शोध पत्र प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान परंपराओं के उन मूलभूत सिद्धांतों की पड़ताल करता है, जो आधुनिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर सकते हैं और बदलते युग की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढाल सकते हैं। ऐतिहासिक स्रोतों, समाजशास्त्रीय दृष्टिकोणों और समकालीन प्रयोगों के आधार पर यह अध्ययन भारतीय ज्ञान-विज्ञान परंपराओं के सतत महत्व को उजागर करेगा और यह बताएगा कि कैसे ये परंपराएँ एक न्यायसंगत, सामंजस्यपूर्ण और स्थायी वैश्विक समाज के निर्माण में योगदान दे सकती हैं।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान परंपरा का ऐतिहासिक विश्लेषण

भारतीय ज्ञान-विज्ञान परंपरा की जड़ें वैदिक काल से भी पहले की हैं। ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद न केवल धार्मिक ग्रंथ हैं, बल्कि इनमें विज्ञान, गणित, चिकित्सा, खगोलशास्त्र और दर्शन के गहरे बीज भी निहित हैं। इन ग्रंथों में वर्णित ऋचाएँ केवल आध्यात्मिक नहीं थीं, बल्कि जीवन के व्यवहारिक पहलुओं का भी निर्देशन करती थीं। इसके अतिरिक्त, भारत की बौद्ध, जैन और अन्य दर्शनों की परंपराएँ भी ज्ञान-विज्ञान की विविधता और बहुलता को दर्शाती हैं। तक्षशिला, नालंदा और विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों में देश-विदेश के छात्र अध्ययन के लिए आते थे। यह परंपरा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं थी, बल्कि जीवन शैली, कृषि, जल प्रबंधन, वास्तुकला और कला में भी समाहित थी। ब्रिटिश उपनिवेश काल में इन परंपराओं को प्रायोजित रूप से कमजोर किया गया, जिसके पश्चात् ज्ञान-विज्ञान प्रणाली को प्राथमिकता मिली और भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ हाशिए पर चली गईं। परंतु आज फिर से इन मूल्यों और विचारों को पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है, ताकि हम अपने अतीत से प्रेरणा लेकर अपने भविष्य को उज्जवल बना सकें।

समाजशास्त्रीय विश्लेषण

भारतीय ज्ञान-विज्ञान परंपरा का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन करते समय यह समझना आवश्यक है कि यह परंपरा केवल बौद्धिक अभ्यास नहीं थी, बल्कि समाज के संगठन और संचालन का भी आधार थी। भारत की सामाजिक संरचना - वर्ण, आश्रम, जाति, परिवार, ग्राम व्यवस्था, धर्म और कर्तव्य जैसे सिद्धांतों के सभी भारतीय ज्ञान प्रणालियों में निहित थे और समाज के संतुलन एवं संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। इन आश्रमों ने न केवल व्यक्तिगत जीवन को अनुशासित किया, बल्कि सामूहिक सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना भी उत्पन्न की। इसी प्रकार, वर्ण व्यवस्था का मूल उद्देश्य समाज में कार्य-विभाजन द्वारा दक्षता और सामंजस्य स्थापित करना था, हालाँकि कालांतर में इसका विकृत रूप जाति-आधारित भेदभाव के रूप में सामने आया।

सामाजिक समरसता, पारिवारिक मूल्य, सह-अस्तित्व और सहिष्णुता जैसे सिद्धांत भारतीय समाज की नींव रहे हैं। भारतीय ग्राम व्यवस्था, जिसमें स्थानीय स्वराज, जल-प्रबंधन, सामूहिक निर्णय-प्रणाली जैसे तत्त्व शामिल थे, आज की विकेन्द्रीकृत शासन प्रणाली (Panchayati Raj) के आधार बन सकते हैं। नारी की भूमिका भी भारतीय ज्ञान परंपरा में महत्वपूर्ण रही है। गार्गी, मैत्रेयी, अपाला जैसी स्त्रियाँ ज्ञान-विज्ञान में पुरुषों के समकक्ष मानी गईं। समाज में महिलाओं की भागीदारी और सम्मान ज्ञान परंपरा की समावेशिता का प्रमाण है। वर्तमान समाजशास्त्रीय संदर्भ में, इन परंपराओं का पुनर्मूल्यांकन करके हम सामाजिक समरसता, नैतिकता और सामुदायिक विकास को नई दिशा दे सकते हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि भविष्य की संभावनाओं का भी संकेतक है। भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा एक समृद्ध और विविध परम्परा है, जो जीवन के विभिन्न पहलुओं को समझने में मदद करती है। इसका समाजशास्त्री विश्लेषण करने से पता चलता है कि यह परम्परा सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक विरासत, और आधुनिकता के साथ समन्वय पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान परम्परा का समाजशास्त्री विश्लेषण करने पर पता चलता है कि यह परम्परा न केवल प्राचीन समय में उन्नत थी, बल्कि आज भी इसका महत्व कम नहीं हुआ है। यह परम्परा विभिन्न विषयों जैसे कि दर्शन, विज्ञान, कला, और साहित्य में समृद्ध है।

1. **सामाजिक संरचना पर प्रभावः** भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा ने सामाजिक संरचना पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है, जैसे कि जाति व्यवस्था और वर्ण व्यवस्था।

2. **सांस्कृतिक विरासत का संरक्षणः** यह परम्परा सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करती है, जो देश की सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखने में मदद करती है।

3. आधुनिकता के साथ समन्वयः भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा को आधुनिकता के साथ समन्वय करने की आवश्यकता है, जिससे यह परम्परा वर्तमान समय में भी प्रासंगिक बनी रहे।

4. आध्यात्मिक और भौतिक ज्ञान का समावेशः भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा में आध्यात्मिक और भौतिक ज्ञान दोनों का समावेश है, जो जीवन के विभिन्न पहलुओं को कवर करता है।

5. विविध विषयों का समावेशः इसमें विभिन्न विषयों जैसे कि दर्शन, विज्ञान, कला, और साहित्य का समावेश है, जो जीवन के विभिन्न पहलुओं को समझने में मदद करता है।

6. प्राचीन ग्रंथों का महत्वः भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा में प्राचीन ग्रंथों का महत्व है, जो ज्ञान और समझ के स्रोत के रूप में कार्य करते हैं।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान और पर्यावरण चेतना

भारतीय ज्ञान-विज्ञान में प्रकृति को केवल संसाधन नहीं, अपितु माता के रूप में देखा गया है। यह दृष्टिकोण केवल आध्यात्मिक नहीं बल्कि गहरी पारिस्थितिक समझ का परिचायक है। वेदों और उपनिषदों में 'ऋतु' (संतुलन) की अवधारणा है, जो ब्रह्मांड में प्रकृति के महत्व को दर्शाती है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह इस ऋतु के अनुसार जीवन जिए, न अधिक उपभोग करे, न शोषण करे। यही विचार आज की स्थायी विकास (Sustainable Development) अवधारणा से मेल खाता है। भारतीय कृषि परंपराएँ जैसे पंचमहाभूतों (भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश) के संतुलन पर आधारित खेती, जैविक खादों का प्रयोग, जल संचयन, और पशुपालन, पर्यावरण के साथ सह-अस्तित्व की भावना को दर्शाते हैं। पुराणों और स्मृतियों में वृक्षों की पूजा (पीपल, वट, तुलसी) इस बात का प्रमाण है कि हमारे पूर्वजों ने जैव विविधता की रक्षा को सांस्कृतिक जीवन में पिरो दिया था। गोवर्धन पूजा, नर्मदा परिक्रमा, या गंगा स्नान जैसे अनुष्ठान प्राकृतिक संरक्षण के प्रतीक हैं। आज जब पृथ्वी जलवायु संकट, प्रदूषण, और संसाधन क्षरण से जूझ रही है, तब भारतीय ज्ञान परंपरा की यह पर्यावरण चेतना एक वैकल्पिक मार्ग प्रस्तुत करती है। यदि इस दृष्टिकोण को आधुनिक नीतियों, शिक्षा, और जीवनशैली में अपनाया जाए, तो सतत विकास के लक्ष्य सहज और सुलभ बनाया जा सकता हैं।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान का वैश्विक प्रभाव

भारतीय ज्ञान-विज्ञान की जड़ें जितनी गहरी हैं, उसका वैश्विक प्रभाव उतना ही व्यापक है। प्राचीन भारत न केवल ज्ञान का स्रोत रहा है, बल्कि इस ज्ञान का प्रसार विश्व के कोने-कोने तक हुआ। योग और ध्यान आज दुनिया भर में मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए अपनाए जा रहे हैं। गणित और खगोल विज्ञान में भारत का योगदान अभूतपूर्व रहा है। आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, और भास्कराचार्य जैसे विद्वानों के ग्रंथों का अनुवाद अरबी, लैटिन और फारसी में हुआ, जिसने यूरोप की वैज्ञानिक क्रांति को दिशा दी। आयुर्वेद, जो जीवन को शरीर, मन और आत्मा की एकता मानता है, आज 'Alternative Medicine' के रूप में अमेरिका, यूरोप और ऑस्ट्रेलिया में लोकप्रिय हो रहा है। आयुर्वेदिक औषधियों और जीवनशैली को कई देशों की स्वास्थ्य नीतियों में स्थान मिल रहा है। यह स्पष्ट है कि भारतीय ज्ञान परंपरा की जड़ें सीमाओं से परे जाकर मानवता की सेवा कर रही हैं। आधुनिक युग में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को पुनः जीवित करने के लिए यह वैश्विक प्रभाव अत्यंत प्रेरणादायी है।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान और परंपरा का वर्तमान विश्लेषण

भारतीय ज्ञान विज्ञान परंपरा आज भी अत्यंत प्रासंगिक है। यह प्राचीन ज्ञान प्रणाली न केवल भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है, बल्कि आधुनिक समस्याओं के समाधान में भी उपयोगी है। शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण और सामाजिक विकास जैसे विभिन्न क्षेत्रों में इस परंपरा के अनुप्रयोग होते हैं।

विश्लेषण के क्षेत्रः

शिक्षाः राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भारतीय ज्ञान परंपरा को प्रमुखता दी गई है और उच्च शिक्षण संस्थानों को इस परंपरा को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया गया है।

स्वास्थ्यः आयुर्वेद, योग और अन्य पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ आज भी लोकप्रिय हैं और स्वास्थ्य सेवा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

पर्यावरणः भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति के साथ सामंजस्य और सतत विकास के सिद्धांतों को महत्व दिया गया है।

सामाजिक विकासः भारतीय ज्ञान परंपरा में समाज के विभिन्न पहलुओं, जैसे कि नैतिकता, धर्म, और सामाजिक जिम्मेदारी पर जोर दिया गया है।

उदाहरण-

आयुर्वेद, जो प्राचीन भारतीय चिकित्सा प्रणाली है, आज भी स्वास्थ्य सेवा में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। योग, जो भारतीय ज्ञान परंपरा का एक अभिन्न अंग है. शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए एक प्रभावी अभ्यास है। भारतीय ज्ञान परंपरा में पर्यावरण के संरक्षण और सतत विकास के सिद्धांतों को भी शामिल किया गया है।

निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान-विज्ञान और परंपरा न केवल प्राचीन काल में बल्कि आज भी विज्ञान, चिकित्सा, गणित और अन्य क्षेत्रों में अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए है। भारतीय ज्ञान विज्ञान व परम्परा एक समृद्ध और बहुआयामी ज्ञान प्रणाली है जो आज भी प्रासंगिक है यह शिक्षा स्वास्थ्य पर्यावरण और समाजिक विकास जैसे विभिन्न क्षेत्रों में उपयोगी है। भारतीय ज्ञान परम्पराये मनुष्य की आन्तरिक शान्ति और मन की भावनाओं को नियन्त्रण में रख सकती है। आज हमारे सामने कई समस्यायें है जिनका सामाधान भारत के प्राचीन ज्ञान और विज्ञान में निहित है। यह परम्परा हमे तनाव प्रबन्धन स्थिरता और समाज के विकास के लिए व्यवहारिक सुझाव देती है यह ज्ञान का विशाल भण्डार है जिसका उपयोग लोगों, समुदायों और मानवता के विकास के लिए किया जा सकता है। भारत के मनीषियों और वैज्ञानिकों का योगदान आने वाले समय में भी अमूल्य रहेगा।

भारतीय ज्ञान-विज्ञान और परंपरा केवल एक प्राचीन धरोहर नहीं, बल्कि एक जीवंत, गतिशील और सार्वकालिक दर्शन है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो भारतीय ज्ञान-विज्ञान और परंपरा ने सामाजिक समरसता, सह-अस्तित्व और कर्तव्य के सिद्धांतों को केंद्र में रखा। आधुनिक समय की चुनौतियाँ जैसे भौतिकतावाद, नैतिक क्षरण, मानसिक तनाव और पर्यावरण सबका समाधान ज्ञान-विज्ञान की परंपरा की मूल भावना में निहित है। भारतीय ज्ञान परंपरा न केवल प्रासंगिक है, बल्कि वर्तमान और भविष्य की दिशा भी तय कर सकती है। आवश्यकता केवल इतनी है कि हम इस परंपरा को श्रद्धा के साथ पुनर्परिभाषित करें, उसे अपने जीवन और नीतियों में पुनः स्थान दें, और उसे केवल अतीत की स्मृति न मानकर वर्तमान की शक्ति और भविष्य की प्रेरणा मानें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय ज्ञान विज्ञान परम्परा शिप्रा पब्लिकेशंस 01 जनवरी 2023 शिप्रा पब्लिकेशंस
2. कपूर भयामनारायण प्राचीन भारत में विज्ञान और शिल्प साहित्य निकेतन, कानपुर 1998.
3. वैदिक साहित्य और संस्कृति- डॉ. रामगोपाल
4. भारतीय शिक्षा का इतिहास -अल्तेकर, ए. एस.

5. भारतीय गणित की गाथा- प्रो.ए.के. बाग
6. प्राचीन भारत में विज्ञान और समाज—देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय
7. राजनीतिक पाठ के रूप में अर्थशास्त्र—रोजर बोशे
8. प्राचीन भारत में महिलाएँ—ए. एस. अल्टेकर (शिक्षा में लैंगिक भूमिकाओं के लिए)।

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. शक्ति जायसवाल

एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान विभाग)

बुद्ध विद्यापीठ पी0जी0 कॉलेज, नौगढ़-सिद्धार्थनगर

for the paper titled

अस्थिर बांग्लादेश और शेख हसीना के पलायन की वर्षगांठः सपने और हकीकत

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Ritu
Research Scholar,
Commerce Department, Singhania University,
Jhunjhunu, Rajasthan

for the paper titled

Microfinance and Women Empowerment: A Study on Gendered Economic Marginality in India

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Vinod Kumar Sharma
Professor Tantia University, Sri Ganganagar
Archana Chalana
Ph. D. (Mathematics) Scholar
Tantia University, Sri Ganganagar

for the paper titled

Fuzzy Game Theory: Optimum Decision Making in Uncertain Environments

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Utkal Kushawah
Assistant Professor (Economics),
Indore Institute of Law
Dr. Anshula Kushawah
Assistant Professor, Idyllic Institute of Management, Indore

for the paper titled

INDIGENOUS ECONOMIC PRACTICE TO ACHIEVE SUSTAINABLE DEVELOPMENT IN INDIA

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अनिरुद्ध वायन
प्राध्यापक हिन्दी विभाग
मध्य कामरूप कॉलेज

for the paper titled

भक्ति रस तरंगिनी में रूपक तत्व

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. K.K. Sharma
Associate Professor
Guru Ghasidas Central University Bilaspur (C.G.)

for the paper titled

The Role of MGNREGA in Enhancing Livelihood Security Among Tribal Communities: A Case Study of the Oraon Tribe in Jashpur District, Chhattisgarh

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

तहरीम फातमा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुज़फ्फरपुर

for the paper titled

'जिस लाहौर नई देख्या ओ जम्याइ नई' में निहित मानवीय एवं सामाजिक सरोकार

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

तहरीम फातमा
शोधार्थी, हिंदी विभाग
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुज़फ्फरपुर

for the paper titled

नाटक के सैद्धांतिक प्रतिमान : एक विश्लेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

रेमीसा सी.यु.
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय कालडी (केरल)

for the paper titled

नई सदी, पुरानी बेड़ियाँ : शिक्षित समाज में दलितों की स्थिति और रजत रानी मीनू की दृष्टि

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. संजय कुमार यादव
सहायक प्राध्यापक
राम लखन सिंह यादव कॉलेज
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय

for the paper titled

संत रज्जब की काव्य-चेतना

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. सुषमा माधवराव नरांजे
सहयोगी प्राध्यापक (हिंदी विभाग)
श्रीमती रेवाबेन मनोहरभाई पटेल महिला कला महाविद्यालय, भंडारा (महाराष्ट्र)

for the paper titled

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'रश्मिरथी' खंडकाव्य में वर्णित समस्याओं की विवेचना

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

उमेश कुमार
शोधार्थी, संगीत विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ

for the paper titled

सरोद सम्राट उस्ताद अमजद अली खान का भारतीय शास्त्रीय संगीत को योगदान

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

मोहम्मद इबादुर रहमान खान

नामांकन संख्या : AU 211536, RDC - RNTU/R-D/23/068

डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय

शोध निर्देशक, सह आचार्य, हिंदी विभाग, रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्य प्रदेश

for the paper titled

कर्म और श्रम ही विकास का मूल : एक दार्शनिक, सामाजिक-आर्थिक और व्यक्तिगत विश्लेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अशोक कुमार

शोध निदेशक, प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़

संदीप कुमार

पीएच० डी० शोधार्थी, गाँव व डाक- गुढ़ा कैमल, तहसील- कनीना, जिला- महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

for the paper titled

हिंदी साहित्य में यथार्थ का सौंदर्यबोध

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. ज्योतिमा सिंह
अस्सिटेंट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान), राजा मोहन गर्ल्स पी. जी. कॉलेज, अयोध्या (उ. प्र.)
दीपिका शुक्ला
शोध छात्रा (राजनीति विज्ञान)
राजा मोहन गर्ल्स पी. जी. कॉलेज, अयोध्या (उ. प्र.)

for the paper titled

देश की प्रगति में बाधक दलगत राजनीति

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

शकुंतला जोशी
(शोधार्थी) जैन विश्व भारती (डीम्ड यूनिवर्सिटी, लाडनूं)
प्रो. बनवारी लाल जैन, शिक्षा शास्त्र विभाग
जैन विश्व भारती (डीम्ड यूनिवर्सिटी, लाडनूं)

for the paper titled

रामायण में उल्लेखित मूल्य शिक्षा के पदों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

रचना चौधरी

शोधार्थी, हिंदी विभाग, मणिपुर इंटरनेशनल विश्वविद्यालय

डॉ. तिलिग कमलावती देवी

निर्देशक, प्रोफेसर एवम विभागाध्यक्ष भारतीय भाषा विभाग (हिंदी) मणिपुर इंटरनेशनल विश्वविद्यालय

डॉ. मो. मजीद मियॉ

सह निर्देशक, सहायक अध्यापक, हिंदी विभागाध्यक्ष, श्री अग्रसेन महाविद्यालय

for the paper titled

नासिरा शर्मा और बदलते समाज में नारी की छवि

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Ravi Shankar Kumar
Assistant Professor in French
Arignar Anna Govt. Arts and Science College, Karaikal, Puducherry

for the paper titled

Indian Knowledge System vs. French Knowledge System: A Comparative Reflection

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सागर सैन

शोधार्थी, हिंदी विभाग

राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय किशनगढ़, अजमेर

for the paper titled

प्रेमचंद का कहानी संग्रह सोज़े वतन, आत्मकथा, प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य व निबंधों में राष्ट्रीयता का बोध

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

रनिका शेखावत

शोधार्थी, हिंदी विभाग

राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय किशनगढ़, अजमेर

for the paper titled

प्रेमचंद की साहित्यिक छवि : 'प्रेमचंद घर में' और 'कलम का सिपाही' के आलोक में एक साहित्यिक अन्वेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सुरेश कुमार मौर्य
सहायक आचार्य
राजस्थान शिक्षक प्रशिक्षण विद्यापीठ,
शाहपुरा बाग, आमेर रोड़, जयपुर (राज.)

for the paper titled

चार वर्षीय इन्टीग्रेटेड बी. एड. पाठ्यचर्या के प्रति प्रशिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Robina
Assistant Professor
V N S P G College Parashurampur, Chandauli (U.P.)
Education Department

for the paper titled

INDIGENOUS KNOWLEDGE SYSTEMS AND MODERN PEDAGOGY INTEGRATION

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. P. SRIVALLI
Lecturer In Sanskrit
Skr Govt. Degree College (W)
Rajamahendravaram, Andhra Pradesh

for the paper titled

जगन्नाथपण्डितस्य वैदुष्यम्

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Atul Kumar
Assistant Professor
Shri Ram College, Muzaffarnagar (Uttar Pradesh)

for the paper titled

TRANSFORMING BUSINESS EDUCATION IN INDIA: A 21st CENTURY PERSPECTIVE

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Anupama
Assistant Professor, Department of Hindi
Mount Carmel College, Autonomous,
#58, Palace Road, Abshot Layout,
Vasanth Nagar, Bangalore

for the paper titled

नारी विमर्श : विचार, चुनौती और प्रगति

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

कौसर साबिदा सुलताना
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ

for the paper titled

किसान जीवन पर केंद्रित प्रतिबंधित भोजपुरी लोकगीत एवं कविताओं का स्वतंत्रता संग्राम पर प्रभाव

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. यशवीर दहिया

शोध निर्देशक :- श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़ (राज.)

श्रीमती प्रेमलता व्यास

शोधार्थी पी.एच.डी. :- श्री खुशालदास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़ (राज.)

for the paper titled

डॉ. आरती लोकेश की कहानियों में सामाजिक चेतना

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

आशु प्रज्ञा

शोधार्थी,

हिन्दी, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार

for the paper titled

किन्नर समाज का संघर्ष : एक विश्लेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सुनिधि कुमारी
(शोधार्थी)
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

for the paper titled

फिल्म : मनोरंजन एवं शिक्षा का सशक्त माध्यम (हिन्दी फिल्मों के संदर्भ में)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

कमलेश माथुर
Ph.D. Scholar
Department of B.Ed./M.Ed. (IASE),
M.J.P. Rohilkhand University, Bareilly, Uttar Pradesh, India

for the paper titled

अभिभावकों की भागीदारी और दृष्टिकोण : समावेशी शिक्षा की दिशा में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. साधना यादव

असिस्टेंट प्रोफेसर, सोशियोलॉजी

श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

for the paper titled

वर्तमान परिदृश्य में जनजातीय अधिकार, नीतियाँ और सशक्तिकरण : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Isha Katiyare
Assistant Professor
(DR. CV. RAMAN UNIVERSITY KHANDWA) M.P

for the paper titled

A Study on Recruitment and Selection Process of ICICI Prudential Life Insurance Pvt. Ltd.

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

शैलेश कुमार

शोधार्थी- इतिहास-विभाग, महामाया राजकीय महाविद्यालय - श्रावस्ती

डॉ. दिलीप कुमार

शोध निर्देशक - सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय बाराखल मेहदावल

for the paper titled

भारतीय पुनर्जागरण में आर्य समाज की भूमिका

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Abhijay Saini
Research Scholar, Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur
Aditi Saini
Research Scholar, Hemchand Yadav Durg University

for the paper titled

WOMEN EMPOWERMENT IN INDIA: A PRESENT SCENARIO

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अंजू पांचाल

अकादमिक परामर्शदाता (इग्नू),

अदिति महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय)

for the paper titled

भाषा अधिगम में मौखिक संचार का महत्व

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

अनुपम कुमार यादव
सहायक प्रोफेसर - अर्थशास्त्र विभाग
गाँधी स्मारक त्रिवेणी पी.जी. कालेज, बरदह, आजमगढ़

for the paper titled

नई शिक्षा नीति - 2020 के आर्थिक प्रभाव

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अनीश कुमार

असिस्टेन्ट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)

गाँधी स्मारक त्रिवेणी पी.जी. कालेज बरदह, आजमगढ

for the paper titled

भारतीय समाज में महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य का समाजशास्त्री विश्लेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor
6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अजय कुमार सोनकर
असिस्टेन्ट प्रोफेसर - समाजशास्त्र विभाग
डी.ए.वी. पी.जी. कालेज, आजमगढ

for the paper titled

भारतीय ज्ञान-विज्ञान की परम्परा का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

July to September 2025, Vol. 12, Issue-3

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic